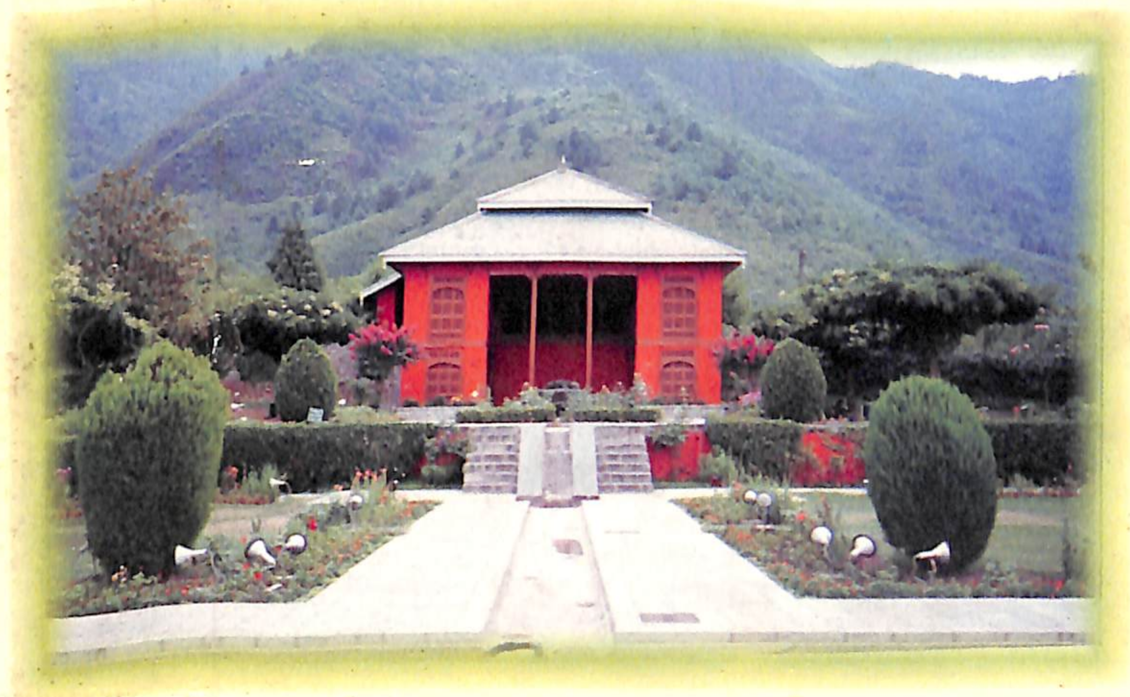
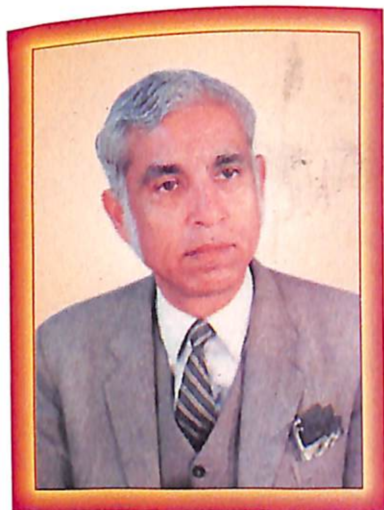
कश्मीरी पण्डितों के अनमोल रत्न



खण्ड - चतुर्थम्

डा0 बैकुण्ठ नाथ शर्गा



डॉ0 बैकुण्ठ नाथ शर्मा
जन्म 21 दिसम्बर 1938
लखनऊ

प्रारम्भिक शिक्षा–पारकर इन्टर कॉलेज मुरादाबाद, हाई स्कूल एवं इन्टरमीडिएट–राजकीय जुबिली इन्टर कॉलेज, लखनऊ, बी0एस–सी0–शिया डिग्री कालेज लखनऊ, एम0एस–सी0 तथा पी0एच–डी0, लखनऊ विश्वविद्यालय, प्रवक्ता रसायन विज्ञान–शिया डिग्री कॉलेज, लखनऊ 1967, रीडर रसायन विज्ञान–शिया पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज, लखनऊ 1994, लेखन तथा पत्रकारिता में रुचि–लगभग 200 लेख विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित, लगभग 2000 सम्पादक के नाम पत्र प्रकाशित, अंग्रेज़ी पत्रिकाओं "दि पिलग्रिम" तथा "दि एम्प्लाईज़ वॉयस" का सह सम्पादन, अनेक सामाजिक, साहित्यिक तथा सांस्कृतिक संस्थाओं में सक्रिय भागीदारी।



कश्मीरी पंडितों के अनमोल रत्न

खण्ड – चतुर्थम्

डॉ० बैकुण्ठनाथ शर्गा
एम०एस–सी०, पी–एच०डी०
भूतपूर्व रीडर, रसायन विज्ञान
शिया पोस्ट ग्रेजुएट कालेज,
लखनऊ – 226020



SHARGA PUBLICATIONS
Manoher Niwas
Kashmiri Mohalla
Lucknow - 226003

प्रकाशक :–
श्रीमती राजवन्ती शर्गा
मनोहर निवास
कश्मीरी मोहल्ला,
लखनऊ – 226 003

कम्पोजिंग :–
फेथ पब्लिशिंग सर्विसेज़
फोन – (0522) 242939, 269992
email - chintoob@yahoo.com

प्रथम संस्करण : सन् 2003

मूल्य – मात्र 150/- रुपये

मुद्रक :–
फेथ पब्लिशिंग सर्विसेज़
कश्मीरी मोहल्ला,
निकट शर्गा पार्क, लखनऊ – 3
फोन – (0522) 242939, 269992
email - chintoob@yahoo.com

धरोहर



लखनऊ नगर के रानी कटरा मुहल्ले में स्थित कश्मीरियों का ऐतिहासिक "बड़ा शिवाला" जिसका निर्माण सन् 1778 में पंडित जिन्द राम चौधरी तंखा ने करवाया था। इसमें समस्त उत्तर भारत का सबसे अनूठा और विचित्र शिवलिंग स्थापित है। इसके प्रांगण में कश्मीरी पंडितों की इष्ट देवी मां राज्ञा भगवती की आध्यात्मिक शक्ति से परिपूर्ण एक भव्य मूर्ति स्थापित है जो प्रचलित मान्यता के अनुसार अपने भक्तों के संकटों का निवारण करती है। जिसके कारण भक्तगण देश के विभिन्न आंचलों से बहुत बड़ी संख्या में अपने श्रद्धा सुमन अर्पित करने के लिये यहां आते हैं। यह धार्मिक स्थल अब संकटा देवी का मन्दिर कहलाता है।

ब्रूमः सारस्वत कुल भुवः किं निधेः कौतुकानं,
तस्यानेकाद् युतगुण कथा कीर्ण कर्णा मृतस्य।
यत्र स्त्रीणामापि किम परं जन्म भाषा व देवा,
प्रत्यवासं विलसतिवचः संस्कृतं प्राकृतं च।।

— बिल्हण

अर्थात कश्मीर के महाकवि बिल्हण के अनुसार नैसर्गिक सौंदर्य–सुषमा के अतिरिक्त कश्मीर प्रदेश की प्रसिद्धि अपनी प्रशस्त संस्कृत विद्वान परम्परा के कारण भी रही है। जो विविध वाङ्मय का एक प्रमुख उत्पत्ती का क्षेत्र रहा है। जहां के पुरुष ही नहीं अपितु घर–घर में स्त्रियां भी मातृभाषा के समान संस्कृत और प्राकृत में कुशलतापूर्वक सम्भाषण करती रहती हैं।

आभार प्रदर्शन

1. रानी गंगा अटल, जयपुर।
2. सुश्री आशा सिंह, लखनऊ।
3. श्रीमती सरोज दर, मन्दसौर।
4. श्रीमती रूप कौल, कोलकाता।
5. श्रीमती ब्रिजकिशोरी राज़दान, आगरा।
6. पंडित हरि कृष्ण वातल, आगरा।
7. पंडित प्रदीप कौल, नई दिल्ली।
8. श्रीमती संतोष बक्शी, लखनऊ।
9. पंडित अर्जुन नाथ काव, लखनऊ।
10. पंडित रतन नारायण तंखा, मुम्बई।
11. पंडित संजय मुट्टू, नई दिल्ली।
12. ले0 कर्नल रतन कुमार कौला, नई दिल्ली।
13. श्रीमती मोहिनी रैना, पंचकुला, हरियाणा।
14. पंडित प्रभाकर नागू, लखनऊ।
15. पंडित विनय शर्गा, लखनऊ।
16. श्रीमती दुर्गेश हुक्कू, लखनऊ।
17. श्रीमती अर्चना जुत्शी, लखनऊ।
18. पंडित नारायण स्वरूप मुन्शी, कानपुर।
19. श्रीमती मीरा बक्शी, लखनऊ।
20. श्री योगेश प्रवीन, लखनऊ।
21. प्रो0 चमन लाल सप्रू, दिल्ली।
22. मोहम्मद शमीमुल इस्लाम, लखनऊ।
23. श्रीमती रजनी शर्गा, लखनऊ।

24. पंडित कुलदीप सुखिया, लखनऊ।
25. श्रीमती रूप हाक्सर, गुणगांव, हरियाणा।
26. श्रीमती किरन तंख़ा, इलाहाबाद।
27. पंडित राहुल तंख़ा, लखनऊ।
28. पंडित मोहन स्वरूप भान, शिवपुरी, म0प्र0।
29. पंडित सोमनाथ सप्रू, बँगलोर।
30. सुश्री हिना अयाज़, लखनऊ।
31. स्वर्गीय पंडित प्रद्युमन कृष्ण तकरू, लखनऊ।
32. श्रीमती वीना चन्ना, नई दिल्ली।
33. श्रीमती क्षेमलता वखलू श्रीनगर, कश्मीर।
34. पंडित अरूण वखलू, पुणे।
35. न्यायमूर्ति जानकी नाथ भट्ट, जम्मू।
36. डॉ0 रतन लाल शान्त, जम्मू।
37. पंडित जीवन दर, इलाहाबाद।
38. श्रीमती लीला जुत्शी, नई दिल्ली।
39. पंडित अनिल कौल, नई दिल्ली।
40. स्वर्गीय पंडित मनहरन नाथ कौल, बहराईच।



आत्म बोध



यदि हम गम्भीरता पूर्वक अध्ययन करें तो हमें इस बात का आभास होगा कि वास्तव में हमारे देश का इतिहास वैदिक युग से लेकर आज तक सतत युद्धों, पलायन तथा विस्थापन का ही इतिहास रहा है। इन घटनाओं को क्रमवार लिपिबद्ध करने की परम्परा कश्मीर घाटी में प्राचीन समय से चली आ रही है। जिसका प्रमाण हमें छठी और सातवीं शताब्दी के मध्य लिखे गये संस्कृत के ग्रन्थ "नीलमत पुराण" में मिलता है जो 1453 श्लोकों में लिखा गया है। इस प्रसिद्ध ग्रन्थ में कश्मीर की सभ्यता और संस्कृति का विस्तार से उल्लेख किया गया है जिसमें कश्मीर के प्रथम चार राजाओं – गोनन्द, दामोदर, उसकी रानी यशोवती और उनके पुत्र गोनन्द द्वितीय का वर्णन है।

कल्हण पंडित ने इसी स्रोत को आधार मानते हुये अपनी राजतरंगिणी की रचना की जिसे कश्मीर के इतिहास की प्रथम प्रमाणिक पुस्तक माना जाता है पर कल्हण पंडित को इन प्रथम चार राजाओं के बाद के लगभग 35 राजाओं की कोई सूची किन्हीं कारणों से प्राप्त नहीं हो सकी जिसके कारण उनकी राजतरंगिणी में राजाओं की वंशावली की कड़ी बीच में टूट जाती है। इतिहास लेखन के बारे में कल्हण पंडित की अवधारणा थी कि उसे राग–द्वेष से सर्वथा मुक्त होकर सच्ची भावना के साथ लिखना चाहिये।

इतिहास लेखन की इसी परम्परा को आगे बढ़ाते हुए सुलतान जैनुलआबदीन (1420–1470) के शासन काल में जोनराज ने द्वितीय "राजतरंगिणी" की रचना की जिसमें कुल 23 कश्मीरी शासकों का वर्णन किया गया है जिनमें 13 हिन्दू, एक भौट्ट तथा 9 सुल्तान हैं। इसी क्रम में तीसरी और चौथी राजतरंगिणियों की रचना क्रमशः श्रीवर तथा शुक ने की जिससे हमें इस बात का स्पष्ट संकेत मिलता

है कि इतिहास लिखने की परम्परा एक प्रकार से कश्मीर की संस्कृति का एक अभिन्न अंग है और जो वहां के मूल निवासियों के मन में रची बसी हैं।

इसी क्रम में "कश्मीरी पंडितों के अनमोल रत्न" द्वारा कश्मीर घाटी से समय–समय पर प्रतिकूल परिस्थितियों में वहां से कश्मीरी पंडितों के पलायन के इतिहास को एक बिलकुल नये प्रयोग के रूप में समेटने का प्रयास किया गया है। जिसके अब तक तीन खण्ड प्रकाशित हो चुके हैं। उपयुक्त लिखित सूचना के अभाव में इस प्रकार का शोध कार्य करना वास्तव में बहुत कठिन है और वह भी उस परिस्थिति में जब किसी भी स्तर से बहुत अधिक सहयोग की अपेक्षा न हो अतः इस कार्य के लिये अनेक सूत्रों से वांछित सामग्री को एकत्र कर तथा उसका विधिवत विश्लेषण कर इस पुस्तक में समायोजित किया गया है ताकि किसी प्रकार के भ्रम की स्थिति न उत्पन्न हो। इस वृहद शोध कार्य को एक अनुष्ठान की भांति सम्पादित करने का भरसक प्रयास किया गया है। जिसमें लगभग 20 वर्ष का समय व्यतीत हुआ है। इसकी सार्थकता और उपयोगिता निश्चित रूप से सुधी पाठकों की चिंतन शक्ति पर निर्भर है। उनका आत्म मंथन ही इसका सही मूल्यांकन होगा।

मनोहर निवास
कश्मीरी मुहल्ला
लखनऊ – 226 003
दूरभाष – 267146
16 जुलाई, 2002

डॉ0 बैकुण्ठ नाथ शर्गा
भू0पू0 वरिष्ठ उपाध्यक्ष
अखिल भारतीय कश्मीरी समाज

विषय सूची

1. दीवान अमर नाथ कौल.......................... 10-21
2. सर गंगा राम कौला.......................... 22-32
3. पंडित ब्रिज नाथ शरगा.......................... 33-45
4. पंडित जगदीश नारायण भान.......................... 46-61
5. पंडित दया निधान गंजू.......................... 62-72
6. पंडित विजय कुमार रैना.......................... 73-85
7. अभिनेता कुलभूषण नाथ पंडित.......................... 86-102
8. पंडित रामेश्वर नाथ काव.......................... 103-116
9. कुंवर गौरी प्रसाद मुन्शी.......................... 117-127
10. राजा ज्ञान नाथ मदन.......................... 128-139
11. पंडित परमेश्वर नारायण हाक्सर.......................... 140-156
12. पंडित त्रिलोकी नाथ कौल.......................... 157-173
13. डॉ० आनन्द नारायण राज़दान.......................... 174-187
14. डॉ० मोती लाल धर.......................... 188-198
15. पंडित शिव प्रसाद चौधरी खटखटे बाबा.......................... 199-207
16. श्रीमती क्षेमलता वखलू.......................... 208-217
17. पंडित आनन्द नारायण तंख़ा.......................... 218-227
18. पंडित दीनानाथ कौल "नादिम".......................... 228-240
19. पंडित श्याम लाल शकधर.......................... 241-250
20. पंडित इक्बाल कृष्ण साहिबी "सहर".......................... 251-257
21. कश्मीरी पंडित और सामाजिक परिवर्तन.......................... 258-261
22. कश्मीरी पंडित और अपसंस्कृति.......................... 262-265

□□□

एक सुसंस्कृत तथा ओजस्वी व्यक्तित्व

दीवान अमर नाथ कौल



कश्मीरी पंडितों ने आदि काल से अपने जीवन में उत्तम शिक्षा प्राप्त करने को महत्व दिया जिसके कारण वह जहां भी गये उनको समाज में अपने को सम्मानपूर्वक स्थापित करने में बहुत अधिक कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ा और उन्होंने अपने ज्ञान के बल पर देश की विभिन्न रियासतों के दरबारों में तथा दिल्ली के मुग़ल दरबार में 18वीं और 19वीं शताब्दी में अच्छी नौकरियां प्राप्त की और अपनी कार्यकुशलता द्वारा व्यापक समाज में अपनी एक अलग विशेश पहचान बनाई। यह परम्परा इसी प्रकार लगभग 200 वर्ष तक अबोध गति से चलती रहीं और कश्मीरी पंडित समाज में समरसता के साथ–साथ संयुक्त परिवार के मूल भूत सिद्धांत का ढांचा बना रहा पर अंग्रेज़ी शासन काल और अंग्रेज़ी शिक्षा के प्रारम्भ होने के साथ साथ व्यक्ति की मानसिकता और उसके जीवन स्तर में परिवर्तन आना प्रारम्भ हुआ तथा उसकी पुरानी परम्पराऐं और मान्यताऐं धीरे–धीरे समाप्त होने लगी और संयुक्त परिवार इधर–उधर बिखरने लगे स्वाभाविक रूप से इस नयी सोंच ने नये संस्कारों को जन्म दिया और इस प्रकार एक नये समाज की संरचना की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई जिसमें स्वार्थ ने व्यक्ति की चिंतन शक्ति को सीमित कर उसे एक प्रकार से अपने ही समाज से काट कर पंगु बना दिया। जिसके कारण हमारे समाज की सामूहिक शक्ति की कल्पना केवल एक दिवास्वप्न बन कर रह गयी और

हम उस छोर पर पहुंच गये जहां हमारी सुध लेने वाला कोई नहीं क्योंकि अब हमारे भीतर न वह साहस है न वह शक्ति है और न अब हमारी वह संगठित संख्या है जिसके आधार पर हम वर्तमान वोट बैंक की राजनीति में कुछ कर पाने की स्थिति में हों अब हमारी लाचारी ही हमारा सबसे बड़ा शस्त्र है और दया भाव ही हमारा सबसे बड़ा धर्म है।

पर 18वीं और 19वीं शताब्दी में परिस्थितियां बिलकुल भिन्न थीं। उस समय परम्पराओं और मान्यताओं को बहुत अधिक महत्व दिया जाता था, और मनुष्य की महानता उसके आदर्शों तथा संस्कारों से आंकी जाती थीं। वहीं व्यक्ति महान माना जाता था जिसमें कुछ विशेष गुण हों और जिसका ओजस्वी व्यक्तित्व दूसरों को प्रेरणा देकर उनका सही मार्ग दर्शन करने की क्षमता रखता हो ऐसी ही विभूतियों की अग्रणी पंक्तियों में एक नाम दीवान अमर नाथ कौल का था जो न केवल अपने कार्यकलापों द्वारा आदर और सम्मान का पात्र बने अपितु आने वाली पीढ़ियों के लिये संस्कारों की एक अमूल्य निधि हमारे समाज को अर्पित कर गये।

दीवान अमर नाथ कौल के पूर्वज उनके परिजनों से प्राप्त की गयी सूचना के आधार पर मूल रूप से कश्मीरी घाटी के श्रीनगर जनपद के रैनावाड़ी मुहल्ले के निवासी थे। उनके पूर्वज राजा कृष्ण कौल मुग़ल सम्राट औरंगज़ेब के शासन काल में सन् 1680 के आस पास कश्मीर घाटी से निकल कर दिल्ली में आकर बाज़ार सीताराम मुहल्ले में बस गये थे। वह कालान्तर में दिल्ली के निकट किसी छोटे इलाके के राजा बना दिये गये थे। पर मुग़ल सम्राट ने उनको राजा की पदवी से कब अलंकृत किया और उनको कौन सा इलाक़ा शाही फ़रमान द्वारा एक जागीर के रूप में प्रदान किया गया इस सम्बन्ध में इस समय कोई प्रमाणिक लिखित सूचना उपलब्ध नहीं है केवल मटन के पण्डे और इलाहाबाद के कश्मीरी पण्डे की बही में इस प्रकार की सूचना अंकित है जिसको आधार माना जा सकता है।

राजा कृष्ण कौल के दो पुत्र थे गुलाब कौल और दुर्गा प्रसाद कौल। पंडित गुलाब कौल के पुत्र का नाम लाल जी कौल तथा पंडित दुर्गा प्रसाद

कौल के पुत्र का नाम ज्वाला प्रसाद कौल था। यह लोग कहां–कहां रहे और क्या–क्या करते रहे इसके बारे में किसी के पास अब कोई उपयुक्त जानकारी नहीं है। कालान्तर में पंडित ज्वाला प्रसाद कौल के पुत्र पंडित गंगा प्रसाद कौल अवध के नवाब शुजाउद्दौला के शासन काल में फ़ैज़ाबाद आ गये थे और सन् 1775 में नवाब शुजाउद्दौला की मृत्यु के पश्चात लखनऊ के कश्मीरी मोहल्ले में आकर बस गये।

पंडित गंगा प्रसाद कौल के दो पुत्र थे बिशेश्वर नाथ कौल तथा उर्दू के प्रसिद्ध शायर दया शंकर कौल "नसीम" (विस्तृत जानकारी के लिये कृपया खण्ड – द्वितीय देखें)।

पंडित विशेश्वर नाथ कौल लखनऊ से पलायन करके जबलपुर चले गये और वहां वकालत करने लगे। आपने वकालत में काफ़ी धन अर्जित किया और वहां मकान, दुकानें तथा बाग़ बनवाये और कालान्तर में एक बड़े ज़मीनदार बन गये। आपकी जबलपुर में ही मृत्यु हुई और उसके कुछ समय पश्चात आपके एक मात्र पुत्र गोविन्द प्रसाद की भी मृत्यु हो गयी। आपकी विधवा पत्नी जबलपुर से लखनऊ आकर अपने अन्य परिजनों के साथ रहना चाहती थीं पर बीच में वह गंगा स्नान करने के लिये कुछ दिन इलाहाबाद में ठहर गयी और लखनऊ आने से पूर्व वहीं उनकी संदिग्ध परिस्थितियों में मृत्यु हो गयी।

पंडित लाल जी कौल के पुत्र का नाम दीना नाथ था जिनके दो पुत्र थे अमरनाथ और गोपीनाथ। इनमें पंडित अमर नाथ कौल का जन्म विश्वस्त सूत्रों से प्राप्त की गयी जानकारी के अनुसार सन् 1816 में दिल्ली की बाज़ार सीताराम में हुआ था। चूंकि उस समय तक अंग्रेज़ी शिक्षा का कोई प्राविधान नहीं था अतः आपकी उर्दू तथा फ़ारसी भाषा की परम्परागत शिक्षा एक मकतब में सम्पन्न हुई और आप लगभग 18 वर्ष की आयु में अपने अनुज भ्राता पंडित गोपीनाथ कौल तथा अन्य परिजनों के साथ सन् 1834 में दिल्ली से लखनऊ चले आये जहां आपने कश्मीरी मुहल्ले में अपने आवास के लिये एक भव्य हवेली का निर्माण कराया जिसमें मर्दाना और ज़नानखाना दो अलग अलग भाग थे।

जिस समय पंडित अमर नाथ कौल लखनऊ के कश्मीरी मोहल्ले में आकर बसे वह नवाब नसीरउद्दीन हैदर (1827–1837) का शासन काल था जब अवध की हर शाम अपनी रंगीनियत और मौजमस्ती के लिये प्रसिद्ध हुआ करती थी। हर रईस तवायफ़ों के कोठे पर जाकर मुजरा सुनना अपनी शान समझता था और खुद नवाब अपनी ख़ास कनीज़ धनिया महरी के इश्क में मदहोश थे। जिसके कारण दरबार में तवायफ़ों का वर्चस्व हो गया था और शासन तंत्र की नीतियां उन्हीं के इशारों पर निर्धारित की जाती थीं जिसके कारण नगर के रईस और उमरा अपने फ़रज़न्दों को दरबार में अच्छी नौकरी प्राप्त करने के लिये इन तवायफ़ों के कोठों पर भेजने लगे। अंग्रेज़ों ने नवाब की इन हरकतों से तंग आकर उसको उसकी विश्वास पात्र धनिया महरी से विषपान करा दिया और इस प्रकार नवाब नसीरूद्दीन हैदर की सन् 1837 में मृत्यु हो गयी।

पंडित अमर नाथ कौल ऐसे असामान्य और असाधारण वातावरण में अधिकतर लखनऊ के बाहर नवाबों और रईसों के यहां नौकरी करते रहे। नवाबी शासन समाप्त होने के पश्चात आप अंग्रेज़ों के शासन काल में तहसीलदार नियुक्त हो गये थे और अपने सेवा काल में लखनऊ के बाहर विभिन्न जनपदों में नियुक्त रहे जहां आप अकेले रहते थे। आपके अनुज भ्राता पंडित गोपीनाथ कौल लखनऊ नगर पालिका के चुंगी विभाग में सुपरिन्टेन्डेन्ट हो गये थे और इस संयुक्त कौल परिवार के मुखिया थे। इस कारण मुहल्ले में यह ख़ानदान चुंगीवाले कौल के नाम से प्रसिद्ध था। पंडित गोपीनाथ कौल का विवाह रानी कटरा के निवासी पंडित बाबू सप्रू की बहन के साथ सम्पन्न हुआ था।

पंडित गोपी नाथ कौल एक मुश्की घोड़े पर जिसकी जिल्द चिकनी व चमकदार और कनौतियां तीखी पर बैठकर बड़ी शान और रूआब के साथ अपने कार्यालय जाते थे। उनका साईस साथ–साथ पैदल चलता था। एक बार एक शोहदे ने उन पर तंज़ करते हुए कहा कौल साहब अब लखनऊ में वह नवाबों वाली शान–शौकत कहां। उस वक़्त के रईस जब घर से बाहर निकले साथ में ख़िदमतगार बारीक मलमल का सफ़ेद

अचकन, चूड़ीदार चुस्त पायजामा सर पर दुपल्ली टोपी लगाये हमराहे रकाब, उसके हाथ में चांदी का खासदान। हमने मुस्कुरा कर सलाम किया कि वह ठहर गये, खिदमतगार को फौरन इशारा हुआ उसने ख़ासदान से महीन महीन नस के सफ़ेद मगही पान की छोटी–छोटी सख़्त गिलौरी जिनमें कत्था केवडे में बसाया हुआ और जो लाल तूल के कपड़े की तह में जो गुलाब के अर्क़ से तर है बड़े ही सलीके से सजी होतीं में से एक गिलौरी ख़ासदान से निकाली और चांदी की महीन सी चमची से असगर अली मुहम्मद अली के यहां का बर्की क़िवाम उस पर मुनासिब तरीके से लगाया और हमको पेश की। हमने उनको फिर सलाम करके अपने मुंह में रखा। क़रीब से जो बात चीत हुई तो मौसमी इत्र की महक से दिमाग़ मुअत्तर हो गया। अब आजकल के रईस हैं मोटर पर पास से निकल गये। सूरत भी न देखी बात करना तो दरकिनार। रास्ते की जितनी गर्द और ख़ाक थी वह आपके दामन को आलूदा कर चेहरे पर जम गई। और खुदा न खास्ता कहीं बरसात हुई तो सड़क की कीचड़ से आपकी अचकन में गुल और बूटे बन गये। अब वह सब करने की लोगों में फ़ुरसत कहां।

पंडित गोपी नाथ कौल की कोई अपनी सन्तान नहीं थी। आप काफ़ी मिलनसार व्यक्ति थे मुहल्ले का हर कश्मीरी पंडित आपका बहुत आदर करता था। और आपके मारफ़त अधिकतर वस्तुऐं ख़रीदी जाती थीं क्योंकि उससे उनके दामों में काफ़ी छूट मिल जाती थी आपने बिरादरी की बहुत सेवा की और सबके प्रिय बने रहे। आपकी मृत्यु पर उच्च अंग्रेज़ अधिकारी शोक प्रकट करने आपकी हवेली पर तशरीफ लाये जो पूरे मुहल्ले में कई दिनों तक चर्चा का विषय बना रहा।

पंडित अमर नाथ कौल अपनी सेवा काल के अन्तिम चरण में गोण्डा जनपद की उतरौली तहसील के तहसीलदार थे। वह जब भी अवकाश लेकर लखनऊ आते तो अपनी हवेली में एक मेहमान की तरह रहते और मुहल्ले के हर कश्मीरी पंडित के घर उसका कुशल क्षेम पूछने अवश्य जाते थे और इस प्रकार लखनऊ की बिरादरी से बराबर अपने मधुर सम्बन्ध बनाये रहे।

आप उर्दू, फारसी तथा अरबी भाषा के विद्वान थे और इन भाषाओं की पुस्तकें पढ़ने का आपको बेहद शौक़ था। आपके पास उर्दू, फ़ारसी तथा अरबी भाषा की हस्तलिखित पाण्डुलिपियों का ˙ग्क अमूल्य भण्डार था जिसको आपके वंशज किन्हीं कारणों से संरक्षित नहीं रख सके और वह मूल्यवान धरोहर नष्ट हो गयी। आपके अंग्रेज़ उच्च अधिकारियों के साथ बहुत ही मधुर सम्बन्ध थे जो आपकी ईमानदारी और कार्य प्रणाली से बहुत अधिक प्रभावित थे। आपको शेर–शायरी का भी बेहद शौक़ था पर आपने खुद अपने शेर कभी कलमबन्द नहीं किये और व्यंग्य में कहा करते थे कि यह अफ़ीमचियों का शग़ल है। आप तहसीलदारी के पद से 55 वर्ष की आयु पूर्ण हो जाने पर सन् 1871 में सेवा निवृत्त हुऐ।

चूंकि पंडित अमर नाथ कौल एक लम्बे समय तक तहसीलदार के पद पर कार्यरत रहे इस नाते उनको ज़मीनदारी और उससे सम्बन्धित नियमों और कानूनों का अच्छा ज्ञान हो गया था। उनकी इस विशेष योग्यता के कारण अंग्रेज़ों नें उनको अयोध्या में कोर्ट आफ़ वार्डस के कार्यालय में मैनेजर के पद पर नियुक्त कर दिया। और इस प्रकार आपका परिचय अयोध्या के तत्कालीन माहराजा लाल प्रताप सिंह से हो गया जिनका उस समय राज सिंहासन के लिये मुक़दमा चल रहा था क्योंकि वह महाराजा मान सिंह के दत्तक पुत्र थे जिनको कानून में राज सिंहासन का अधिकार उस समय तक नहीं था। जिसे माहराजा मान सिंह ने अपने प्रभाव से अवध ताल्लुकदारी ऐक्ट में संशोधन करा कर बदलवा दिया था। क्योंकि तब तक प्रान्त की कौंसिल का गठन नहीं हुआ था और सारे अधिकार चीफ़ कमिश्नर के पास केन्द्रित हुआ करते थे।

माहराजा लाल प्रताप सिंह जो स्वयं शांकलद्वीपी ब्राह्मण थे ने पंडित अमर नाथ कौल को उनके व्यक्तित्व व क्रार्यप्रणाली से प्रभावित होकर पहले अपना मुशीरकार तथा बाद में दीवान बना दिया। पंडित अमर नाथ कौल ने अयोध्या के दीवान के रूप में रियासत की जमकर लगभग 20 वर्ष सेवा की और काफ़ी सम्मान पाया माहराजा आपको अपने पिता के समान समझते थे और वैसा ही आदर सत्कार करते थे। आपने अयोध्या में अपने

निवास के लिये एक दुमंज़िले मकान का भी निर्माण कराया जिसमें आप बहुत शान के साथ रहते थे।

माहराजा लाल प्रताप सिंह में वह सभी गुण विद्यमान थे जो आचार्य चतुर सेन के अनुसार राजाओं और माहराजाओं में अधिकतर पाये जाते थे। उनकी अपनी पहली रानी से कोई सन्तान नहीं थी। इस परिस्थिति का लाभ उठाते हुए माह़राजा ने एक ब्राह्मण कन्या को अपने प्रेम जाल में फंसा कर तथा उससे ब्याह रचा कर उसको दूसरी रानी बना लिया। माहराजा की इस हरकत का दीवान अमर नाथ कौल ने घोर विरोध किया क्योंकि वह पहली रानी का बहुत आदर और सम्मान करते थे। इस बात को लेकर उनमें और माहराजा में गहरा मतभेद हो गया जिसके कारण दीवान अमर नाथ कौल ने रियासत में लगभग 20 वर्ष तक कार्य करने के पश्चात 80 वर्ष की आयु में अपना त्याग पत्र देकर सन् 1896 में अयोध्या से लखनऊ चले आये। आपके लखनऊ आने के पश्चात माहराजा की फ़िज़ूल खर्ची के कारण रियासत पर काफ़ी कर्ज़ा चढ़ गया और आपको अपनी पेंशन लेने में भी कठिनाई होने लगी। एक बार अपनी बकाया पेन्शन के भुगतान के लिये माहराजा को लिखे गये पत्र में आपने निम्नलिखित शेर भी फ़रमा दिया था।

गुल फ़ेके हैं औरों की तरफ़ बल्कि समर भी
ऐ ख़ानाऐ बर अन्दाज़े चमन कुछ तो इधर भी

लोगों ने इस शेर का अर्थ घर को तबाह करने वाला बता कर माहराजा को दीवान अमर नाथ कौल के विरूद्ध भड़का दिया पर कुछ समय पश्चात माहराजा की मृत्यु हो गयी और सारा इलाका कोर्ट ऑफ़ वार्डस के अधीन आ गया जिसके माध्यम से अंग्रेज़ों ने दीवान अमर नाथ कौल की कुल बकाया पेंशन अदा कराई।

दीवान अमर नाथ कौल गोरा वर्ण, मध्यम कद तथ गठे हुए शरीर वाले व्यक्ति थे। आपके गोल नूरानी चेहरे पर सदा गुलाब जैसी सुर्खी छायी रहती थी। आपने पूरी चुस्ती के साथ 80 वर्ष की आयु तक रियासत में सक्रिय रूप से कार्य किया। जब आप लगभग 60 वर्ष की आयु के थे

तो आपके साथी बिरादरी के सदस्य कहा करते थे अमर भाई अब तो आप ज़िन्दिगी के काफ़ी मज़े लूट चुके अब थोड़ा ध्यान पूजा–पाठ में भी लगाया करिये तो आपका उनको तुरन्त उत्तर होता था।

करें हम किसकी पूजा और चढ़ायें किसको चन्दन हम।
खुम हम, दैरहम, बुतख़ाना हम, शेखों बरहमन हम।।

आप हर दिल अज़ीज़ व्यक्ति थे और मुहल्ले में हर व्यक्ति से मिलते थे। आप हंसी मज़ाक पसन्द व्यक्ति थे और जिस महफ़िल में जाते वहां अपने एक दो चुटीले चुटकुले अवश्य सुनाते थे। आप नयी नयी गालियां तस्नीफ़ करते थे जिनको सुनकर क्रोध कम और हंसी अधिक आती थी। आप बला के हाज़िर जवाब थे। आप एक बार एक महफ़िल में गये जहां लखनऊ के कथक घराने के जन्मदाता कालका और बिन्दादीन माहराज का नृत्य चल रहा था वह अपनी भाव भंगिमा द्वारा निम्नलिखित फारसी शेर के अर्थ को नृत्य द्वारा दर्शकों को समझाने का प्रयास कर रहे थे।

रफ़तम मस्जिदे कि यह नीनय जमाले दोस्त।
दस्ते बुर्द कशीदो दुआरा वहाना साख्त।।

आपने एकाएक कटाक्ष करते हुए कहा उस्ताद तुमने हर बात को अपने भाव में दिखा दिया पर मस्जिद को छोड़ दिया। कालका और बिन्दादीन इस पर भनक गये और तंज़ करते हुए बोले माहराज वह हमने आपके लिये छोड़ दिया है दीवान अमर नाथ कौल ने तुरन्त अपने दोनों हाथों की मुट्ठी को बन्द कर उनमें से एक उंगली निकाल कर दोनों हाथों को ऊपर उठा दिया और तपाक से कहा यह मस्जिद की भाव भंगिमा हो गयी। उनकी इस अदा को देख कर कालका और बिन्दादीन माहराज के चेहरे फक़ हो गये।

दीवान अमर नाथ कौल को खाने का बेहद शौक़ था और आपकी पाचन शक्ति भी बड़े ग़ज़ब की थी। आपके अन्तिम समय तक मुंह में सब दांत और आंखों की रोशनी कायम थी। आपने कभी चश्मे का प्रयोग नहीं किया और जी–निब से बराबर खुशख़त लिखते रहे। आख़िर समय तक

आपकी शाम की गिज़ा कोफ़ते और पराठे होती थी। जब सर्दियों में हरा चना आता था तो आप वह थोक में ख़रीदते थे और दिनभर घर में एक नौकर चना छीलता रहता था। उसका इस्तेमाल हर रंग और हर रूप में होता था। ताज़ा छिला चना नमक के साथ सुबह नाश्ते में, फिर खाने में क़ीमे के साथ चना, बोटी के शोरबे में चना, पुलाव में चना, तरकारी में चना और हलवाई से उस चने के लड्डू और बर्फ़ी बनवाई जाती जो खाने में बिलकुल पिस्ते का मज़ा देती। दही का सेवन भी वह अच्छी मात्रा में करते थे। लखनऊ के मशहूर राम आसरे हलवाई के यहां के चने, बादाम, पिस्ते और इलायची के नुकल अलग अलग थैलियों में रहते थे जिनका स्वाद फुरसत से लिया जाता था। आप कभी कभी संजीदिगी में निम्नलिखित शेर गुनगुनाते थे।

मुंह पर रख दामने गुल रोयेंगे मुरग़ाने चमन।
बाग़ में ख़ाक उड़ायेगी सबा मेरे बाद।।

आप जब 86 वर्ष की आयु के थे तो आपको अचानक सांसारिक माया मोह से विरक्ति हो गयी और आप गेरूआ वस्त्र धारण करके सन्यासी हो गये और अपनी कश्मीरी मुहल्ले की हवेली का परित्याग करके अयोध्या चले गये और वहां सरयु नदी के तट पर रहने लगे। चूंकि आप वहां दीवान रह चुके थे और आपका ओजस्वी और प्रतिभावान व्यक्तित्व था। इस नाते बहुत बड़ी संख्या में भक्तगण आपके दर्शनों का लाभ लेने आते थे। लगभग 4 वर्ष पश्चात सन् 1906 में आपकी अधिक आयु और दुर्बल शरीर हो जाने के कारण आपके परिजन पुनः आपको अयोध्या से लखनऊ ले आये पर आप अपनी हवेली के एक कमरे में खामोश लेटे रहते और एक नौकर आपकी सेवा के लिये बराबर बैठा रहता। पास ही एक अंगीठी पर आपके लिये बराबर कुछ न कुछ पकता रहता। आप किसी से अधिक बातचीत नहीं करते थे। आपने अपने जीवन के शेष चार वर्ष कुछ इसी प्रकार एकान्त वातावरण में व्यतीत किये आपका 22 मई सन् 1910 को लगभग 94 वर्ष की आयु में डबल निमोनिया हो जाने के कारण स्वर्गवास हो गया।

दीवान अमर नाथ कौल के एक मात्र पुत्र पंडित बैज नाथ कौल थे जिनका जन्म सन् 1850 में हुआ था। आप मुहल्ले में नन्ना बाबू के नाम से प्रसिद्ध थे। बहुत अधिक लाड–प्यार के कारण आप अधिक पढ़ाई नहीं कर सके और मैट्रिक की परीक्षा में अनुत्तीर्ण होकर आपने अपनी शिक्षा को तिलांजलि दे दी। आपको पतंगबाज़ी और चौसर खेलने का बहुत शौक था। मौसीकी का भी आपको काफ़ी शौक था। सितार बजाने में आप उस्ताद थे। किमार बाज़ी, गांजीफ़ा, ताश और घुड़ दौड़ आपके खास शग़ल थे। घुड़ दौड़ के सिलसिले में आपका एक दफ़्तर रहता था। जिसमें हर घोड़े का तफ़सील से ज़िक्र रहता था कि वह कहां कहां दौड़ा है किसके मुकाबले में दौड़ा है और किस वज़न की दौड़ है? घर के काम में आपने कभी कोई जिम्मेदारी नहीं ली। जब तक आपके पिता और चाचा जीवित रहे आपने जम के मौज मस्ती करी और बेफ़िक्र होकर अपना जीवन बिताया। आपके पतंगबाज़ी के कार्यक्रमों में नवाब शब्बन साहब और बैरिस्टर मैनुअल साहब भी आपके पिता से जान पहचान के कारण भाग लेते थे। दिन भर खाने पीने और चुहल बाज़ी का माहौल रहता था। आपके पिता के सम्बन्धों के कारण लखनऊ के तत्कालीन ज़िला जज कौलिन्स ने आपको मुन्सिफ़ के मुन्सरिम के पद पर नियुक्त कर दिया था।

पंडित बैज नाथ कौल का विवाह कश्मीरी मुहल्ले के निवासी पंडित बिशन नारायण कौल बक्शी की सुपुत्री कामेश्वरी के साथ सम्पन्न हुआ था जो उस समय एक बहुत बड़े ज़मीनदार थे और मुहल्ले के रईस माने जाते थे। पंडित बैज नाथ कौल के पांच पुत्र त्रिलोकी नाथ, पशुपति नाथ, राजेश्वर नाथ, कामेश्वर नाथ तथा रामेश्वर नाथ और दो पुत्रियां लाडो और सरस्वती थीं। जिनमें लाडो रानी का विवाह पंडित कृष्ण मुरारी हुक्कू के साथ सम्पन्न हुआ था जो रेलवे में डिस्ट्रिक सुपरिन्टेन्डेन्ट थे। सरस्वती का विवाह चौपटियां के निवासी पंडित श्याम प्रसाद तैमनी के साथ सम्पन्न हुआ था। जो पंडित गंगा प्रसाद तैमनी के पुत्र थे।

पंडित बैजनाथ कौल ने मुन्सरिम के रूप में बहुत ही ईमानदारी के साथ कार्य किया आपके स्वभाव और मृदुभाषा से सारे अधिकारी प्रसन्न

रहते थे। आपके धीरे–धीरे नगर के वरिष्ठ वकीलों से घनिष्ठ सम्बन्ध हो गये आप रबड़ चढ़े हुए पहियों की फिटन पर शान से बैठ कर कचहरी जाते थे। आप कुछ समय पश्चात मुख्य लिपिक तथा फिर ज़िला जज के मुन्सरिम बना दिये गये। राजा परमानन्द और सर गिरजा शंकर बाजपेई के पिता पंडित शीतला प्रसाद बाजपेई आपके घनिष्ठ मित्रों में थे। तत्कालीन ज़िला जज पंड़ित त्रिभुवन नाथ शिवपुरी जो आप ही के मुहल्ले में रहते थे आपके कार्य से बहुत अधिक प्रभावित थे।

जब लखनऊ के सबसे बड़े रईस नवाब सुलेमान कद्र की मृत्यु हुई तो उनके कई वारिस उत्पन्न हो गये क्योंकि उनकी कई निकाही और कई मुताही बेगमें थीं और यह बता पाना बहुत ही कठिन था कि उनका असली वारिस कौन है और किस वारिस का उनकी जायदाद में कितना हक़ बनता है। उन नवाब साहब का एक बहुत बड़ा मुहाफिज़खाना था। जिसमें तमाम काग़ज़ात और दस्तावेज़ भरे पड़े थे। इस ज़िम्मेदार काम को और उन दस्तावेज़ों का विश्लेषण करने के लिये लखनऊ के जिला जज ने पंडित बैजनाथ कौल को नियुक्त किया। रोज शाम को यह मुहाफिज़खाना कचहरी के बाद दो घण्टा खोला जाता था और दोनों तरफ़ के वकीलों की मौजूदिगी में तमाम कागज़ातों की फेहरिस्त तैयार की जाती थी। यह इतना बड़ा जायदाद का मुकदमा था जो लगभग 16 वर्ष चला और जिसके लिये प्रति दिन पंडित बैज नाथ कौल को 20 रूपये भत्ते के रूप में वेतन के अतिरिक्त मिलता था इसी बीच ससेंडी रियासत के ताल्लुक़दार राजा चन्द्रशेखर का इलाका कोर्ट ऑफ़ वार्डस में चला गया और पंडित बैजनाथ कौल को उनकी कार्यकुशलता को देखते हुए जिला जज पंडित त्रिभुवन नाथ शिवपुरी ने उनको राजा साहब का अभिभावक नियुक्त कर दिया और आप ससेंडी रियासत का कार्य देखने लगे राजा ससेंडी सनकी मिज़ाज के थे और एक ब्राह्मण होने के नाते झूठा–सुच्चा और छुआ–छूत बहुत करते थे वह अपने जीवन के उत्तरार्ध में प्रयाग राज जाकर गंगा नदी के तट पर रहने लगे वहीं उनके साथ पंडित बैज नाथ कौल एक मकान लेकर रहते थे। प्रयाग में ही पंडित बैज नाथ कौल का सरसाम हो जाने के

कारण सन् 1914 में लगभग 64 वर्ष की आयु में निधन हो गया और वहीं उनका दाह संस्कार कर दिया गया।

जब पंडित विशन नारायण दर सन् 1887 में लन्दन से बैरिस्टर बन कर लखनऊ के कश्मीरी मोहल्ले में लौटे तो बिरादरी के सदस्यों ने गंजू वालों के शादीखाने में एक ऐतिहासिक बैठक कर उनको बिरादरी से बहिष्कृत कर दिया और जिसके क़ारण बिरादरी में धर्म सभा और बिशन सभा नाम से दो अलग–अलग समूह बने। उस अवसर पर दीवान अमर नाथ कौल ने पंडित त्रिभुवन नाथ सप्रू "हिज्र" और पंडित रतन नाथ दर "सरशार" के साथ पंडित बिशन नारायण दर का पक्ष लिया जो इस बात को साफ़ दर्शाता हैं कि वह कितने बड़े उस समय द्रष्टा थे और उनमें परिस्थितियों का आंकलन करने की कितनी क्षमता थी। ऐसे कर्मठ व्यक्ति ही भविष्य के मापदण्ड स्थापित कर पाने में सफ़ल हो पाते हैं और समाज को एक नयी दिशा देते हैं। जब कभी भी मैं अपने रिक्त पलों में अतीत की वर्तमान से तुलना करता हूं तो अनायास ही जावेद अख़्तर के निम्नलिखित शब्द बड़े ही अर्थपूर्ण प्रतीत होने लगते हैं।

आज क्या कहूं कौन मानेगा,
आज क्या देखा क्या किया मैंने।
आज फूल को गाते हुए देखा है,
आज चांद को छू लिया मैंने।।



भारत के प्रथम कश्मीरी एकाउंटेन्ट जनरल

सर गंगा राम कौला



भारत में अंग्रेज़ों के शासन काल (1858– 1947) में अनेक कश्मीरी पंडितों ने प्रशासन के उच्च पदों को सुशोभित किया क्योंकि अंग्रेजों नें उनकी निष्ठा, कार्यकुशलता तथा निष्पक्ष व्यवहार को तत्कालीन समाज के अन्य वर्गों की अपेक्षा अधिक वरीयता दी और उनके कार्य करने की क्षमता को मुख्यतः आधार मानकर उनको प्रशासन के अनेक महत्वपूर्ण पदों पर नियुक्त किया। उस समय तक अधिकतर नियुक्तियाँ व्यक्ति की योग्यता को आधार मानकर करी जाती थीं और नौकरी पानें के लियें सिफ़ारिश और घूसख़ोरी का अधिक चलन नहीं था। कश्मीरी पंडितों ने इन प्रशासन के महत्पूर्ण पदों पर सदैव बड़ी ही ईमानदारी और निष्ठापूर्वक कार्य किया जिसके कारण वह व्यापक समाज में अपने लिये सम्मानपूर्ण स्थान बनाने में सफल हो सके और उन्होनें जनता का विश्वास जीता। वह आद्रर और सम्मान के पात्र बने और समाज के हर वर्ग ने उनकी भूरि भूरि प्रशंसा की। इन प्रशासनिक अधिकारियों ने बिना किसी भेद भाव के हर व्यक्ति से एक समान व्यवहार किया और पूरी निष्ठा के साथ निर्धारित नियमों का पालन किया। उन्होनें कभी भी किसी भी परिस्थिति में अपने आदर्शों और सिद्धान्तों के साथ किसी भी प्रकार का समझौता नहीं किया और अपने निर्णयों में सदैव सत्यता का पक्ष लिया। उनका अपने जीवन में मुख्य ध्येय अपने आपको अपने कार्य के बल पर प्रतिष्ठित करना रहा

न कि किसी पर अश्रित रह कर या फिर किसी की दया का पात्र बन कर। उन्होनें अपने आत्म सम्मान को अधिक महत्वपूर्ण समझा और उसी के अनुसार अपने जीवन की दिशा निर्धारित की। इसी प्रकार का एक स्वाभिमानी और आडम्बररहित व्यक्तित्व सर गंगा राम कौला का था जो अपनी योग्यता और क्षमता के बल पर भारत के प्रथम कश्मीरी एकाऊन्टेंट जनरल बनें और जिन्होंने अपने प्रयासों द्वारा बिरादरी के अनेक नवयुवकों को उचित दिशा निर्देश देकर प्रशासन के विभिन्न पदों पर नियुक्त कराया और उनको जीवन में कुछ बनने की प्रेरणा दी ताकि वह समाज में अपने लिये उचित स्थान प्राप्त करने में सफल हो सकें।

सर गंगा राम कौला के परिजनों से प्राप्त की गयी जानकारी के अनुसार आपके पूर्वज कश्मीर घाटी के श्रीनगर जनपद के निवासी थे जो कदाचित पंजाब राज में सिख शासन के अन्तिम चरण में लाहौर आकर उस नगर के वज़ीर खॉ चौक क्षेत्र में बस गये थे। आपके पिता का नाम पंडित टीका राम कौला था। पंडित टीका राम कौला क्या करते थे इस बारे में कोई ठोस लिखित प्रमाण उपलब्ध नहीं है।

सन् 1849 में अंग्रेज़ों नें सिख सेना को गुजरात के युद्ध में रावी नदी के तट पर परास्त कर पंजाब के अन्तिम सिख शासक महाराजा दिलीप सिंह से विश्व प्रसिद्ध कोहिनूर हीरा लेकर उसे बन्दी बना कर इंग्लैण्ड भेज दिया और वहाँ बरमिंघम नगर में उसको नज़रबन्द कर दिया तथा सम्पूर्ण पंजाब राज को ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अधिकार क्षेत्र में ले लिया और उस पर अपना शासन तंत्र स्थापित कर दिया। इस तीव्र गति से बदलते हुए घटना क्रम और बढ़ते हुए अधिकार क्षेत्र में अपने शासन को सुचारू रूप से चलाने के लिये अंग्रेज़ों को कुशल भारतीय अधिकारियों की आवश्यकता अनुभव हुई जिनको अंग्रेज़ी भाषा का ज्ञान हो और जो उनकी नीतियों को उचित रूप से कियान्वयन करने की क्षमता रखतें हों। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये अंग्रेज़ों ने सन् 1862 में लाहौर में गवर्नमेंट कालेज की स्थापना की जहां अंग्रेज़ प्रोफेसर भारतीय नवयुवकों को अंग्रेज़ी भाषा की आदर्श शिक्षा देकर उनको प्रशासन के विभिन्न पदों पर

कार्य करने के योग्य बना सकें जो सरलतापूर्वक उनकी नीतियों को जनता में प्रसारित कर उनका पालन करवाने में सफल सिद्ध हो सकें। यह एक प्रकार से भारतीय नवयुवकों की मानसिकता को अपने अनुरूप ढालने का बहु.त ही सूझ बूझ वाला प्रयास था। जिसके बल पर अंग्रेज़ अगले 100 वर्षों तक बिना किसी कठिनाई के भारत पर बहुत ही सरलतापूर्वक शासन करते रहे। और समाज के विभिन्न वर्गों को इसी नीति के तहत आपस में सफलतापूर्वक लड़ाते रहे तथा स्वयं मौज मस्ती करते रहे। उन्होंने समाज मे इन अंग्रेज़ी परस्त ब्यक्तियों का एक बिलकुल नया वर्ग खड़ा कर दिया जो मानसिक रूप से उनका दास था। और जो व्यापक समाज में 'ब्राऊन साहब' या 'टोडी बच्चा' कहलाता था। यह वर्ग अपने को भारतीय कम और अंग्रेज़ अधिक समझता था और अन्य भारतीयों को बड़ी ही हीन द्रष्टि से देखता था तथा उनके रहन सहन के तरीकों की कड़े शब्दों में निन्दा करता था और उनके आचरण और व्यवहार का मखौल बनाता था। वह एक दूसरे संसार में अपना जीवन व्यतीत करता था और हर समय इंग्लैण्ड के स्वप्न देखता था।

इस प्रकार के बदलतें हुए वातावरण और परिस्थितियों में सर गंगा राम कौला का जन्म सन् 1878 में पुराने लाहौर नगर के वज़ीर खां चौक क्षेत्र में हुआ था। आपकी प्रारम्भिक उर्दू तथा फारसी भाषा की शिक्षा एक निकट के मकतब में उस समय की परम्परा के अनुसार सम्पन्न हुई। आपने फिर एक विद्वान पंडित से संस्कृत भाषा सीखी और उसमें दक्षता प्राप्त की। कश्मीरी भाषा का भी आपको ज्ञान था तथा उसको बोलने और लिखने में आपको महारत हासिल थी। आपने उच्च शिक्षा के लिये फिर लाहौर के गवर्नमेंण्ट कालेज में प्रवेश लिया और स्नातक की परीक्षा सन् 1898 में पंजाब विश्वविद्यालय से उत्तीर्ण की। आपको गणित जैसे विषय में बहुत अधिक रुचि थी तथा बड़ी–बड़ी संख्या के गुणा–भाग आप एक कम्प्यूटर की भांति कुछ ही मिनट में मौखिक रूप से बड़ी ही सरलतापूर्वक कर लेते थे। आपकी स्मरण शक्ति बहुत ही तीक्ष्ण थी। जिसके कारण आपको घटनाओं का वर्णन करने में कोई कठिनाई नहीं होती थी और

जिससे आपके पास स्मृतियों का एक विशाल भण्डार हो गया था।

सर गंगा राम कौला ने अपनी शिक्षा समाप्त हो जाने के पश्चात 90 रूपये माहवार के वेतन पर पोस्ट आफिस में अतिरिक्त सहायक इंन्सपेक्टर के रूप में अपनी नौकरी प्रारम्भ की पर चुंकि आपके भीतर एक बड़ा आदमी बनने की प्रबल इच्छा शक्ति थी अतः आपने अध्ययन करने के काम को जारी रखा और विभिन्न विषयों क़ी पुस्तकें अपना ज्ञान वर्धन करने के लिये पढ़ते रहे। इसी बीच आप किसी के सुझाव पर आई. सी. एस. की परीक्षा में बैठने के लिये लन्दन चले गये पर आप उस परीक्षा में किन्ही कारणों से सफल नहीं हो पाये।

आप फिर और अधिक तैयारी करके पुनः इण्डियन आडिट और एकाऊन्टस की परीक्षा में बैठे और आपने प्रथम स्थान पाकर इस परीक्षा को उत्तीर्ण किया चुंकि आपको गणित से विशेष प्रेम था इस नाते आपको अंग्रेज़ों ने भारत की तत्कालीन आडिट और एकाउंन्टस की सेवा में ले लिया और सन् 1898 में आपकी नियुक्ति डिप्टी एक्ज़ामिनर आफ़ एकाऊंन्टस के पद पर उत्तर पश्चिम रेलवे में कर दी जिसका मुख्यालय उस समय लाहौर हुआ करता था। आपने अपनी कार्य करने की क्षमता से अपने उच्च अंग्रेज़ अधिकारियों को बहुत अधिक प्रभावित और प्रसन्न किया जिसके कारण जीवन में आपको फिर पीछे मुड़कर नहीं देखना पड़ा और आप निरन्तर बिना किसी बाधा के प्रगति के पथ पर अग्रसर होते चले गये।

ब्रिटिश शासन काल में बर्मा (म्यामार) भी भारत का एक अंग हुआ करता था और अनेक भारतीय उच्च अधिकारियों की नियुक्ति रंगून (यंगून) में भी होती थी जहाँ उनको अंग्रेज़ अनुभव प्राप्त करनें के लिये भेजते थे। सर गंगा राम कौला ने भी रंगून में कुछ वर्ष कार्य किया और रेलवे प्रशासन में आय व्यय का ब्योरा रखने की व्यवस्था की एक प्रकार से नींव डाली क्योंकि भारत में रेल की सेवाओं का वह प्रारम्भिक दौर था और भारत में प्रथम रेलगाड़ी 16 अप्रैल सन् 1853 को एक सीमित दूरी तक बोरीबन्दर (बम्बई) से थाणे के मध्य एक प्रयोग के रूप में चलाई गई थी।

भारत में रेल चलाने का विचार सर्वप्रथम सन् 1843 में लार्ड डलहौज़ी के मस्तिष्क में आया था। इसका मुख्य उद्देश्य बम्बई, कलकत्ता तथा मद्रास के बन्दरगाहों से देश के अन्तिरिक भागों के मध्य सुद्रढ़ व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित करना था ताकि उद्योग की वस्तुऐं के आवागमन में सुविधा उपलब्ध करायी जा सके।

इसके लगभग 14 वर्ष पश्चात 23 अप्रैल सन् 1867 को लखनऊ और कानपुर के गंगाघाट के मध्य रेल चलाई गयी जिसका उस समय मुख्य उद्देश्य सन् 1857 के ग़दर के पश्चात कानपुर छावनी से तुरन्त अग्रेंज़ों की फौजों को लखनऊ पहुंचाना था जो उस समय उनकी सेना का मुख्यालय हुआ करता था। इस रेल का संचालन इण्डियन ब्रांच रेलवे कम्पनी ने किया था जिसकी स्थापना सन् 1862 में इग्लैण्ड मे हुई थी। बाद में इस कम्पनी का नाम अवध रूहेलखण्ड रेलवे हो गया और उस समय छोटी लाईन की रेलों का संचालन अवध–तिरहुत रेलवे द्वारा किया जाता था। लखनऊ से गोरखपुर, मुज़फ़्फ़रपुर होते हुए गुवाहाटी तक रेलों का संचालन किया जाता था। देश में रेल की सेवाओं का बहुत अधिक विस्तार नहीं हुआ था और रेलें अधिकतर विभिन्न निजीकम्पनियों के द्वारा चलाई जाती थीं।

अंग्रेज़ो ने सर गंगा राम कौला की अभूतपूर्व सेवाओं से प्रसन्न होकर आपको भारत का एकाउंटेंन्ट जनरल बना दिया। आप प्रथम भारतीय थे जिसनें इस गरिमामय पद को सुशोभित किया। तत्तकालीन वाईसराय नें अपसे प्रश्न किया कि आप इस पद के लिये कितना वेतन लेना चाहेंगे। आपका उत्तर था केवल 7777/– रूपये 7 आनें मात्र जो वाईसराय नें तुरन्त स्वीकार कर लिया । आप प्रथम भारतीय अधिकारी थे जो उस समय अन्य भारतीय अधिकारियों की तुलना में सबसे अधिक वेतन पाते थे। आप छः माह दिल्ली में और छः माह शिमला में रहते थे जो ब्रिटिश शासन काल में देश की ग्रीष्म कालीन राजधानी हुआ करता था। सर गंगा राम कौला ने अपनें सेवा काल में सरकार के विभिन्न विभागों में आय व्यय का ब्योरा रखनें की परम्परा की एक प्रकार से नींव

डाली और उसको चुस्त दुरस्त करके तर्क संगत बनाया क्योंकि तब तक इस प्रकार की प्रथा पूर्ण रूप से विकसित नही हों पायी थी और अनेक विभागों के गठन की प्रकिया धीरे धीरे अपना स्वरूप ग्रहण कर रही थी। यह पूरे देश में प्रशासन के क्षेत्र को फैलाने का दौर था ताकि सम्पूर्ण देश को एक सूत्र में पिरोया जा सके। देश मे अनेक रियासतें थी जिनके अपने नियम और कानून थे और विभिन्न प्रान्तों के अपने क्षेत्र में कुछ अलग विशेष नियम और कानून हुआ करते थे। यही एक प्रमुख कारण था कि राष्ट्रीय स्तर पर राजस्व वसूली करने के सीमित साधन थे और उनका भी विभिन्न प्रान्तों के सम्बन्धों में उचित ब्योरा रखने की प्रणाली और व्यवस्था ठीक से विकसित नही हो पायी थी कि किस प्रांन्त या क्षेत्र से किस मद में कितना सरकारी राजस्व वसूला गया और वह किस किस मद में कहाँ कहाँ व्यय किया गया। देश भर का यह पूरा ढांचा उस समय के उपलब्ध सीमित साधनों में पूर्ण व्यवस्थित रूप से तैयार करना वास्तव में कोई सरल कार्य नहीं था। सर गंगा राम कौला नें अथक परिश्रम करके इस पूरी प्रणाली के लिये नियम और कानून बनायें जिसको अब फाईनेंशियल हैण्ड बुक के नाम सें जाना जाता है। इस सराहनीय कार्य के लियें सन् 1930 में भारत के तत्तकालीन वाईसराय तथा गर्वनर जनरल लार्ड विलिंगडन ने आपको सी0आई0ई0 की पदवी से अलंकृत किया

सर गंगा राम कौला एक लम्बे सेवा काल के पश्चात सन् 1933 में 55 वर्ष की आयु हो जानें पर केन्द्रीय आबकारी विभाग के वित्त नियँत्रक के पद से सेवा निवृत्त हुऐं। आपकी देश के प्रति की गयी विशेष सेवाओं के लिये सन् 1934 में ब्रिटेन के सम्राट जार्ज पंचम नें आपको नाईट हुड के अंलकरण से विभूषित किया।

सर गंगा राम कौला को सेवा निवृत्त हो जानें के पश्चात भारत के तत्तकालीन वाईसराय लार्ड विलिंग्डन ने दिल्ली के निकट की रियासत जिंद की कानून व्यवस्था को सुधारने के लियें 6 माह के लिये भेजा। जिंद रियासत के महाराजा आपके कार्य करने के तरीके से इतनें अधिक प्रभावित हुए कि उन्होंने आपको सन् 1936 में अपना प्रधानमंत्री नियुक्त

कर दिया। आपने जिंद रियासत के प्रधानमंत्री के रूप मे वहाँ की राजस्व वसूलने की प्रणाली को तर्क संगत और व्यावहार पूर्ण बनाया तथा रियासत की फ़िजूल खर्ची पर कस कर अंकुश लगाया आपने रियासत के वित्तीय घाटे की वसूली द्वारा भरपाई की और वहाँ की आर्थिक स्थिति को सुद्रढ़ किया। आपकी कार्यकुशलता से प्रभावित और प्रसन्न होकर महाराजा ने आपको विभिन्न पदकों तथा अलंकरणों सें सम्मानित किया और कई गाँव जागीर के रूप मे प्रदान कियें आप सन् 1947 में PEPSU के गठन के पश्चात जिंद रियासत से पुनः दिल्ली वापस आ गये।

सुधी पाठकों के लिये यहां यह बताना आवश्यक है कि भारत में नयी राजस्व प्रणाली का शुभारम्भ सन् 1800 में लार्ड चार्ल्स मारक्युईस कार्नवालिस ने किया था जो उस समय ईस्ट इण्डिया कम्पनी के गर्वनर जनरल थे। आप बाद में बंगाल में ज़मीनदारी के अधिकारों को सदा के लिये तय करने के लिये दिये गये अपने निर्णय के लिये प्रसिद्ध हुए। जिसमें ज़मीन हर वर्ष सबसे अधिक बोली लगाने वाले व्यक्ति के स्थान पर ज़मीनदारों को दी जाने लगी आप अपने इस निर्णय के कारण सारे ब्रिटिश गर्वनर जनरलों में सबसे अधिक प्रसिद्ध हुए। आपकी मृत्यु के पश्चात गाज़ीपुर के गोरा बाज़ार क्षेत्र में आपका भव्य स्मारक बनाया गया जहां आपके पार्थिव शरीर को दफनाया गया था।

सर गंगा राम कौला का विवाह सन् 1898 में सुश्री चांद रानी वांचू के साथ लाहौर में सम्पन्न हुआ था जो लाहौर के निवासी पंडित लालता प्रसाद वांचू की पुत्री तथा पंडित दुर्गा प्रसाद वांचू की पौत्री थीं। सुश्री चांद रानी वांचू अपने विवाह के पश्चात लेडी भाग्यभरी कौला के नाम से प्रसिद्ध हुईं। इस दम्पत्ति के एक पुत्र कुंवर नारायण कौला तथा दो पुत्रियां महारानी और मोहिनी थीं। जिनमें महारानी का विवाह पंजाब के प्रसिद्ध हिन्दू नेता राजा नरेन्द्र नाथ रैना छिजंबल्ली के सुपुत्र दीवान आनन्द कुमार के साथ सम्पन्न हुआ था। दीवान आनन्द कुमार का जन्म सन् 1895 में लाहौर में हुआ था। आप लाहौर से उच्च शिक्षा के लिए लन्दन चले गये थे जहां के केम्ब्रिज विश्वविद्यालय से परास्नातक होने के पश्चात आप

लाहौर के दयाल सिंह कालेज में रसायन विज्ञान के प्रोफेसर हो गये थे और बाद में पंजाब विश्वविद्यालय के कुलपति बना दिये गये थे। सर गंगा राम कौला की दूसरी पुत्री मोहिनी का विवाह पंडित ज्ञान नाथ वातल के साथ सम्पन्न हुआ था जो भरतपुर रियासत के दीवान नरेन्द्रनाथ वातल के सुपुत्र थे।

सर गंगा राम कौला के पुत्र कुंवर नारायण कौला का जन्म सन् 1905 के आसपास रंगून में हुआ था जहां उस समय सर गंगा राम कौला नियुक्त थे। कुंवर नारायण कौला की शिक्षा लाहौर के राजकीय कालेज में सम्पन्न हुई उसके पश्चात आपको आपके पिता ने डाक्टरी की पढ़ायी करने के उद्देश्य से सन् 1924 में लन्दन भेजा पर वहां आप अपना ध्यान शिक्षा पर केन्द्रित करने के स्थान पर अपनी एक सहपाठी अंग्रेज़ छात्रा के प्रेम जाल में फंस गये और बिना डाक्टर बनें सन् 1926 में उससे विवाह रचा कर भारत वापस आ गये। आपके इस व्यवहार से सर गंगा राम कौला और लेडी भाग्यभरी कौला बहुत ही क्रोधित हुए और आपकी मां ने जो एक धर्मनिष्ठ महिला थीं और अपनी परम्पराओं पर पूर्ण निष्ठा रखतीं थी उस विदेशी युवती को अपनी बहू मानने से साफ़ इंकार कर दिया और सर गंगा राम कौला ने जो अपने आदर्शों और सिद्धातों के बड़े पक्के थे इस नव दम्पत्ति को अन्यंत्र रहने की सलाह दी क्योंकि यह विवाह उनकी सहमति के अनुरूप नहीं किया गया था। कुंवर नारायण कौला को कदाचित अपने माता पिता से इस प्रकार के कठोर व्यवहार की अपेक्षा नहीं थी क्योंकि वह समझ रहे थे कि समय के साथ सब कुछ ठीक हो जायेगा पर प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण उनको अन्य स्थान पर शरण लेनी पड़ी और अपने जीवकोपार्जन के साधनों को जुटाने के लिये दिल्ली में कुछ व्यवसाय करने को बाध्य होना पड़ा आपको अपनी अंग्रेज़ पत्नी से तीन पुत्र रतन कुमार, प्रताप कुमार, और सुरेन्द्र कुनार तथा एक पुत्री गंगारानी उत्पन्न हुईं।

पंडित कुंवर नारायण कौला के सबसे बड़े पुत्र रतन कुमार कौला अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात भारतीय थल सेना में ले. कर्नल के

पद से सेवा निवृत हुए। आपने कम्बोडिया देश की एक राजकुमारी के साथ सन् 1955 में विवाह किया जिस देश को भारत के एक कम्बोज ब्राह्मण ने लगभग 2000 वर्ष पूर्व बसाया था। पंडित कुंवर नारायण कौला के दूसरे पुत्र प्रताप कुमार कौला का विवाह कश्मीर के कर्नल पी. एन. काक की सुपुत्री मोहिनी काक के साथ सम्पन्न हुआ है। पंडित कुंवर नारायण कौला के तीसरे पुत्र सुरेन्द्र कुमार कौला ने अपने जीवन काल में यद्यपि तीन विवाह किये पर उनमें आपको बहुत अधिक सफलता नहीं प्राप्त हो सकी। आपकी इसी मानसिक तनाव के कारण युवावस्था में सन् 1999 में मृत्यु हो गई।

पंडित कुंवर नारायण कौला की पुत्री गंगारानी कौला ने अपनी शिक्षा समाप्त होने के पश्चात सन् 1966 में दिल्ली मे एस. के मल्होत्रा नाम के एक पंजाबी नवयुवक के साथ विवाह किया है।

सर गंगा राम कौला के अनुज भ्राता पंडित इन्द्र नारायण कौला की युवावस्था में ही मृत्यु हो गयी थी जिनके दो पुत्र लक्ष्मी नारायण और ब्रिज नारायण तथा चार पुत्रियां राज दुलारी, ब्रिज दुलारी, किशन और बिशन थीं। सर गंगा राम कौला ने इस संयुक्त परिवार के मुखिया के रूप में उनकी शिक्षा तथा विवाह का भार वहन किया। और कभी भी उनको किसी प्रकार के अभाव का अनुभव नहीं होने दिया।

सर गंगा राम कौला बहुत ही निष्ठावान तथा कर्तव्य परायण अधिकारी थे जिन्होंने विषम से विषम परिस्थिति में भी कभी अपने मूल्यों और सिद्धातों के साथ समझौता नहीं किया। एक बार आप वाईसराय के भवन पर रख रखाव के लिये व्यय हुई धनराशि की सघन जांच कर रहे थे। आपने अनेक मदों में फिजूलखर्ची पर आपत्ति उठा दी और कहा कि इनमें कटौती होनी चाहिए। वाईसराय ने आपके द्वारा सुझाये गये उपायों का स्वागत करते हुए उनको तत्काल प्रभाव से लागू करने का आदेश पारित किया।

सर गंगा राम कौला ने ग्रीष्मकाल मे अपने परिजनों के रहने के लिये शिमला के समर हिल रमणीक क्षेत्र में सन् 1922 में एक बंगला क्रय

किया क्योंकि उस समय भारत के उच्च अधिकारियों को वाईसराय के साथ 6 माह शिमला में रहना पड़ता था। एक बार वाईसराय लार्ड विलिंगडन ने आपसे प्रश्न किया कि आप सेवा निवृत्त होने के पश्चात कहां रहेंगे? आपका विनम्र उत्तर था कि लाहौर की अपनी पैतृक हवेली में। इस पर वाईसराय ने कहा कि आप दिल्ली में क्यों नहीं रहते। आपका पुनः सरल उत्तर था। कि इतनी मेरी हैसियत नहीं यह उस समय की सरल जीवन शैली और ईमानदारी की एक जीती जागती मिसाल है जिसकी अब कल्पना कर पाना असम्भव है। वाईसराय ने आपके तर्क से प्रभावित होकर तुरन्त दिल्ली के तत्कालीन चीफ कमिश्नर जैकब जानसन को आदेश दिया कि वह तुरन्त सर गंगा राम कौला को आवास के लिये दिल्ली में किसी उचित स्थान पर उचित मूल्य पर एक भूखण्ड उपलब्ध करायें। उसी आदेश के अनुपालन में 7 सिकन्दर रोड पर सर गंगा राम कौला को भव्य बंगला निर्माण करने के लिये एक 2½ एकड़ का भूखण्ड आवंटित किया गया जिस बंगले में वह अपने जीवन के अन्तिम क्षणों तक निवास करतें रहे। आप जब सन् 1945 में सोलन अपने परिवार के साथ भ्रमण करने के उद्देश्य से गये तो वहां अकस्मात लेडी भाग्यंभरी कौला की लगभग 63 वर्ष की आयु में मृत्यु हो गयी। जिससे आपको काफ़ी आघात पहुंचा क्योंकि आप अपनी पत्नी से बहुत प्रेम करते थे पर आपने इस दुःख की घड़ी में बहुत ही संयम तथा धैर्य के साथ कार्य किया और अपने शोक को किसी पर प्रकट नहीं होने दिया।

सन् 1947 में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात देश की विभिन्न रियासतों का भारत में विलय हो गया और सर गंगा राम कौला भारतीय रेड क्रास सोसाईटी के अध्यक्ष पद पर बिना कोई वेतन लिये कार्य करने लगे। आप सेन्ट जान्स ऐम्बुलेन्स के भी सम्मानित सदस्य रहे। अखिल भारतीय महिला कांफ्रेंस के सरंक्षक रहे। आप दिल्ली के प्रतिष्ठित लेडी इरविन कालेज के प्रबंधन मंडल के सम्मानिंत सदस्य रहे। आप सन् 1911 में दिल्ली में ब्रिटेन की महारानी मेरी से व्यक्तिगत रूप से मिले और सन् 1935 में ब्रिटेन के सम्राट जार्ज पंचम के शासन के 25 वर्ष पूर्ण होने के

अवसर पर रजत जंयन्ती समारोह के लिये गठित समिति के कोषाध्यक्ष रहे। आप सन् 1960 और 1965 के मध्य दिल्ली की कश्मीरी पंडितों की ऐसोसियेशन के अध्यक्ष भी रहे।

सर गंगा राम कौला बहुत ही प्रतिभावान तथा सर्वगुण सम्पन्न व्यक्ति थे जिन्होने कश्मीरी पंडित बिरादरी के उत्थान के लिये इतना महत्वपूर्ण कार्य किया जिसका शब्दों में वर्णन करना सम्भव नही। आप इतने गोरे वर्ण के व्यक्ति थे कि आपके नौकर चाकर आपको अंग्रेज़ समझते थे और इस नाते आपके घर का पका हुआ भोजन नही ग्रहण करते थे। एक दिन उन नौकरों ने आपको अपने घर के आंगन में जनेऊ धारण किये हुए स्नान करते हुए देखा तब उनको आभास हुआ कि उनके साहब कोई अंग्रेज नहीं अपितु विशुद्ध भारतीय ब्राह्मण है और फिर उन्होनें आपके घर का पका हुआ भोजन ग्रहण करना प्रारम्भ किया।

सर गंगा राम कौला एक विलक्षण बुद्धि वाले व्यक्ति थे जिनकी स्मरण शक्ति बहुत ही तीक्ष्ण थी। आप बहुत ही संजीदिगी के साथ नपी तुली बात करते थे और बेकार की गप शप करने में आपका तनिक भी विश्वास नहीं था। आपकों पुस्तकें पढ़ने तथा भ्रमण करने का बहुत शौक था। समाज के उत्थान के लिये प्रस्तावित कार्यक्रमों में आपने सदैव विशेष रूचि ली और उनको सही रूप से क्रियान्वयन कराने के लिये अपना भरपूर सहयोग दिया। आप एक आशावादी व्यक्ति थे जो समाज की समरसता में विश्वास करते थे। आपका 92 वर्ष की आयु में सन् 1970 में अपने 7 सिकन्दर रोड पर स्थित भव्य बंगले में निधन हो गया और इस प्रकार हमारी बिरादरी का एक महान सपूत सदा के लिये हमसे बिछड़ गया पर आप के द्वारा सम्पादित किये गये महान कार्य आपकी मधुर स्मृति को सदैव संजोए रहेगें। हिन्दी के कवि रमेश 'शेखर' ने ठीक ही कहा है।

"कैसे भी कठिन क्षण न डिगा पाते मुझे
यदि मन से अपाहिज न बना पाते मुझे
मैं अपने लिये राह बना लेता अलग
यदि बहके हुए लोग न बहकाते मुझे"

निष्ठावान समाज सेवी तथा मानवता के पुजारी

पंडित ब्रिज नाथ शरगा

इस मायावी संसार में ऐसे अनेक महापुरूषों ने जन्म लिया जिन्होंने मानवता के कल्याण के लिये अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित कर दिया। ऐसी महान आत्माओं ने सदैव समाज सेवा को ही सबसे उत्तम धर्म माना और अपने प्रयासों द्वारा उसको एक नया स्वरूप देने की चेष्टा की। इन विभूतियों ने समाज में प्रेम और अहिंसा का सन्देश देकर उसमें समरसता स्थापित करने का महत्वपूर्ण कार्य किया और अपने प्रवचनों द्वारा मनुष्य का ध्यान उन विशेष गुणों की ओर केन्द्रित करने की प्रेरणा दी जिनको ग्रहण करने से एक साधारण मानव भी महामानव की उपाधि से सुशोभित हो जाता है। इन महानुभावों ने जीवन का सार क्या है यह जानने की इच्छा व्यक्तियों में जागृत की और उनको अपनी अन्तर आत्मा का ज्ञान कराया। हमारे देश में इस प्रकार के मनीषियों की एक लम्बी परम्परा रही है जिन्होंने समाज में समय–समय पर मानवीय मूल्यों और आदर्शों को पुनः स्थापित करने का सराहनीय कार्य किया है और समाज सेवा को एक धर्म के रूप में अपने जीवन में अंगीकार किया तथा बिना किसी आर्थिक लाभ का मोह लिये हुऐ निस्वार्थ भाव से जनता की सेवा की और उसी को अपने जीवन का मुख्य लक्ष्य माना ऐसे कमर्ठ तथा निष्ठावान समाज सेवियों की अगली पंक्ति में एक नाम पंडित ब्रिज नाथ शरगा का है जिन्होंने समाज सेवा के साथ साथ हिन्दी भाषा के उत्थान, प्रसार एवं प्रचार के लिये उस समय



महत्वपूर्ण कार्य किया जब इस भाषा की हर स्तर पर घोर उपेक्षा की जा रही थी और इस भाषा के पठन–पाठन के लिये विश्वविद्यालय के स्तर पर कोई व्यवस्था नहीं थी।

पंडित ब्रिज नाथ शरगा अवध के पुश्तैनी वसीक़ेदार प्रसिद्ध कौल शरगा ख़ानदान के एक सम्मानित सदस्य थे। आपके पूर्वज पंडित ज़िन्दराम कौल मूल रूप से कश्मीर घाटी के श्रीनगर जनपद के रैनावारी मुहल्ले के निवासी थे जो मुग़ल सम्राट औरंगज़ेब (1658–1707) के शासन काल में कश्मीर के सूबेदार इफ़तिखार खां की बर्बरता और कुशासन से पीड़ित होकर अपने धर्म की रक्षा के लिये घाटी से निकल कर और दुर्गम रास्तों और घने वनों को पार करते हुऐ किसी प्रकार सन् 1680 के आस पास अपने परिवार सहित दिल्ली आ गये थे। उस समय कश्मीर घाटी से जो भी कश्मीरी पंडित पलायन करता था। वह प्रायः शाही मुग़ल मार्ग से बारामूला से रावलपिंडी होता हुआ दिल्ली आता था क्योंकि यातायात के लिये उचित साधन और मार्ग विकसित नहीं हुऐ थे। यह यात्रा अधिकतर घोड़ा गाड़ी या फिर बैलगाड़ी द्वारा कई महीनों में तय की जाती थी और मार्ग में कई स्थानों पर विश्राम करना पड़ता था।

पंडित ज़िन्दराम कौल और उनके सुपुत्र साहब कौल दिल्ली में अपने परिवार के जीवकोपार्जन के लिये क्या करते थे इसके बारे में कोई लिखित प्रमाणिक सूचना इस समय उपलब्ध नहीं है। कुछ पुस्तकों में केवल इतना उल्लेख अवश्य किया गया है कि यह दोनों व्यक्ति दिल्ली के मुग़ल दरबार में किसी छोटे पद पर नियुक्त कर दिये गये थे और कालान्तर में पंडित साहब कौल मीर मुन्शी बना दिये गये थे।

सन् 1707 में मुग़ल सम्राट औरंगज़ेब की मृत्यु के पश्चात मुग़ल साम्राज्य का पतन प्रारम्भ हुआ और उसकी प्रतिष्ठा तथा हनक धीरे–धीरे समाप्त होने लगी जिसके कारण गुणी व्यक्ति अच्छे अवसरों की खोज में दिल्ली के आस पास की रियासतों में अपने परिवारों सहित पलायन करने लगे। इसी क्रम में पंडित साहब कौल के पुत्र लक्ष्मी नारायण कौल और निरंजन दास कौल दिल्ली से अवध में नवाब शुजाउद्दौला (1753–1775)

के शासन काल में फ़ैजाबाद चले आये जो उस समय नवाब की राजधानी था। चूंकि यह दोनों भ्राता लम्बे–चौड़े तथा गठे हुऐ शरीर वाले व्यक्ति थे इस नाते इन दोनों को नवाब ने अपनी विशेष शाही फौज की टुकड़ी में भर्ती कर लिया और उनको अपनी बहू जिनाबा बेगम शमसुलनिसा साहिबा की तथा उनकी जागीर की समुचित सुरक्षा का दायित्व सौंपा। यह दोनों भाई कसरतिया जवान थे और दण्ड मुग्दर तथा तलवार भांजने में विशेष रूप से निपुण थे। अतः उन्होंने अपना यह दायित्व बड़ी ही कुशलतापूर्वक निभाया जिससे प्रसन्न होकर नवाब क़ी पहली पत्नी जिनाबा बहूबेगम साहिबा ने इन दोनों भ्राताओं को एक शाही फरमान द्वारा पुश्तैनी वसीक़ा स्वीकृत कर दिया जिससे उनको किसी प्रकार की कोई आर्थिक कठिनाई न हो और उनको शरगा के पदनाम से नवाज़ा तब से यह दोनों भ्राता अपना कुलनाम कौल के स्थान पर कौल शरगा लिखने लगे।

नवाब शुजाउद्दौला की सन् 1775 में मृत्यु के पश्चात उनके सुपुत्र नवाब आसफउद्दौला ने लखनऊ को अपनी राजधानी बनाया जिसके कारण उनके अनेक दरबारी फैज़ाबाद से लखनऊ चले आये। पंडित लक्ष्मी नारायण कौल शरगा तथा पंडित निरंजन दास कौल शरगा भी फैज़ाबाद से लखनऊ चले आये और रानी कटरा मुहल्ले में रहने लगे क्योंकि उस समय तक लखनऊ का कश्मीरी मोहल्ला अस्तित्व में नहीं आया था।

पंडित निरंजन दास कौल शरगा की वसीक़ा आफ़िस के अभिलेखों के अनुसार 22 सफ़र 1240 हिजरी को मृत्यु हो गयी अर्थात वह सन् 1824 में परलोक सिधार गये। आपके चार पुत्र नरसिंह दत्त, बद्री नाथ, कन्हैया लाल तथा केदार नाथ और दो पुत्रियां चन्दा और मीना थीं जिनमें चन्दा का विवाह रानी कटरा के एक मुशरान परिवार में हुआ था।

पंडित नरसिंह दत्त शरगा रानी कटरा मुहल्ले की खेतगली में रहते थे। आप एक बहुत बड़े ज़मीनदार थे जिनके पास उतरैटिया समेत कई गांव थे जो उनको जागीर के रूप में प्राप्त हुऐ थे। आपने दो विवाह किये थे। आपकी पहली पत्नी से पुत्र का नाम उमादत्त शर्गा था। जिनका

मानसिक संतुलन कुछ ठीक नहीं था। कुछ पारिवारिक समस्याओं के कारण आपकी पहली पत्नी अपने पुत्र के साथ आपको परमात्मा के भरोसे छोड़ कर चली गयी जिसके कारण व्यथित होकर आपको दूसरा विवाह करने को बाध्य होना पड़ा ताकि लम्बी चौड़ी ज़मीनदारी को देखने तथा आपके वंश को आगे चलाने के लिये उचित वारिस या उत्तराधिकारी मिल सके। पर जब प्रभु की इच्छा के विरूद्ध आपके अनेक प्रयासों के बाद भी आपको अपनी दूसरी पत्नी से वांछित पुत्र नहीं प्राप्त हो सका तो आपने एक पुत्र को गोद लेने का मन बनाया। आपको अपनी दूसरी पत्नी से केवल एक कन्या उत्पन्न हुई जिसका नाम विश्शो था और जिसका एक तिक्कू परिवार में विवाह हुआ था और जिनके पुत्र कानपुर के निवासी पंडित पृथ्वी नाथ तिक्कू थे।

पंडित नरसिंह दत्त शरगा ने 18 जनवरी सन् 1869 को कश्मीरी मुहल्ले के निवासी पंडित विश्वनाथ कौल नाला को गोद लेकर अपना दत्तक पुत्र बना लिया और वह बिरादरी में पंडित विश्व नाथ शरगा के नाम से बाद में जाने गये। चूंकि इस्लाम धर्म में दत्तक पुत्र की कोई मान्यता नहीं है इसलिये पंडित नरसिंह दत्त शरगा की 24 अगस्त सन् 1878 को मृत्यु के पश्चात मुस्लिम लॉ के अनुसार आपको अपने पिता के वसीक़े से वंचित कर दिया गया जिसके लिये आपने बहुत समय तक मुकदमा लड़ा और कश्मीरी पंडितों में गोद लेने की प्रथा की दलील दी और अपने पक्ष में अनेक तर्क प्रस्तुत किये अन्ततः अंग्रेज़ों ने आपको वसीक़ा स्वीकृत कर दिया परन्तु इस आशय के साथ कि आपकी मृत्यु के पश्चात आपके वंशजों को इससे वंचित कर दिया जायेगा और वह वसीक़ा पाने के अधिकारी नहीं होंगे।

पंडित विश्व नाथ शरगा ने भी अपने पिता के समान दो विवाह किये थे। आपकी पहली पत्नी से केवल एक पुत्र ब्रिज नाथ थे। आपकी दूसरी पत्नी से दो पुत्र नरेन्द्र नाथ तथा ज्योति नाथ और दो पुत्रियां सेना और लक्खी थीं जिनमें सेना का विवाह रानी कटरा के निवासी पंडित गौरी नाथ तिक्कू के परिवार में तथा लक्खी का विवाह लाहौर के प्रसिद्ध वकील

पंडित ज्वाला प्रसाद शंगलू के सुपुत्र पंडित बद्री प्रसाद शिंगलू के साथ सम्पन्न हुआ था।

पंडित नरेन्द्र नाथ शरगा को अपनी युवावस्था में मुहल्ले की किसी अल्हड़ कन्या के साथ प्रेम हो गया था जिसका जनून उन पर इस सीमा तक चढ़ा कि उन्होंने उसको प्राप्त करने की चाह में विषपान करके आत्महत्या कर ली और इस प्रकार अमर प्रेम की एक अदभुत मिसाल बिरादरी के समक्ष प्रस्तुत की। आपके अनुज भ्राता पंडित ज्योति नाथ शरगा का जन्म रानी कटरा मुहल्ले की खेत गली में सन् 1905 में हुआ था। आप अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात रेल विभाग में गार्ड हो गये थे। आपका विवाह पंडित रघुनाथ प्रसाद भान की सुपुत्री राजकुमारी के साथ सम्पन्न हुआ था। आपके एक पुत्र श्याम मोहन और दो पुत्रियां चन्द्रा और मीरा थीं जिनमें चन्द्रा का विवाह ग्वालियर के निवासी पंडित राम चन्द्र कुंजरू के साथ तथा मीरा का विवाह लखनऊ के पंडित राज कुमार बक्शी के साथ सम्पन्न हुआ था।

श्याम मोहन नाथ शरगा कालीचरण कालेज से इण्टरमीडिएट की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात भारतीय थल सेना के लिये चयनित कर लिये गये थे। उनकी लगभग 21 वर्ष की आयु में रक्त का कैंसर हो जाने के कारण सन् 1959 में दुखद मृत्यु हो गई। पंडित ज्योति नाथ शरगा को अपने एक मात्र पुत्र की मृत्यु से बहुत गहरा धक्का लगा जिससे उनके स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा और 10 वर्ष पश्चात सन् 1969 में 64 वर्ष की आयु में उनका रानी कटरा में अपनी पैतृक हवेली में निधन हो गया।

पंडित ब्रिज नाथ शरगा का जन्म सन् 1884 में रानी कटरा मुहल्ले की खेतगली में स्थित अपनी पैतृक हवेली में हुआ था। जब आप केवल 4 वर्ष की आयु के थे तो आपकी मां का अकस्मात निधन हो गया। इस नाते आपका लालन पालन आपकी दादी के संरक्षण में हुआ। आपकी उस समय की उर्दू तथा फ़ारसी भाषा में पारम्परिक शिक्षा मौलवियों की देख–रेख में सम्पन्न हुई। आपने तदपश्चात उच्च शिक्षा के लिये राजकीय जुबिली हाई स्कूल में प्रवेश लिया जहां से आपने सन् 1900 में मैट्रिकुलेशन

की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। आपने फिर कैनिंग कालेज में प्रवेश लिया जहां से आपने एफ0ए0 तथा बी0ए0 की परीक्षा क्रमशः सन् 1902 और सन् 1904 में उत्तीर्ण की। उस समय तक लखनऊ का कैनिंग कालेज इलाहाबाद विश्वविद्यालय से सम्बद्ध था और परीक्षा देने के लिये छात्रों को लखनऊ से इलाहाबाद जाना पड़ता था।

पंडित ब्रिज नाथ शरगा ने फिर अंग्रेज़ी साहित्य विषय लेकर उसका गूढ़ अध्ययन किया और कैनिंग कालेज से सन् 1906 में इसी विषय में एम0ए0 की परीक्षा सबसे अधिक अंक प्राप्त करके उत्तीर्ण की और सारे विश्वविद्यालय में प्रथम स्थान पाया जिसके कारण आपको चान्सलर के स्वर्ण पदक से सम्मानित किया गया। आपने साथ ही साथ एल–एल0बी0 की परीक्षा भी प्रथम श्रेणी में बहुत अच्छे अंक प्राप्त कर उत्तीर्ण की जो उस समय तक प्राविधान था। अब एक साथ दो परिक्षाऐं देने पर विश्वविद्यालय ने प्रतिबन्ध लगा दिया है।

आपने अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात तत्कालीन अवध चीफ़ कोर्ट में वकालत प्रारम्भ की पर आपने किन्हीं कारणों से कभी भी अपनी वकालत को गम्भीरतापूर्वक नहीं लिया यद्यपि आप एक विद्वान और गुणी व्यक्ति थे। आपने अधिकतर अपने जीवन के अमूल्य समय को अपनी वकालत को चमकाने के स्थान पर अन्य समाज सेवी कार्यों में लगाया ताकि समाज के आर्थिक रूप से कमज़ोर तथा शोषित वर्गों के व्यक्तियों के जीवन स्तर में कुछ सुधार लाया जा सके जो जीवन की मूल भूत आवश्यकताओं से भी वंचित है और एक पशु के समान अपना जीवन निर्वाह कर रहे हैं कदाचित इसी उद्देश्य को लेकर पंडित ब्रिज नाथ शरगा ने अपना सम्पूर्ण जीवन मानवता के उद्धार के प्रति समर्पित कर दिया। चूंकि आप ब्रिटिश शासन काल में एक बड़े ज़मीनदार थे और आपके पास आय के अन्य स्रोत उपलब्ध थे इस कारण आपको इस प्रकार के समाज सेवी कार्य करने में कोई विशेष कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ा और आप निष्काम कर्म की भावना को लेकर व्यापक समाज के हितों के कार्यों में संलग्न रहे।

आप जब लखनऊ के कैनिंग कालेज में एक छात्र के रूप में अध्ययन कर रहे थे तो आपके जीवन पर अपने अंग्रेज़ प्रोफ़ेसरों का बहुत अधिक प्रभाव पड़ा और आप उन्हीं के रंग–ढ़ंग में बिलकुल घुल मिल गये और उन्हीं के अनुसार अपना आचरण करने लगे यहां तक कि जब लखनऊ के तत्कालीन जिला मजिस्ट्रेट सिलेडन ने महात्मा गांधी के देश के नवयुवकों पर बढ़ते हुए प्रभाव को कम करने और कांग्रेस पार्टी के सामानान्तर एक मंच खड़ा करने के लिये ''अमान सभा'' नाम से एक संस्था का गठन किया जो अंग्रेज़ों की नीतियों को आम जनता में प्रचारित कर उनके लाभ से व्यक्तियों को अवगत करा सके तो तुरन्त पंडित ब्रिज नाथ शरगा ने इस कार्य के लिये अपने को प्रस्तुत किया और ''अमान सभा'' के एक सक्रिय सदस्य बन गये। जब कभी भी कांग्रेस पार्टी के कार्यकर्ता रफ़ा ऐ आम क्लब में सभा करते और अंग्रेज़ों के विरूद्ध नारा ''बोल गई माई लार्ड कुकडूं कूं'' बुलन्द करते तो क्लब के बाहर सड़क पर ''अमान सभा'' के सदस्य उनके उत्तर में ''बोल गई चरखे़ की चरर्ख़ चूं'' नारा लगाते थे। यह चकल्लस इसी प्रकार कुछ वर्षों तक चलती रही जिसमें लखनऊवासी काफ़ी तफ़रीह लेते थे।

सन् 1916 में महात्मा गांधी कांग्रेस पार्टी के अधिवेशन में भाग लेने के लिये प्रथम बार लखनऊ पधारे। उनके विचार सुनने तथा उनके सम्पर्क में आने के पश्चात पंडित ब्रिज नाथ शरगा के स्वभाव और रहन–सहन में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन आया और आप कांग्रेस पार्टी के एक सक्रिय सदस्य बन कर स्वतंत्रता आन्दोलन में कूद पड़े। आप हाथ से निर्मित खद्दर के वस्त्र धारण करने लगे और आपने सादा जीवन उच्च विचार के मूल मंत्र को अपने जीवन का मुख्य आधार बना लिया।

अवध में नवाब आसफ़उद्दौला (1775–1798) के शासन काल में पंजाब से बाबा गोमती दास नाम के एक महान संत लखनऊ पधारे और उन्होंने ठाकुरगंज क्षेत्र में गोमती नदी के दक्षिण तट के निकट अपना आश्रम स्थापित किया। उनकी आध्यात्मिक शक्ति से प्रभावित होकर बहुत बड़ी संख्या में भक्तगण उनके दर्शन करने तथा उनका आशिर्वाद लेने

आते थे। उनकी मृत्यु के पश्चात उनकी स्मृति में एक भव्य स्थल का निर्माण सरताज बाग़ में कराया गया जिसके लिये तत्कालीन अवध के नवाब नसीरउद्दीन हैदर (1827–1837) ने काफ़ी वित्तीय सहायता दी और उसकी उचित देखभाल के लिये सीतापुर मार्ग पर स्थित सिधौली तथा कुछ अन्य गांव जागीर के रूप में प्रदान किये ताकि इस मठ की व्यवस्था में किसी प्रकार की कठिनाई न उत्पन्न हो और सन साधनों का अभाव न अनुभव होने पाये।

सन् 1915 में इस मठ और स्थल जो अब बाबा हज़ारा बाग़ के नाम से प्रसिद्ध है के उचित प्रबन्ध के लिये लखनऊ के तत्कालीन ज़िला जज एच0पी0 बारबेस्टन ने प्रथम बार एक ट्रस्ट का गठन किया जिसका अध्यक्ष पंडित ब्रिज नाथ शरगा को मनोनीत किया गया ताकि इस 200 वर्ष पुराने मन्दिर और उसकी जायदाद की समुचित देखभाल की जा सके और उसकी आय–व्यय का ब्यौरा कानून और नियमों के अनुसार उचित प्रकार से रखा जा सके। पंडित ब्रिज नाथ शरगा ने यह कार्य बहुत ही कुशलतापूर्वक सम्पादित किया और मन्दिर के प्रांगण में भक्तों की सुख–सुविधाओं के लिये अनेक योजनाऐं क्रियान्वित करायीं जैसे पीने के पानी की उचित व्यवस्था, भक्तों के लिये रोड इत्यादि का निर्माण तथा मन्दिर के परिसर में फल, फूल तथा सब्जी के पौधों को लगाना इत्यादि ताकि पूरे क्षेत्र को एक सुन्दर तथा आकर्षक रूप दिया जा सके। जहां आने वाले हर व्यक्ति को सुख और मन की शान्ति प्राप्त हो सके। उनका विचार इस पूरे क्षेत्र को एक रमणीक वन के रूप में विकसित करने का था पर उस समय तकनीकी साधनों के अभाव में वह सम्भव न हो सका वरन् आज यह लखनऊ नगर का बहुत ही आकर्षक ऐतिहासिक पर्यटन केन्द्र होता जिससे विदेशी मुद्रा प्राप्त करने में बहुत सहायता मिलती। यह दुःख का विषय है कि प्रदेश सरकार का पर्यटन विभाग अब भी इस दिशा में उचित ध्यान नहीं दे रहा है और यह महत्वपूर्ण स्थल उसकी उपेक्षा का शिकार है।

भारत के राष्ट्रवादी विचार धारा वाले महान संत स्वामी विवेकानन्द

के व्यक्तित्व से प्रभावित हो कर लखनऊ नगर के कुछ नवयुवकों ने अमीनाबाद की मारवाड़ी गली में सन् 1914 में राम कृष्ण प्रतिष्ठान नाम से एक संस्था का गठन किया। अमीनाबाद क्षेत्र सन् 1910 से पूर्व एक गांव के समान था जो उस समय बाबू गंगा प्रसाद वर्मा और पंडित जगत नारायण मुल्ला के प्रयासों से धीरे धीरे विकसित होना प्रारम्भ हुआ था। पंडित ब्रिज नाथ शरगा ने राम कृष्ण मिशन सेवा आश्रम की लखनऊ में स्थापना में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभायी और उनके प्रयासों से इस संस्था का अपना भवन हो गया। सन् 1925 में इस संस्था को कलकत्ते के बेलूर क्षेत्र में स्थित राम कृष्ण मिशन से सम्बद्ध कर उसका एक अंग बना दिया गया और उसकी लखनऊ शाखा का अध्यक्ष पंडित ब्रिज नाथ शरगा को बना दिया गया। आप इस संस्था के काफ़ी लम्बे समय तक अध्यक्ष रहे और आपने इस संस्था के माध्यम से अनेक महत्वपूर्ण सामाजिक कार्य किये और समाज के शोषित वर्गों को लाभ पहुंचाया।

प्रदेश सरकार ने जब सन् 1920 में एक ऐक्ट पारित कर लखनऊ विश्वविद्यालय की स्थापना की और पंडित जगत नारायण मुल्ला को उसका प्रथम कुलपति नियुक्त किया तो पंडित ब्रिज नाथ शरगा को उनकी योग्यता के आधार पर तत्कालीन प्रदेश के ले0 गवर्नर ने लखनऊ विश्वविद्यालय की कोर्ट और एक्ज़ीक्यूटिव कौंसिल का सदस्य मनोनीत कर दिया। पंडित ब्रिज नाथ शरगा ने इस विश्वविद्यालय के प्रारम्भिक दौर में बड़ी ही महत्वपूर्ण भूमिका निभायी और इसकी प्रतिष्ठा और गरिमा को स्थापित करने में एक अद्वितीय कार्य किया। आपके प्रयासों से विश्वविद्यालय में अनेक नये विभागों का सृजन हुआ और अनेक नये विषयों की शिक्षा देने की समुचित व्यवस्था हुई। जिसके कारण पूरे देश में बहुत कम समय में यह विश्वविद्यालय अपनी शिक्षा के स्तर के लिये प्रसिद्ध हो गया और इसकी तुलना लन्दन के कैम्ब्रिज और ऑक्सफ़ोर्ड विश्वविद्यालयों से की जाने लगी। इसमें देश के सुदूर क्षेत्रों से छात्र शिक्षा लेने के लिये प्रवेश लेने लगे जिनमें अच्छी संख्या में कश्मीर से कश्मीरी पंडित छात्र भी उच्च शिक्षा ग्रहण करने के उद्देश्य से आते थे क्योंकि उस समय तक कश्मीर

घाटी में उच्च शिक्षा प्राप्त करने का कोई प्राविधान नहीं था।

लखनऊ नगर का रानी कटरा मुहल्ला किसी समय हिन्दी साहित्यकारों और हिन्दी भाषा के प्रेमियों का गढ़ हुआ करता था जहां से अनेक हिन्दी साहित्य की पत्रिकाऐं नियमित रूप से प्रकाशित होती थीं। हिन्दी भाषा के जाने माने विद्वान पंडित राधे कृष्ण बाजपेई, पंडित रूप नारायण पाण्डे, विशाल वाजपेई, प्रेम नारायण टण्डन इत्यादि इसी मुहल्ले में रहते थे। टण्डन जी ने "बृज सूर कोष" की रचना की थी। आपके रानी कटरा में स्थित विद्या मन्दिर प्रकाशन से हिन्दी साहित्य की अनेक पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। ऐसे हिन्दीमय वातावरण में पंडित ब्रिज नाथ शरगा का हिन्दी साहित्य की सेवा के प्रति समर्पित हो जाना बहुत ही स्वाभाविक था। आपने अपने इसी हिन्दी भाषा के प्रति प्रेम से वशीभूत होकर उस समय अनेक प्रतिरोधों के विरूद्ध लखनऊ विश्वविद्यालय में हिन्दी विभाग की न केवल स्थापना करायी अपितु स्नातक तथा परास्नातक स्तर पर विश्वविद्यालय में हिन्दी भाषा की शिक्षा देने की समुचित व्यवस्था करायी जो उनका हिन्दी भाषा के व्यापक प्रचार और प्रसार के लिये उस प्रतिकूल वातावरण और परिस्थितियों में एक बहुत बड़ा क्रान्तिकारी कदम था जिसकी जितनी भी सराहना की जाये कम है। आपने अंग्रेज़ों के शासन काल में हिन्दी को उर्दू तथा फ़ारसी भाषा के समकक्ष खड़ा कर समान स्तर दिला दिया, जिसकी उस समय काम काज में घोर उपेक्षा की जाती थी और जिसको निम्न स्तर की भाषा माना जाता था।

जब लखनऊ विश्वविद्यालय स्थापित हुआ था तो उसके अंग्रेज़ अधिकारीगण तथा प्रोफ़ेसर घोड़ों पर बैठ कर या फिर बग्घियों द्वारा विश्वविद्यालय आते थे और घोड़ों को बांधने तथा उनकी उचित देख–भाल के लिये विश्वविद्यालय के परिसर में एक हलब अस्तबल का निर्माण कराया गया था। पंडित ब्रिज नाथ शरगा भी बड़ी शान के साथ अपनी निजी बग्घी द्वारा प्रतिदिन विश्वविद्यालय जाते थे और वहां चल रहे कार्यों की समीक्षा करते थे। आप वहां के प्रोफ़ेसरों तथा छात्रों की समस्याओं के प्रति व्यक्तिगत रूप से रूचि लेते थे ताकि समय रहते उनका उचित

निराकरण किया जा सके और विश्वविद्यालय के किसी कार्य में किसी प्रकार की बाधा न उत्पन्न होने पाये। अपने इस व्यवहार के कारण आप सबके प्रिय थे और सारा विश्वविद्यालय प्रशासन आपका बहुत आदर और सम्मान करता था।

एक बार किंग जार्ज मेडिकल कालेज के एक लोभी डाक्टर ने एक जवान लड़के का पेट काट कर उसको आपरेशन करने की मेज़ पर यूं ही छोड़ दिया और बाहर आकर उसके परिजनों से और रूपये लाने की मांग करने लगा जिसके कारण उस अभागे लड़के की अधिक बेहोशी की दवा देने से वहीं आपरेशन करने की मेज़ पर ही मृत्यु हो गयी और यह ख़बर अनेक समाचार पत्रों की सुर्खियां बनीं जिसे पढ़ कर पंडित ब्रिज नाथ शरगा की अन्तर आत्मा तिलमिला गयी और उन्होंने इस निकम्मे तथा लालची डाक्टर को विश्वविद्यालय की सेवाओं से मुक्त कराने का द्रढ़ निश्चय लिया ताकि उसको इस अमानवीय व्यवहार के लिये सबक सिखाया जा सके। जिसने अपने कुकृत्य से चिकित्सकों के महान पेशे पर एक बदनुमा दाग लगा दिया। आपने अपने प्रभाव का पूरा प्रयोग करते हुए उस डाक्टर को सेवा से मुक्त करा दिया ताकि चिकितसकों की प्रतिष्ठा बनी रहे और उन पर से किसी रोगी का विश्वास न डगमगाने पाये।

पंडित ब्रिज नाथ शरगा को 28 अगस्त सन् 1935 को अवध बार एसोसिएशन की कार्यकारिणी का सदस्य चुना गया। आपने इस पद पर लगभग 3 वर्ष तक कार्य किया। आप अपने सम्पूर्ण जीवन में केवल एक बार हैदराबाद गये जहां आपको वहां के निज़ाम सर उस्मान अली खां बहादुर के सम्मुख एक मुकदमे में पैरवी करनी थी। आपको इस यात्रा के लिये काफ़ी तैयारी करनी पड़ी थी क्योंकि रेल यात्रा में तब झूठा–सुच्चा मानने वाले को बहुत कठिनाई होती थी। आप अपनी इस यात्रा के अनुभव अपने रिक्त पलों में बड़े चाव से अपने निकट के सम्बंधियों तथा मित्रों को अवश्य सुनाते थे।

पंडित ब्रिज नाथ शरगा नगर की अनेक प्रतिष्ठित सामाजिक, सांस्कृतिक तथा साहित्यिक संस्थाओं से सक्रिय रूप से जुड़े रहे और

नगर की कई शिक्षण संस्थाओं की प्रबंध समितियों में एक सम्मानित सदस्य रहे। आपने सदैव अपने जीवन में समाज के शोषित वर्ग को लाभ पहुंचाने का प्रयास किया। आपने कश्मीरी समाज के उत्थान के लिये भी काफ़ी महत्वपूर्ण कार्य किया। न्यायमूर्ति गोकरन नाथ मिश्र, न्यायमूर्ति विशेश्वर नाथ श्रीवास्तव, बाबू गंगा प्रसाद वर्मा, द्वारिका नाथ सिन्हा, पंडित जय नारायण मिश्र, सैय्यद अली ज़हीर, ब्रिज कृष्ण धौन, डॉ0 त्रिलोकी नाथ वर्मा, पंडित सिद्धनाथ मिश्र ''गौश्री'' जैसे गणमान्य व्यक्ति आपके परम मित्रों में थे।

पंडित ब्रिज नाथ शरगा का विवाह सन् 1910 के आस पास आगरा के निवासी पंडित बृज कृष्ण वातल की सुपुत्री जयकिशोरी के साथ सम्पन्न हुआ था। आपके एक पुत्र हरि मोहन और दो पुत्रियां बिब्बो और श्याम कुमारी थी। बिब्बों का विवाह पंडित ओंकार नाथ मुट्टू के साथ सम्पन्न हुआ था जो पेशे से एक केमिकल इन्जीनियर थे और एक निजी रेज़िन और टरपेन्टाईन की फैक्ट्री में कार्य करते थे। आप पंडित जय करन नाथ उगरा के परम मित्रों में थे। आपने अपनी सेवा से कम आयु में अवकाश ग्रहण कर लिया था और वाराणसी में लक्ष्मी कुण्ड के निकट रहते थे आप स्वामी परमानन्द के शिष्य हो गये थे और उनसे हिन्दू धर्म और हिन्दू दर्शन पर अधिकतर विचार विमर्श करते थे। श्याम कुमारी का विवाह पंडित प्रद्युमन कृष्ण हुक्कू के साथ सम्पन्न हुआ था जो प्रदेश के व्यापार कर विभाग में एक अधिकारी थे। आप आज कल अपने भतीजे डॉ0 शैली हुक्कू जो कैंसर रोग के एक विशेषज्ञ हैं के पास दिल्ली में रहते हैं।

हरि मोहन नाथ शरगा शिया कालेज से बी0एस–सी0 करने के पश्चात मेडिकल रिप्रेजेन्टेटिव हो गये थे। पर कुछ समय पश्चात पारिवारिक कारणों से आपने अपनी नौकरी छोड़ दी और तरह–तरह के निजी व्यवसाय करने लगे। आप फिर दिल्ली चले गये और वहां चांदनी चौक में स्थित ''पंडित ब्रदर्स'' नामक फ़र्म में नौकरी करने लगे। आप अपने जीवन के उत्तरार्ध में पुनः लखनऊ वापस आकर दारूल शफ़ा में रहने लगे जहां आपका सन् 1989 में लगभग 64 वर्ष की आयु में निधन हो

गया।

पंडित ब्रिज नाथ शरगा बहुत ही ज्ञानी और विद्वान पुरूष थे और अधिकतर अपना समय विभिन्न विषयों की पुस्तकों को पढ़ने में व्यतीत करते थे जिसके कारण आपकी दोनों आंखों की रोशनी जाती रही और आप अपने जीवन के अन्तिम वर्षों में सूरदास हो गये थे। आपने अंग्रेज़ी में दो पुस्तकें महात्मा गांधी की जीवनी तथा स्वामी राम तीर्थ के व्यक्तित्व तथा कृतित्व पर लिखीं जो काफ़ी चर्चित रहीं। सन् 1952 में कांग्रेस पार्टी की सरकार द्वारा ज़मीनदारी की प्रथा को समाप्त कर देने के कारण आपको बहुत तगड़ा झटका लगा क्योंकि इससे आपकी आय का मूल स्रोत ही बन्द हो गया और आपको आर्थिक संकट झेलना पड़ा जिससे आपका स्वास्थ्य और बिगड़ गया। इस महान समाज सेवी का सन् 1958 में लगभग 74 वर्ष की आयु में अपनी खेत गली की पैतृक हवेली में स्वर्गवास हो गया। आपने जिस सेवा धर्म की भावना से अनेक सामाजिक कार्य किये वह सदा स्वर्ण अक्षरों में अंकित किये जायेंगे। जिनके उदाहरण अब मिलना सम्भव नहीं। हिन्दी के कवि मधु के शब्दों में :–

"आंख रोई जब किसी ने फूल को मसला
जब कोई चढ़ शिखर पर अन्त में फिसला
प्राण लेकिन खिलखिला कर हंस पड़े उस क्षण
जब ज़रा सा बीज भूतल चीर कर निकला"



एक महान द्रष्टा तथा सफल उद्यमी

पंडित जगदीश नारायण भान



प्रायः यह कहा जाता है कि समाज में हर मनुष्य बराबर है पर वास्तव में ऐसा है नहीं। कुछ व्यक्ति, असाधारण मनुष्य होतें है जो केवल अपने भाग्य के सहारे इस संसार में उन बुलन्दियों को स्पर्श करते है जहां तक पहुंचना कदाचित हर साधारण व्यक्ति के लिये सम्भव नहीं। वहीं कुछ व्यक्ति त्याग और तपस्या की भावना के साथ कठोर परिश्रम करके अपने को व्यापक समाज में प्रतिष्ठित करते है पर इस प्रकार मान–सम्मान और वैभव अर्जित करने में समय अधिक लगता है और अपना खून–पसीना बहाना पड़ता है पर इसमें जो आत्म–संतोष की भावना निहित होती है और उसका जो आनन्द अन्तर आत्मा को प्राप्त होता है उसको शब्दों में वर्णन करना सम्भव नहीं। यह वह अवस्था होती है जब प्रायः मनुष्य को परमानन्द की अनुभूति होती है और उसको असीम सुख प्राप्त होता है। इस प्रकार एक लक्ष्य को साधकर जो व्यक्ति पूरी निष्ठा के साथ कार्य करतें है वह निश्चित रूप से समाज में अपने लिये एक विशेष स्थान बनाने में सफल हो जाते है और सबके लिये पूज्यनीय हो जाते हैं उनकी गणना अतिविशिष्ट व्यक्तियों में होने लगती है तथा व्यापक समाज उनका आदर और सम्मान करने लगता है क्योंकि वह समाज को एक नयी दिशा देकर हर व्यक्ति के लिये प्रगति का मार्ग प्रशस्त करतें हैं और भावी पीढ़ी के लिये एक प्रेरणा का स्रोत बन जाते हैं। ऐसे ही एक बहुमुखी प्रतिभा के

धनी व्यक्ति पंडित जगदीश नारायण भान थे जिन्होनें अपना जीवन एक बहुत ही साधारण स्तर से आरम्भ किया और केवल अपने कठोर परिश्रम और सूझ–बूझ के बल पर अपने आप को कलकत्ते में एक बिलकुल नये वातावरण में एक सफल उद्यमी के रूप में स्थापित कर हर वयक्ति के लिये एक अदभुत उदाहरण प्रस्तुत कर सम्पूर्ण समाज के शिरोमणि बन गये।

पंडित जगदीश नारायण भान के पूर्वज पंडित जय राम भान मूल रूप से कश्मीर घाटी के श्रीनगर जनपद के हब्बा कदल मुहल्ले के निवासी थे जिनका जन्म उनके परिजनों के अनुसार सन् 1698 में एक मध्यमवर्गीय कश्मीरी पंडित परिवार में हुआ था। बाल्यवस्था में ही आपके सिर से आपके पिता का साया उठ गया इस नाते आपका लालन–पालन आपकी मां के संरक्षण में सम्पन्न हुआ जो बहुत ही धर्म निष्ठ और पूजा अर्चना में विश्वास करने वाली स्त्री थीं। आपकी मां वहां के एक ज्योतिषाचार्य की परम भक्त थीं। जिनका वह बहुत आदर और सम्मान करती थीं। एक दिन उन्होंने उन महान ज्योतिषाचार्य को अपने पुत्र जय राम भान की जन्म कुंडली दिखाई और उनसे अपने पुत्र के भविष्य के बारे में जानने की जिज्ञासा प्रकट की। ज्योतिषाचार्य ने कुण्डिली का गूढ़ अध्ययन करने के पश्चात कहा कि एक दिन तेरा यह पुत्र एक बहुत बड़ा व्यक्ति बनेगा और काफी धन अर्जित करेगा।

उन ज्योतिषाचार्य की इस भविष्यवाणी पर विश्वास करते हुए पंडित जय राम भान, अपने भाग्य को परखने के उद्देश्य से कश्मीर घाटी से निकल पड़े और उस समय के दुर्गम मार्गों से यात्रा करते हुए सन् (1722) के आस पास दिल्ली पहुंचे जहां उस समय मुगल सम्राट मोहम्मद शाह 'रंगीले' (1719–1749) का शासनकाल था। जो बहुत ही अय्याश किस्म का शासक था और हर समय हसीन और कमसिन स्त्रियों की संगत में रहना पसंद करता था।

पंडित जय राम भान मुग़ल राजधानी दिल्ली में आने के कुछ समय पश्चात लाल किले के मुख्य द्वार पर एक बड़ी बही तथा कलम–दवात

लेकर अपना आसन जमा कर बैठ गये और शाही महल में हर आने जाने वाले व्यक्ति का नाम और समय अपनी बही में लिखने लगे। एक दिन मुगल सम्राट का एक मुख्य दरबारी लाल किले के परिसर में कहीं गुम हो गया। जब काफ़ी खोजबीन करने के पश्चात भी सिपाहियों को उसका कहीं अता पता नहीं चला तो मुग़ल सम्राट को किसी ने सुझाव दिया कि इस कार्य के लिये पंडित जय राम भान से सम्पर्क साधा जाये शायद वह इस कठिन कार्य में हमारी सहायता कर सकें। तुरंन्त सम्राट के आदेश पर एक सिपाही को पंडित जय राम भान के पास भेजा गया और उनसे इस समस्या का समाधान करने के लिये आग्रह किया गया ताकि सम्राट की चिन्ता का किसी प्रकार निवारण हो सके। पंडित जय राम भान ने अपनी बही में लिखें हुए विभिन्न नामों का बड़ी बारीकी के साथ अवलोकन किया। फिर गम्भीर मुद्रा में एक लम्बी सांस छोड़ते हुए कहा कि यह दरबारी अभी लाल किले के बाहर नहीं गया है। और किले के भीतर ही कहीं छिपा हुआ है। उनके यह कहने पर शाही खुफ़िया विभाग के कर्मचारियों ने पुनः लाल किले के परिसर में खोजबीन आरम्भ की और उस दरबारी को खोज निकाला। मुगल सम्राट मोहम्मद शाह पंडित जय राम भान की बुद्धिमता से बहुत ही अधिक प्रभावित और प्रसन्न हुआ। और उनसे इस कार्य के उपलक्ष्य में उपहार मागने का आग्रह किया। पंडित जय राम भान ने बहुत ही सहज भाव से विनम्रतापूर्वक कहा कि जहांपनाह मुझे अपने लिये कुछ नहीं चाहिये पर मैं इतना अवश्य चाहता हूँ कि जो भी ब्राह्मण कश्मीर से यहां आये उसे 'खोजा' कहने के स्थान पर पंडित कहा जाये। उस समय तक दिल्ली में कश्मीरी पंडितों को 'खोजा' कहने का चलन था। मुगल सम्राट मोहम्मद शाह ने पंडित जय राम भान की इस प्रार्थना को तुरन्त स्वीकार करते हुए एक शाही आदेश निर्गत करने का हुक्म दिया कि आज के बाद से हर कश्मीरी ब्राह्मण को कश्मीरी पंडित के सम्बोधन से पुकारा जायेगा। पंडित जय राम भान का सम्पूर्ण कश्मीरी पंडित बिरादरी के लिये इस ऐतिहासिक योगदान को कभी भुलाया नहीं जा सकेगा।

पंडित जय राम भान के इस कार्य ने मुगल सम्राट मोहम्मद शाह को बहुत अधिक प्रभावित किया और उसने विचार किया कि यह व्यक्ति कितना अधिक गुणी और दूरदर्शी है जिसने अपने लिये कुछ न मांग कर अपनी पूरी कौम को गौरवान्वित किया है। इस व्यक्ति की सूझ–बूझ वाकई काबिले तारीफ है। मुगल सम्राट ने पंडित जय राम भान को उनकी योग्यता का आदर करते हुए उनको अपने दरबार में नियुक्त कर दिया और काफ़ी इनामात तथा इकरामात से नवाज़ा। कालान्तर में पंडित जय राम भान दिल्ली के निकट की किसी रियासत के राजा बना दिये गये।

राजा जय राम भान बहुत ही प्रतिभाशाली व्यक्ति थे जिन्होंने अपने सम्पूर्ण जीवन में बहुत ही निष्ठापूर्वक कार्य किया और अपने लिये समाज में एक प्रतिष्ठित स्थान बनाया। आपने कभी भी अपने आदर्शों और सिद्धातों से किसी प्रकार का कोई समझौता नहीं किया और सदैव सत्यं, शिव, सुन्दरम के मूलमंत्र पर विश्वास किया।

आपने अपने परिजनों के निवास के लिये दिल्ली के बाजार सीता राम मोहल्ले में एक भव्य हवेली का निर्माण कराया। आपने बहुत अधिक मान सम्मान पाया और इतना अधिक धन अर्जित किया कि आपकी अगली चार पीढ़ियां आपके पुत्र पंडित नारायण दास भान (1722–1782), आपके पौत्र पंडित भवानी दास भान (1746–1809) तथा उनके पुत्र पंडित जय कृष्ण दास भान (1791–1857) ने कोई कार्य करने की आवश्यक्ता नहीं समझी और पूरी मौजमस्ती के साथ आपकी कमाई पर ऐश करते हुए अपनी जिन्दगी दिल्ली में गुज़ार दी। राजा जय राम भान का निधन सन् 1760 में लगभग 62 वर्ष की आयु में अपनी बाज़ार सीताराम की हवेली में दिल्ली में हुआ।

पंडित जय कृष्ण दास भान सन् 1822 में अपने भाग्य की परीक्षा लेने के उद्देश्य से दक्षिण भारत के अमरावती नगर तक अवश्य गये और वहां 12 वर्ष कार्य भी किया पर सन् 1834 में वहां से दिल्ली वापस आने के पश्चात आपको फिर वहां नौकरी करने के लिये जाने को आपकी मां ने मना कर दिया। और दिल्ली में ही कोई नौकरी तलाश करने की सलाह

दी। आपने फिर दिल्ली में शाही परमिट विभाग में कार्य करना प्रारम्भ किया, और अपने जीवन के अन्तिम समय तक आप इसी विभाग में कार्य करते रहे। उस समय दिल्ली में मुगल सम्राट बहादुर शाह ज़फर (1837—1857) का शासन था। आपको सन् 1857 के गदर में किसी शोहदे ने गोली मार दी जिससे अकस्मात केवल 66 वर्ष की आयु में आपकी मृत्यु हो गयी।

पंडित जय कृष्ण दास भान के एकमात्र पुत्र पंडित जगत नारायण भान का जन्म सन् 1815 में दिल्ली के बाज़ार सीताराम मुहल्ले में स्थित अपनी पैतृक हवेली में हुआ था। जब आप केवल 11 महीने के थे तो आपकी मां का स्वर्गवास हो गया इस नाते आपका लालन पालन आपकी दादी की देख रेख में सम्पन्न हुआ। आप भी अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात शाही परमिट विभाग में नौकर हो गये थे। इस विभाग में कुछ वर्ष कार्य करने के उपरान्त आपको इस विभाग का सुपरिन्टेन्डेन्ट बना दिया गया था। आप अपने सेवा काल में कई ज़िलों में नियुक्त रहे और अन्त में रोहतक ज़िले की झझर तहसील के एक छोटे से क़स्बे बाउली से सन् 1868 में सेवा निवृत्त हुऐ। आपने वहां अपने कार्यालय के निकट अपने परिजनों के निवास के लिये एक आवास का निर्माण कराया था। आप वहां से फिर सन् 1879 में मथुरा ज़िले के माधोपुर कस्बे में रहने के लिये चले गये जहां आपके पिता का आवास था। आपकी वहां कुछ दिन रोगग्रस्त रहने के पश्चात 19 मार्च सन् 1879 को लगभग 64 वर्ष की आयु में मृत्यु हो गयी।

पंडित जगत नारायण भान को उर्दू तथा फ़ारसी भाषा में पूर्ण रूप से दक्षता प्राप्त थी। आप फ़ारसी भाषा के एक विद्वान शायर थे और आपने अपने परिवार का इतिहास फ़ारसी भाषा में छन्द बद्ध करके लिखा था। आप अपने शेर "जगत" उपनाम या तख़ल्लुस से कलम बन्द करते थे। आपके द्वारा उर्दू भाषा में क़लम बन्द किये गये कुछ निम्नलिखित शेर आपकी शैली तथा विचारों को प्रकट करने के लिये शब्दों के चयन का आभास कराते हैं जिसमें अपनी बात को कहने का एक विशेष अन्दाज़

अपनाया गया है। आप कुछ इस प्रकार फ़रमाते हैं :–

बदन बिजली कयामत कद परी का
तमाशा चश्में जादूगरी का
ज़बीं के ज़िक्र से काग़ज़ मुनव्वर
मुस्तफा दांत मोती जौहरी का
यह है चीने ज़बी या तेगे बिरियां
तबस्सुम है कि जादू सामरी का
परेशां दोस्त पर है उनका गेसू
यही बायस है मेरी अबतरी का"

पंडित जगत नारायण भान के दो विवाह हुऐ थे। आपकी पहली पत्नी काशो कश्मीर के एक पड्रू परिवार की लड़की थीं। आपकी दूसरी पत्नी परमेश्वरी एक हुक्कू परिवार की लड़की थीं। आपकी इन दोनों पत्नियों से कुल सात सन्तानें थीं जिनमें तीन पुत्र क्रमशः लक्ष्मी नारायण, स्वरूप नारायण और हृदय नारायण तथा चार पुत्रियां थीं।

पंडित जगत नारायण भान के ज्येष्ठ पुत्र लक्ष्मी नारायण भान अपने पूर्वजों की भांति भगवान श्री कृष्ण के परम भक्त थे। आप अधिकतर अपना समय पूर्ण भक्ति भाव के साथ पूजा–अर्चना में ही व्यतीत करते थे अतः आपने विवाह करना कुछ उचित नहीं समझा और जीवन भर अविवाहित रहे। आप स्वयं गाने के लिये भक्ति रस की कविताऐं लिखते थे और उनको फिर बड़ी ही श्रद्धापूर्वक गाते थे। आप उर्दू में भी "आजिज़" तख़ल्लुस से शायरी करते थे। आप अपनी शायरी की दुनिया में ही मस्त रहते थे और आपको किसी दूसरी चीज़ से कुछ लेना देना नहीं था। आप संसार में रहते हुऐ भी सांसारिक माया मोह से अपने को दूर रखते थे।

पंडित जगत नारायण भान के दूसरे पुत्र पंडित स्वरूप नारायण भान का जन्म सन् 1850 में दिल्ली के बाज़ार सीताराम मुहल्ले में स्थित अपनी पैतृक हवेली में हुआ था। आपकी उर्दू तथा अंग्रेज़ी भाषा की शिक्षा देहली कालेज में सम्पन्न हुई। आप अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात

दिल्ली में ही नमक विभाग में नौकर हो गये थे। आप फिर अपनी इस नौकरी से त्याग पत्र देकर माधोपुर चले गये और वहां लगभग एक वर्ष रहे। आप माधोपुर से एक अच्छी नौकरी पाने के उद्देश्य से रींवा रियासत के तत्कालीन दीवान पंडित नेतराम के नाम पंडित देवी प्रसाद बकाया का एक तगड़ा सिफ़ारिशी पत्र लेकर रीवां चले गये जहां आप तहसीलदार के पद पर नियुक्त कर दिये गये। रीवां प्रस्थान करने से पूर्व आपने माधोपुर में इस भान संयुक्त परिवार का मुखिया अपने अनुजभ्राता पंडित हृदय नारायण भान को बना दिया। आप अकेले रीवां रियासत में लगभग 30 वर्ष तक नौकरी करते रहे और वहां एक प्रथम श्रेणी के मजिस्ट्रेट बन कर सन् 1905 में सेवा से निवृत्त हुऐ। आपने अपने कठिन परिश्रम और अपनी ईमानदारी द्वारा रीवां रियासत में बहुत अधिक मान सम्मान पाया और काफ़ी धन अर्जित किया यद्यपि आप स्वभाव से तुनक मिजाज़ व्यक्ति थे पर कठिन समय में हर व्यक्ति की सहायता करने के लिये सदैव तत्पर रहते थे।

आपने सदैव सरल जीवन और उच्च विचार के मूल मंत्र को अपने जीवन में महत्व दिया और सत्य को आधार मान कर बिना किसी पक्षपात के निर्भीक होकर निर्णय दिये। आपको भारतीय व्यायाम पद्धति के प्रति विशेष प्रेम था और आप अपने शरीर को चुस्त–दुरूस्त रखने के लिये प्रतिदिन दण्ड और बैठक लगाते थे। आप कभी कभी मुगदर भी भांज लिया करते थे।

आपने अपने रीवां रियासत में प्रवास के दौरान वहां के एक अनुभवी तथा विद्वान पंडित जी से हिन्दी और संस्कृत भाषा का ज्ञान प्राप्त किया। आप उर्दू भाषा के शायर और हिन्दी के कवि थे। आप उर्दू में अपनी शायरी "आसी" तखल्लुस से और हिन्दी में अपनी कविताऐं "श्रृप" उपनाम से लिखते थे। आपकी उर्दू भाषा की शायरी का अनुमान उनके द्वारा कहे गये कुछ निम्नलिखित अशायर से लगाया जा सकता है। जिनमें उनकी भाषा की पाकीज़िगी की झलक साफ़ परिलक्षित होती है आप फ़रमाते हैं।

"साक़ी है बाग़ है अबरे बहार है
मयख्वार खुश है ख़ानाये ख़म्मार देखकर
ज़ख्मी हुआ था दिल निगाह से
सर भी झुका है हाथ में तलवार देखकर
तय होगी देखें किस तरह मुल्के राह
घबराता दिल है मंज़िले दुशवार देख कर
"आसी" हमें भरोसा रहीमी का उसकी
क्या था नहीं वह गुनाहगार देख कर"

आप एक महान रचनाधर्मी थे और आपने अनेक ग़ज़लें, रूबाईयां, नज़्में और मुसद्दस लिखे। आपका उर्दू का दीवान आपकी बीमारी के कारण प्रकाशित नहीं हो सका। आपने हिन्दी में भी अनेक भक्ति रस से ओत–प्रोत कविताऐं और गीत लिखे। जो "स्वरूप सागर" के रूप में प्रकाशित किये गये। आपकी हिन्दी की रचनाऐं अधिकतर कृष्ण भक्ति के ऊपर आधारित हैं जिनमें भगवान श्री कृष्ण के प्रति कवि ने अपने भावों को प्रकट किया है। उदाहरण के लिये आपका हिन्दी में रचित एक छन्द प्रस्तुत है।

"मुझे तुम रूप मनमोहन दिखा देते तो क्या होता
आनाये दिल के जला देते तो क्या होता
बजाते तान मुरली की हो जैसे कुजन में
वही गुड़ की मण्डी में बजा देते तो क्या होता
न पाया बृज में ढूंडा किया मैं द्वारिका काशी
दिल में रहने का बता देते तो क्या होता
दिया है प्रेम का प्याला बना है "श्रृप"
कहां है नन्द का लाला बता देते तो क्या होता"

पंडित स्वरूप नारायण भान का विवाह सन् 1874 के आस पास आगरा के प्रसिद्ध रईस और ज़मीनदार कुंवर श्याम प्रसाद मुन्शी की एक मात्र पुत्री लाडो रानी के साथ सम्पन्न हुआ था। आपने अपने विवाह के पश्चात आगरा के गुड़ की मण्डी मुहल्ले में एक हलब हवेली अपने

परिजनों के रहने के लिये निर्माण करायी थी। आपके पांच पुत्र क्रमशः शिव नारायण, राम नारायण, गौरी प्रसाद, प्रेम नारायण तथा त्रिभुवन नाथ और दो पुत्रियां तिप्पन तथा सिद्धेश्वरी थीं जिनमें तिप्पन का विवाह सन् 1897 में पंडित शिव सहाय वातल के साथ और सिद्धेश्वरी का विवाह भी सन् 1897 में राय बहादुर पंडित केदार नाथ उगरा के साथ सम्पन्न हुआ था।

पंडित स्वरूप नारायण भान अपने परिजनों में लाला जी के नाम से जाने जाते थे। यद्यपि आप एक कसरतिया व्यक्ति थे पर दो बार पक्षाघात का दौरा पड़ने के कारण उसका आपके स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा और आप काफ़ी टूट से गये। तीसरा पक्षाघात का दौरा आपके लिये प्राणघातक सिद्ध हुआ और जिसके कारण आपकी सन् 1914 के अक्टूबर माह में लगभग 64 वर्ष की आयु में अपनी गुड़ की मण्डी में स्थित हवेली में मृत्यु हो गयी। और आप एक भरा पूरा परिवार छोड़ कर इस संसार से सदा के लिये विदा हो गये।

पंडित स्वरूप नारायण भान के ज्येष्ठ पुत्र पंडित शिव नारायण भान का जंन्म सन् 1876 में आगरा के गुड़ की मण्ड़ी मुहल्ले में स्थित अपनी पैतृक हवेली में हुआ था। आपकी शिक्षा आगरा में ही सम्पन्न हुई जहां आगरा कालेज से आपने अपनी मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की। आप फिर आगरा से नौकरी की तलाश में जम्मू चले गये और वहां जम्मू–कश्मीर रियासत के शिक्षा विभाग में एक लिपिक के पद पर नियुक्त हो गये। आप फिर प्रोन्नति करके रियासत के शिक्षा विभाग में सुपरिन्टेन्डेन्ट बना दिये गये थे। आप छः माह जम्मू में और छः माह कश्मीर में रहते थे। आप सेवा निवृत्त हो जाने के पश्चात स्थायी रूप से जम्मू में रहने लगे थे जहां आपका पक्की ढक्की मुहल्ले में आवास था। आपकी जम्मू में ही सन् 1940 में लगभग 64 वर्ष की आयु में मृत्यु हो गयी। आपके भाई–बहन आपको भाई साहब कहते थे।

पंडित शिव नारायण भान ने दो विवाह किये थे। आपका प्रथम विवाह सन् 1899 के आस पास लाहौर के निवासी दीवान शिव नाथ कौल

की सुपुत्री शारिका शुरी के साथ सम्पन्न हुआ था। आपके इस पत्नी से दो पुत्र श्री नारायण और जगदीश नारायण तथा दो पुत्रियां कप्पो और पुखराज थी जिनमें कप्पो का विवाह पंडित द्वारिका नाथ कौल के साथ तथा पुखराज का विवाह धौलपुर रियासत के निवासी पंडित स्वरूप कृष्ण तिक्कू के साथ सन् 1932 में लाहौर में सम्पन्न हुआ था। पुखराज की 26 अप्रैल सन् 2002 को लगभग 90 वर्ष की आयु में कोलकाता में मृत्यु हो गयी।

पंडित शिव नारायण भान ने अपनी पहली पत्नी की मृत्यु के पश्चात अपना दूसरा विवाह सन 1911 के आस पास खड़गपुर के निवासी पंडित श्याम लाल कौल की पुत्री के साथ किया। आपको अपनी दूसरी पत्नी से आठ पुत्रियां उत्पन्न हुई। जिनमें से चार की बाल्यवस्था में ही मृत्यु हो गयी। केवल चार पुत्रियां मोहिनी, मानो, चन्द्रा और मुन्नी अधिक समय तक जीवित रहीं। सबसे छोटी पुत्री मुन्नी की तपेदिक हो जाने के कारण बाद में युवावस्था में मृत्यु हो गयी। मोहिनी का विवाह सन् 1939 में कानपुर के निवासी पंडित कैलास नाथ हुक्कू के साथ सम्पन्न हुआ। मानो का विवाह सन् 1943 में धौलपुर रियासत के निवासी पंडित स्वरूप किशोर शिवपुरी तथा चन्द्रा का विवाह पंडित बिशन नाथ वांचू के साथ सम्पन्न हुआ।

पंडित शिव नारायण भान भी अपने पिता तथा पितामह की तरह उर्दू के एक प्रतिष्ठित शायर थे। आप अपनी शायरी "अज़ीज़" तख़ल्लुस से करते थे। आपकी शायरी की कुछ पंक्तियां उदाहरण के लिये प्रस्तुत हैं

"क्या नस्र तुम्हारी दिलकशां है
और नज़्म तुम्हारी बे बहा है
क्या कहना तुम्हारी वाह हमदम
हर बात में एक नया मज़ा है
मज़मून रंगी अजीब बन्दिश
हर फ़िकरा तुम्हारा चुल बुला है

पंडित शिव नारायण भान के ज्येष्ठ पुत्र पंडित श्री नारायण भान का

जन्म सन् 1903 में हुआ था। आपका विवाह इन्दौर रियासत के निवासी पंडित काशी नाथ गंजू की सुपुत्री लक्ष्मी के साथ सम्पन्न हुआ था। आप अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात लाहौर में उत्तर पश्चिम रेलवे में नियुक्त हो गये थे आप देश का विभाजन होने से पूर्व लाहौर से अपने परिवार सहित इन्दौर जाकर वहीं बस गये थे। आपने वहां अपने रहने के लिये एक आवास निर्माण कराया और परिवार के जीवकोपार्जन के लिये आप वहां एक डिस्पेन्सरी चलाते थे। आप एक साधारण स्वभाव के व्यक्ति थे जिनको अच्छा खाना खाने का बेहद शौक़ था। आपको आईसक्रीम बहुत पसन्द थी और हर मेहमान का स्वागत आप उसको आईस्क्रीम खिलाकर करते थे। आपकी इन्दौर में लगभग 67 वर्ष की आयु में सन् 1970 में मृत्यु हो गयी। आपकी पत्नी श्रीमती लक्ष्मी रानी भान की बाद में कलकत्ते में एक कीर्तन पण्डाल में भयंकर आग लग जाने के कारण दुःखद मृत्यु हो गयी।

पंडित शिव नारायण भान के दूसरे पुत्र पंडित जगदीश नारायण भान का जन्म 7 अगस्त, सन् 1906 को कश्मीर के पहलगाम जिले में हुआ था जहां उस समय उनके पिता नियुक्त थे। पंडित जगदीश नारायण भान की प्रारम्भिक शिक्षा पहलगाम में ही सम्पन्न हुई जहां से आपने सन् 1923 के आस पास अपनी हायर सेकेन्ड्री की परीक्षा उत्तीर्ण की। आप फिर एक अच्छी नौकरी प्राप्त करने के उद्देश्य से कश्मीर घाटी से सीधे पश्चिम बंगाल प्रान्त के खड़गपुर जिले चले गये जहां उस समय आपके सबसे छोटे चाचा पंडित त्रिभुवन नाथ भान अध्यापन का कार्य कर रहे थे।

पंडित त्रिभुवन नाथ भान का जन्म सन् 1888 में आगरा में हुआ था। आप आगरा कालेज से एफ0ए0 करने के पश्चात वहांसे अपने माता–पिता की इच्छा के विरूद्ध खड़गपुर पलायन कर गये थे और बाद में कलकत्ता विश्वविद्यालय से एम0ए0 बी0टी0 करने के पश्चात खड़गपुर में एक रेलवे के स्कूल में अध्यापक हो गये थे। आपका विवाह जावरा रियासत के निवासी पंडित काशी नाथ दर की सुपुत्री जियोरानी के साथ सम्पन्न हुआ था। आप अपने परिजनों में बाबू के नाम से जाने जाते थे।

आपके दो अन्य भ्राता पंडित राम नारायण भान और पंडित प्रेम नारायण भान अपनी शिक्षा समाप्त हो जाने के पश्चात ग्वालियर रियासत के मुरार मुहल्ले में जाकर बस गये थे। आपके तीसरे भाई गोविन्द प्रसाद को आपके नाना पंडित श्याम प्रसाद मुन्शी ने गोद लेकर अपना दत्तक पुत्र बना लिया था। पंडित प्रेम नारायण भान ग्वालियर रियासत के महाराजा माधोराव सिंधिया (1886–1925) के शाही ख़जाने के हाकिम बना दिये गये थे। आपका विवाह लखनऊ के कश्मीरी मुहल्ले के निवासी तथा उर्दू के प्रसिद्ध शायर पंडित रतन नाथ दर "सरशार" की पौत्री के साथ सम्पन्न हुआ था।

पंडित जगदीश नारायण भान खड़गपुर आने के पश्चात अपने चाचा पंडित त्रिभुवन नाथ भान के साथ रहने लगे और वहां एक योरोपियन स्कूल में उर्दू भाषा को पढ़ाने का कार्य करने लगे। कुछ वर्ष अध्यापन का कार्य करने के पश्चात आप सन् 1926 के आसपास अपना भाग्य परखने के उद्देश्य से खड़गपुर से कलकत्ते चले गये जो उस समय देश का एक मुख्य उद्योग नगर था और ईस्ट इण्डिया कम्पनी की सन् 1911 तक राजधानी रह चुका था।

आपने कलकत्ता (कोलकाता) आने के पश्चात एक शेयर दलाल के रूप में धनुका एण्ड कम्पनी नामक एक निजी फ़र्म में नौकरी प्रारम्भ की जो शेयरों को ख़रीदने तथा बेचने का व्यवसाय करती थी। आपने इस फर्म में बड़ी निष्ठापूर्वक तथा कठोर परिश्रम के साथ कार्य किया और इसी फर्म में कार्य करते समय आपका परिचय जी0के0 खेमका से हो गया जो उसी फर्म में एक दलाल के रूप में कार्य करते थे।

पंडित जगदीश नारायण भान ने अपने कुशल व्यवहार तथा पारदर्शी कार्य प्रणाली के कारण बहुत ही शीघ्र कलकत्ते के प्रमुख उद्योगपतियों से अपने मधुर सम्बन्ध स्थापित कर लिये। आपने फिर धीरे–धीरे कठोर परिश्रम तथा अपनी देनदारी में पूरी ईमानदारी बरतने के कारण वहां के प्रतिष्ठित उद्योग घरानों से भी अपने अच्छे सम्बन्ध स्थापित कर लिये। जो आपकी कार्य करने की क्षमता और लगन से बहुत अधिक प्रभावित थे।

चूंकि आप बहुत ही साधारण स्वभाव के तथा अपनी बात के पक्के व्यक्ति थे और बिना किसी लाग–लपट के दो टूक शब्दों में उत्तर देते थे इस नाते सब आपका आदर और सम्मान करते थे।

पंडित जगदीश नारायण भान और जी0के0 खेमका कुछ वर्ष एक साथ कार्य करने और एक दूसरे को भलि भांति समझने के पश्चात आपस में घनिष्ठ मित्र बन गये और इन दोनों व्यक्तियों ने मिल कर कोई बड़ा व्यवसाय करने की योजना बनाई ताकि अधिक धन अर्जित किया जा सके। इसी बीच पंडित जगदीश नारायण भान की अकस्मात जोश राजमल से भेंट हो गयी जो उस समय पंजाब बैंक के अध्यक्ष थे। उनसे मित्रता के कारण कुछ वर्ष पश्चात पंडित जगदीश नारायण भान पंजाब बैंक के प्रबन्धन मण्डल के एक निदेशक बना दिये गये। पंडित जगदीश नारायण भान ने फिर अपने जीवन में कभी पीछे मुड़ कर नहीं देखा।

पंजाब बैंक से वित्तीय सहायता उपलब्ध होने के पश्चात पंडित जगदीश नारायण भान तथा जी0के0 खेमका ने मिलकर एक निजी फर्म जी0के0 खेमका एण्ड कम्पनी के नाम से स्थापित की जिसमें पंडित जगदीश नारायण भान बराबर के साझीदार थे। इसी मध्य पंडित जगदीश नारायण भान के अपने व्यवसाय के द्वारा नेपाल के राजघराने के राणा परिवार से मधुर सम्बन्ध स्थापित हो गये और आपकी किस्मत के द्वार खुल गये। आप बहुत ही शीघ्र कलकत्ते नगर के एक गणमान्य व्यक्ति बन गये और आपकी अभूतपूर्व सफलता का हर ओर गुणगान होने लगा। आपने फिर ताबड़ तोड़ कई निजी फ़र्म्स और कम्पनियां स्थापित कीं जैसे निक्को इन्सुलेटेड, केबिल कम्पनी ऑफ़ इण्डिया लि0, हिन्दुस्तान वायर एण्ड मेटल प्रोडक्ट्स लिमिटेड, इण्डियन शिपिंग कम्पनी लिमिटेड, इत्यादि।

पंडित जगदीश नारायण भान अपने समय के एक महान द्रष्टा थे। आप बहुमुखी प्रतिभा के धनी व्यक्ति थे। आप सारे भान परिवार के एक महा नायक थे और परिवार का हर सदस्य आपको बड़ी श्रद्धा के साथ नमन करता था। आपको अपने पिता या पितामह की तरह उर्दू की शेर शायरी से कोई लगाव नहीं था। यद्यपि आप उर्दू भाषा के अध्यापन का

कार्य कर चुके थे। आपके व्यवसाय का मुख्य क्षेत्र रोलिंग मिल्स और जहाजरानी था। निक्को आपकी कर्मठता और तपस्या की जीती जागती मिसाल है जिसको आपने अपने खून और पसीने से सींच कर इस मुकाम तक पहुंचाया। जो आपकी कार्य प्रणाली का एक प्रतीक चिन्ह है। आपने धन और वैभव दोनों समान मात्रा में अर्जित किया और अपने परिजनों के निवास के लिये अलीपुर में 14/1 बरदवान रोड पर एक भव्य बंगले का निर्माण कराया।

आपने अपने व्यवसाय के अतिरिक्त कलकत्ते तथा देश के अन्य स्थानों में अनेक सामाजिक कार्य किये और असहाय व्यक्तियों की वित्तीय सहायता की। आपने अनेक प्रतिभावान छात्रों को शिक्षा के लिये विदेश भेजा और अनेक विधवाओं को आर्थिक सहायता प्रदान की। आपको अधिकतर लोग श्रद्धापूर्वक प्रेमभाव से ''पंडित जी'' कहते थे। जिनके लिये आप एक देवता के समान थे।

आप अपनी मां श्रीमती शारिकाशुरी भान से बहुत अधिक प्रेम करते थे। जिनकी युवावस्था में तपेदिक हो जाने के कारण मृत्यु हो गयी थी। आपने उनकी मधुर स्मृति को संयोज रखने के उद्देश्य से कलकत्ते में उनके नाम से एक धमार्थ ट्रस्ट की स्थापना की जिसके माध्यम से आपने निर्धन क्षय रोगियों के उचित उपचार के लिये एक टी0बी0 अस्पताल की स्थापना की। इस अस्पताल का प्रबन्ध अब प्रदेश सरकार ने अपने हाथ में ले लिया है।

पंडित जगदीश नारायण भान ने आर्थिक रूप से कमज़ोर अनेक परिवारों की कन्याओं के विवाह का खर्च स्वयं वहन किया और उनको समाज में उचित सम्मानजनक स्थान दिलाने में सहायता की। ताकि वह गर्व के साथ अपना जीवन निर्वाह कर सकें। आपने कलकत्ते की कश्मीर सभा की स्थापना में भी काफ़ी महत्वपूर्ण भूमिका निभायी आपने बैलूर में स्थित राम कृष्ण मिशन के अस्पताल के चौमुखी विकास के लिये भी आर्थिक सहायता दी और निरन्तर उसको रोगियों की उचित देखभाल के लिये वित्तीय सहायता देते रहे। ताकि वह बिना किसी व्यवधान और

आर्थिक संकट के समाज की सेवा में संलग्न रहे। आपने बिहाला बालानन्द अस्पताल की भी स्थापना की और उड़ीसा राज्य में बड़ा पेदा में रोगियों के उपचार के लिये एक डिस्पेन्सरी स्थापित की। आप भारतीय जहाजरानी के एजेन्ट लाएनल एडवर्ड लि0 के प्रबन्ध निदेशक थे।

अपने व्यवसाय और इन सब धमार्थ तथा सामाजिक कार्यों में अत्यधिक व्यस्त रहने के कारण आपने काफ़ी विलम्ब से विवाह किया। आपने लगभग 46 वर्ष की आयु में सन् 1952 में पटियाला रियासत के निवासी पंडित रूप लाल राज़दान की पुत्री कान्ता के साथ अपना विवाह किया जो अपने 10 भाई बहनों में सबसे छोटी हैं और आपसे आयु में लगभग 18 वर्ष कम हैं। आपकी अपनी पत्नी से केवल दो पुत्रियां मंजरी और अन्जलि उत्पन्न हुईं। मंजरी का विवाह लखनऊ के बी–125, निराला नगर के निवासी पंडित परमेश्वर नाथ कौल और श्रीमती रूप कौल के सुपुत्र राजीव के साथ सम्पन्न हुआ है। अन्जलि का विवाह एक हज़ारी परिवार में हुआ था पर कुछ वर्ष पश्चात विवाह विच्छेद हो गया। आज कल अन्जलि अपनी पुत्री के साथ कोलकाता में रहती है।

पंडित जगदीश नारायण भान कोलकाता के प्रमुख उद्योगपतियों में से एक थे। जो अपने जीवन काल में ही हर एक के लिये प्रेरणा का स्रोत बन गये थे। आप बहुत ही व्यवहार कुशल व्यक्ति थे और आपने अपने पावों को कभी भी ज़मीन से डगमगाने नहीं दिया आप बहुत ही साधारण स्वभाव के व्यक्ति थे और अपना कार्य अधिकतर स्वयं ही करते थे। आप घर में धोती कुरता पहनते थे और बहुत ही विनम्र रूप से वार्तालाप करते थे। आप जब युवा थे तो आप पर महात्मा गांधी के अछूत उद्धार कार्यक्रम का बहुत अधिक प्रभाव पड़ा और आपने उसमें जम कर भाग लिया आपने अपने कार्यों द्वारा व्यापक समाज में अपनी एक अलग पहचान बनाई और नये माप दण्ड स्थापित किये आप मानवता की सेवा करना सबसे उत्तम धर्म समझते थे क्योंकि इसमें मनुष्य को जो आत्म सुख प्राप्त होता है उसका शब्दों में वर्णन करना कदाचित सम्भव नहीं। आपकी कुछ दिन अस्वस्थ रहने के पश्चात 31 मार्च 1977 को लगभग 71 वर्ष की आयु में

कोलकाता में 14/1 वरदवान रोड पर स्थित अपने आवास में मृत्यु हो गयी। अब आपकी पत्नी श्रीमती कान्ता भान आपके व्यापारिक सम्राज्य का प्रबन्ध करती हैं। पंडित जगदीश नारायण भान ने जो आदर्श और सिद्धांत अपने जीवन काल में प्रस्तुत किये और प्रगति के जिस शिखर को छुआ वह सदैव बिरादरी के सदस्यों के लिये एक प्रेरणा का स्रोत रहेगा। आपकी जीवन गाथा सदा स्वर्ण अक्षरों में अंकित की जायेगी। हिन्दी के प्रखर कवि ओम आचार्य के निम्नलिखित शब्द कुछ इसी जीवन दर्शन को इन्गित करते हैं :–

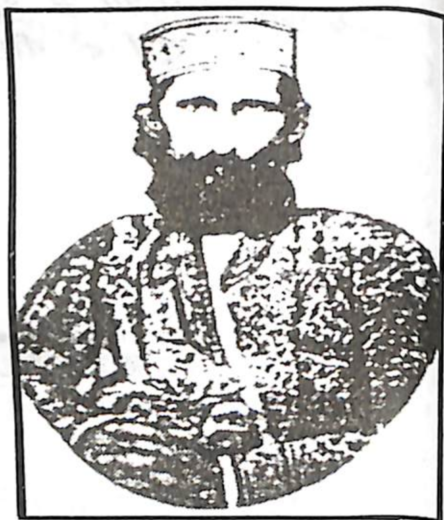
"निशा में सूरजमुखी कैसे खिलेगी
सूर्य के पीछे सदा अचला चलेगी
ज्येष्ठ के मध्य पथ पर जो है पंथी
चन्द्रिका से शान्ति उसको क्या मिलेगी"



एक प्रतिभासम्पन्न तथा गुणी अधिकारी

पंडित दया निधान गंजू

"इशरत"



मुग़ल सम्राट औरंगजेब के पश्चात भारत में मुग़ल साम्राज्य का पतन प्रारम्भ हुआ जो मुहम्मद शाह रंगीले (1719–1748) के शासन काल में और अधिक तीव्र गति पकड़ गया क्योंकि वह बहुत ही अय्याश किस्म का शासक था जो राजपाट देखने के स्थान पर अपना अधिकतर समय हसीन औरतों के आगोश में व्यतीत करता था। कुछ पुस्तकों में लिखा गया है कि उसके दरबार में लगभग 200 नग्न तथा उन्मुक्त कमसिन नृत्यांगनाऐं सदैव उपस्थित रहती थीं ताकि बिना समय बर्बाद किये हुए वह अपनी इच्छा के अनुसार उनके कामुक यौवन का भरपूर आनन्द ले सके। उसका उत्तराधिकारी मुगल सम्राट अहमद शाह (1748–1754) भी उसी की भांति एक निकम्मा शासक था। जिसका देश के विभिन्न सूबों पर नाममात्र का नियंत्रण रह गया था। उसके इस ढुलमुल शासन का लाभ उठाते हुए विभिन्न सूबों के सूबेदारों ने उसके विरुद्ध षडयंत्र रचने प्रारम्भ कर दिये और कुछ ने अपने को एक प्रकार से स्वतंत्र भी घोषित कर दिया।

इस प्रकार की अराजकता और उहापोह की स्थिति का लाभ उठाते

हुऐ कश्मीर के तत्कालीन नायब सूबेदार अहमद खां जो वहां के सूबेदार से कुछ खुन्दक रखता था ने अफ़गानिस्तान के शासक अहमद शाह अब्दाली को निमंत्रण भेजा कि वह इस सुअवसर का लाभ उठाते हुऐ कश्मीर पर आक्रमण करके उसे अपने राज का एक अंग बना लें ताकि वहां मुग़ल सम्राट द्वारा नियुक्त किये गये सूबेदार को उचित सबक सिखाया जा सके। इसी व्यक्तिगत द्वेष के कारण कश्मीर पर सन् 1753 में पठानों का शासन हो गया और अहमदशाह अब्दाली ने अपने को अहमद शाह दुर्रानी के नाम से कश्मीर का शासक घोषित कर दिया।

कश्मीर में पठानों का शासन स्थापित होने के पश्चात वहां के सूबेदारों ने वहां के मूल निवासी कश्मीरी पंडितों पर विभिन्न अत्याचार करने प्रारम्भ कर दिये और उनको इस्लाम धर्म का अनुयायी बनाने के लिये अमानुषिक यातनाऐं दी जाने लगी जिसके कारण बहुत बड़ी संख्या में कश्मीर घाटी से अपने धर्म की रक्षा के लिये कश्मीरी पंडितों का पलायन प्रारम्भ हुआ। चूंकि उस समय तक उस दुर्गम पहाड़ी क्षेत्र में न तो आवागमन के अधिक साधन थे और न ही कोई विशेष यातायात व्यवस्था विकसित हो पाई थी अतः यह पलायन अधिकतर घोड़ो और बैलगाड़ियों पर बारहमुला तथा रावलपिंडी होते हुए उत्तरी भारत के विभिन्न क्षेत्रों में हुआ जो उस समय तक भारत से कश्मीर आने जाने का मुख्य मार्ग था। उस समय इस यात्रा को तय करने में कई माह का समय लग जाता था क्योंकि मार्ग में कई स्थानों पर विश्राम करना पड़ता था। और बहुत अधिक कठिनाई उठानी पड़ती थी।

कश्मीर घाटी से पठानों के शासनकाल में पलायन करने वाले कश्मीरी पंडितों में एक थे पंडित माहताब राय गंजू जो सन् 1810 के आसपास कश्मीर घाटी से दिल्ली में आकर बाज़ार सीताराम में बसे पर दिल्ली में अंग्रेज़ों के बड़ते हुए प्रभाव से उन्होंने कुछ यह अनुभव किया कि कदाचित इस वातावरण और व्यवस्था में उनके लिये अपने परिवार के जीवकोपार्जन के लिए सन साधन जुटाना सम्भव नहीं हो सकेगा अतः उन्हें किसी अन्य रियासत में अपने भाग्य की परीक्षा करनी चाहिये।

उस समय जयपुर रियासत के शासक माहराजा सिवाय राम सिंह द्वितीय अपने दयालु स्वभाव तथा आगन्तुकों का स्वागत–सत्कार करने के लिये प्रसिद्ध थे वे कुशल, अनुभवी तथा गुणी व्यक्तियों को अपने दरबार में तुरन्त नियुक्त करते थे और उनका आदर और सम्मान करते थे। उनके इन विशेष गुणों से प्रभावित होकर पंडित माहताब राय गंजू अपने परिवार सहित दिल्ली से जयपुर रियासत चले गये और वहां चौड़ा रास्ते पर स्थित एक हवेली में अपने परिजनों के साथ रहने लगे। आपको यहां सन् 1824 में एक पुत्र रत्न प्राप्त हुआ जिसका नाम आपने प्रभु की कृपा मान कर दयानिधान रख दिया।

उस समय रियासतों में सरकारी काम–काज अधिकतर उर्दू तथा फारसी भाषा में सम्पादित किया जाता था और इस नाते इन्हीं भाषाओं की उचित शिक्षा देने की व्यवस्था होती थी। अंग्रेज़ी शिक्षा प्रणाली जब तक कहीं भी अस्तित्व में नहीं आयी थी। पंडित दया निधान गंजू की भी परम्परागत शिक्षा इसी क्रम में कुशल तथा अनुभवी मौलवियों के संरक्षण में जयपुर में एक मकतब में हुई। आप अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात एक अच्छी नौकरी की खोज में जयपुर रियासत से लाहौर चले गये जहां बहुत बड़ी संख्या में उस समय कश्मीरी पंडित रहते थे और आपका ससुराल भी था।

सन् 1849 के फरवरी माह में अंग्रेज़ों ने पंजाब राज के अन्तिम सिख शासक माहराजा दिलीप सिंह को राज सिंहासन से उतार कर और उनसे बहुमूल्य कोहिनूर हीरा अपने कब्ज़े में लेकर उनको फौज के पहरे में इंग्लैण्ड के बरमिंग्घम नगर भेज दिया और पूरे पंजाब राज को ईस्ट इण्डिया कम्पनी के आधीन ले लिया और उस पर शासन करने के लिये अपने फौजी अधिकारी नियुक्त कर दिये। इसी क्रम में अंग्रेज़ों ने कर्नल एस0ए0 ऐबट को होशियारपुर का कमिश्नर नियुक्त कर दिया।

पंडित दया निधान गंजू अपने प्रयासों से कर्नल ऐबट द्वारा होशियारपुर की दीवानी अदालत के नाज़िर नियुक्त कर दिये गये। पंडित दया निधान गंजू ने इस छोटे पद पर बड़ी ही निष्ठा तथा लगन के साथ कार्य किया

जिससे प्रसन्न होकर कर्नल ऐबट ने आपको कुछ वर्ष पश्चात सन् 1851 के आस पास होशियारपुर की दीवानी अदालत का पदोन्नति करके शरिस्तेदार बना दिया। आप केवल अपनी कार्यकुशलता और ईमानदारी के बल पर सन् 1853 तक कर्नल ऐबट के मुख्य विश्वास पात्र बन गये जिसने आपके कार्य करने की क्षमता से प्रभावित होकर आपके प्रमाण पत्र में लिखा "कि आप एक अति प्रतिभा सम्पन्न अधिकारी है जिन्हें अपने कार्य का पूर्ण ज्ञान है और उसमें दक्षता प्राप्त है। मैं आपके कार्य से बहुत अधिक संतुष्ट हूं और प्रभावित हूं।"

14 मार्च सन 1856 को अंग्रेज़ों ने अवध के अन्तिम शासक नवाब वाजिद अली शाह (1847–1856) को राजसिंहासन से उतार कर सेना के कड़े पहरे में कलकत्ता के फोर्ट विलियम्स में नज़रबन्द कर दिया और अवध के सम्पूर्ण क्षेत्र को ईस्ट इण्डिया कम्पनी के आधीन कर दिया उस समय लखनऊ नगर की जनसंख्या बहुत अधिक नहीं थी और मुख्य नगर मोहान रोड और चौक के मध्य लगभग 2 किलोमीटर के क्षेत्रफल में आबाद था और बाक़ी हर तरफ़ सुन्दर तथा भव्य बाग़–बाग़ीचे हुआ करते थे इसी कारण विदेशी पर्यटक अपने संस्मरणों में इस नगर की सुन्दरता से प्रभावित होकर इसको पूर्व का पेरिस लिखा करते थे।

अवध में नवाबी शासन समाप्त होने के पश्चात अंग्रेज़ों ने कर्नल एस0ए0 ऐबट को पंजाब प्रान्त के होशियारपुर जिले से स्थानान्तरित करके लखनऊ का कमिश्नर बना दिया कर्नल ऐबट ने अपनी सहायता के लिये पंडित दया निधान गंजू को होशियारपुर से लखनऊ बुला लिया क्योंकि कर्नल ऐबट को पंडित दया निधान गंजू की कार्य क्षमता पर पूर्ण विश्वास था और वह अपने निष्पक्ष व्यवहार के कारण कर्नल ऐबट के लिये अति विश्वसनीय व्यक्ति बन चुके थे।

पंडित दया निधान गंजू लखनऊ आने के पश्चात कश्मीरी मुहल्ले में रहने लगे जो उस समय तक कश्मीरी पंडितों का एक प्रमुख गढ़ था और जहां नगर के अनेक रईसों और उमराओ की भव्य हवेलियां हुआ करती थीं। पंडित दयानिधान गंजू जिस हवेली में रहते थे वह बाद में

"गंजू वालों का शादीखाना" के नाम से प्रसिद्ध हुई और जहां कश्मीरी पंडितों की बाद में अनेक ऐतिहासिक बैठकें सम्पन्न हुई और जो काफी लम्बे समय तक लखनऊ में कश्मीरी पंडितों की गतिविधियों का मुख्य केन्द्र बनी रही यह ऐतिहासिक हवेली सन् 1925 के आस पास उचित संरक्षण के अभाव में ध्वस्त होकर एक खण्डर में परिवर्तित हो गयी।

अंग्रेज़ों ने अवध का शासन तंत्र अपने हाथों में लेने के पश्चात दीवानी और फौजदारी के मुकदमों को निपटाने के लिये लखनऊ में चीफ़ जुडीशियल कमिंश्नर और चीफ़ फ़ाईनेशियल कमिश्नर की नियुक्ति की जो उस समय सबसे बड़ी अदालत हुआ करती थी क्योंकि तब तक भारत में उच्च न्यायालय की कोई भी पीठ नहीं गठित हुई थी।

नवाब वाजिद अली शाह के कलकत्ता में नज़र बन्द होने के पश्चात सन् 1857 में बेगम हज़रत महल के नेतृत्व में कुछ शाही फौज की टुकड़ियों ने अंग्रेज़ों के विरूद्ध विद्रोह कर दिया और नगर के कई प्रमुख स्थानों पर अंग्रेज़ों की सेनाओं और शाही फौजों के मध्य जम कर संघर्ष हुआ जिसके कारण नगर में अराजकता और भय का वातावरण बना और अनेक नगरवासी लखनऊ से अन्य सुरक्षित स्थानों को पलायन कर गये। इस उहापोह की स्थिति में पंडित दया निधान गंजू ने बड़े विवेक के साथ दक्षता पूर्वक अपने कार्य को सम्पादित किया और नगर में कानून-व्यवस्था बहाल करने में एक बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभायी और अनेक उच्च अधिकारियों के जीवन व सम्पत्ति की रक्षा की जिससे प्रभावित और प्रसन्न होकर अंग्रेज़ों ने आपको लखनऊ जिले का तहसीलदार बना दिया यद्यपि उस समय तक तहसीलदार का पद कोई विशेष महत्व का नहीं समझा जाता था और न ही उसके अधिकारों को परिभाषित ही किया गया था पर अंग्रेज़ों ने पंडित दया निधान गंजू को कुछ विशेष अधिकार दे रखे थे और वह एक प्रथम श्रेणी के मजिस्ट्रेट के समकक्ष अधिकारी माने जाते थे और फौजदारी तथा दीवानी के मुकदमों की सुनवाई कर उन पर निर्णय देते थे जो बाध्य होते थे। इस नाते सन् 1857 के गदर में पंडित दया निधान गंजू एक साहसी एवं कर्तव्यपरायण अधिकारी के रूप में तत्कालीन शासन तंत्र

में अपना एक विशेष स्थान बनाने में सफल हुऐ और इतिहास का एक अंग बन गये। अंग्रेज़ों ने आपको काफी मान सम्मान दिया और आप कालान्तर में लखनऊ नगर के एक प्रमुख रईस बन गये।

सन् 1857 के ग़दर के पश्चात अंग्रेज़ों ने नवाब वाजिद अली शाह और उनके सम्बन्धी तथा अनेक अन्य शाही नवाबों को शत्रु घोषित कर उनकी सम्पत्तियां जब्त कर लीं और अपने अधिकार में ले ली। जब 1 जनवरी सन् 1858 को ब्रिटिश पालिर्यामेन्ट द्वारा तत्कालीन ब्रिटेन की माहरानी विक्टोरिया को भारत की सम्राज्ञी घोषित किया गया तो नवाबों की इन जब्त की गयी सम्पत्तियों के निस्तारण करने तथा उनके उचित वारिस घोषित करने की एक वृहद योजना बनाई गयी जिसके क्रियान्वयन का सम्पूर्ण अधिकार पंडित दया निधान गंजू को दिया गया जो बहुत ही महत्वपूर्ण और कठिन कार्य था जिसमें सारी सम्पत्तियों का राजस्व के लिये रिकार्ड तैयार करना था और दस्तावेज़ों तथा अभिलेखों में उनके स्वामियों का नाम अंकित करना था। क्योंकि नवाबी शासन काल में इस प्रकार से सम्पत्तियों का लेखा जोखा रखने की कोई व्यवस्था नहीं थी। पंडित दया निधान गंजू ने यह ऐतिहासिक कार्य बहुत ही निष्ठापूर्वक तथा लगन के साथ सम्पादित किया जो स्वयं उनकी क्षमता तथा कार्य करने की कुशलता को दर्शाता है। आपने उस समय के उपलब्ध सीमित साधनों में पूरे लखनऊ नगर का मान चित्र तैयार कराया और उसमें विभिन्न सम्पत्तियों तथा भूखण्डों के स्वामियों का ब्यौरा अंकित किया जो अब सन् 1862 का "बन्दोबस्ते अव्वल" के नाम से जाना जाता है और जिसके आधार पर न्यायालयों में जायदाद से सम्बंधित मुकदमों का निस्तारण होता है क्योंकि तब से लेकर आज तक लगभग 140 वर्षों में किसी ने भी इस प्रकार का कार्य पुनः प्रारम्भ करने की हिम्मत नहीं की। पंडित दया निधान गंजू के इस महत्वपूर्ण योगदान को कभी भी भुलाया नहीं जा सकता।

आपके कार्य से प्रसन्न होकर लखनऊ के तत्कालीन कमिश्नर कर्नल एस0ए0 ऐबट ने 17 मार्च सन् 1863 को आपके बारे में कुछ इस

प्रकार लिखा "पंडित दया निधान गंजू एक प्रथम श्रेणी के ज्यूडिशियल आफ़िसर हैं और मैं आपके कार्य से पूर्ण रूप से संतुष्ट हूं और मेरे विचार से आप एक्सट्रा ऐस्सिटेन्ट के पद के लिये पूरी योग्यता रखते हैं। आपकी ईमानदारी और निष्पक्ष कार्य करने की शैली पर कभी भी किसी व्यक्ति को कोई सन्देह नहीं हुआ। मैं आपके उज्जवल भविष्य की मंगल कामना करता हूं।"

कर्नल ऐबट ने भारत से लन्दन जाने के पश्चात पुनः 1 नवम्बर सन् 1865 को पंडित दया निधान गंजू की प्रशंसा करते हुए लिखा "कि आपकी कार्य शैली और कुशल व्यवहार का ही प्रभाव था कि लखनऊ से लन्दन के लिये प्रस्थान करते समय अपार जन समूह ने एकत्रित होकर मुझे भाव भीनी विदायी दी वरन् कदाचित यह सम्भव नहीं हो पाता यदि मेरे अधिकार क्षेत्र में होता तो मैं आपको अतिरिक्त सहायक कमिश्नर के पद पर नियुक्त कर देता।"

पंडित दया निधान गंजू के बारे में लगभग यही उदगार तत्कालीन लखनऊ के चीफ फाईनेन्शियल कमिश्नर एल0 बैरो ने भी प्रकट किये पर अतिरिक्त सहायक कमिश्नर के पद के लिये उस समय अंग्रेज़ी भाषा के ज्ञान का होना आवश्यक था और पंडित दया निधान गंजू केवल उर्दू तथा फ़ारसी भाषा में ही निपुण थे इस कारण अंग्रेज़ उच्च अधिकारी चाहते हुए भी पंडित दया निधान गंजू को अतिरिक्त सहायक कमिश्नर के पद पर नहीं नियुक्त करा सके।

जब सन् 1866 में भारत के तत्कालीन वाईसराय और गर्वनर जनरल का लखनऊ आगमन हुआ तो उनके स्वागत और उनके ठहरने की उचित व्यवस्था का भार पंडित दया निधान गंजू को सौंपा गया जिसे आपने बड़ी ही कुशलतापूर्वक वहन किया जिससे प्रसन्न होकर प्रदेश के तत्कालीन चीफ़ कमिश्नर के सचिव एफ़ क्यूरी ने 24 नवम्बर सन् 1867 को आपको संदेश दिया कि वाईसराय आपके द्वारा उनके स्वागत के लिये लखनऊ में किये गये प्रबन्धों से बहुत अधिक संतुष्ट हैं और जो आदर और सत्कार उनका नगर में किया गया उससे बहुत अधिक प्रसन्न है।

इससे पूर्व 2 नवम्बर सन् 1867 को लखनऊ के तत्कालीन डिप्टी कमिश्नर जे0 डब्ल्यू0 क्यूईन्टन ने आपकी कार्य करने की शैली से प्रभावित होकर आपकी सराहना करते हुए लिखा कि ''मैं आपको एक बहुत ही चुस्त और क्रियाशील अधिकारी समझता हूं। जिसकी ईमानदारी पर कभी भी सन्देह नहीं किया जा सकता और जो वादों का निपटारा बड़ी ही निष्ठापूर्वक और निष्पक्ष होकर करता है और जिसने बहुत कम समय में लखनऊ जनपद के लगभग आधे वाद–विवादों का निपटारा कर दिया है।''

पंडित दया निधान गंजू ने सन् 1873 में अपनी भव्य हवेली में स्वामी दयानन्द सरस्वती को आमंत्रित किया जिन्होंने मुहल्ले के कश्मीरी पंडितों की एक आम सभा को वहां सम्बोधित किया और हिन्दू दर्शन और हिन्दू समाज में व्याप्त कुरीतियों पर विस्तार से प्रकाश डाला जिस कार्य की उस समय कश्मीरी पंडितों द्वारा भूरि–भूरि प्रशंसा की गई। इस कार्यक्रम के लगभग 3 वर्ष पश्चात सन् 1876 में स्वामी दयानन्द सरस्वती ने हिन्दू समाज में व्यापक सुधार लाने के लिये लाहौर में आर्य समाज नामक संगठन की स्थापना की।

सन् 1876 में ब्रिटेन के प्रिंस ऑफ वेल्स ऐडवर्ड सप्तम लखनऊ पधारे। उनके सम्मान में आयोजित विभिन्न कार्यक्रमों का भार पंडित दया निधान गंजू को दिया गया कि वह उनका उचित प्रबंध करें जिससे शाही मेहमान को किसी भी प्रकार की कोई असुविधा न हो। आपने यह जिम्मेदारी बहुत ही दक्षता पूर्वक निभायी और शाही अतिथि का इतने भव्य रूप से स्वागत किया कि वह नगरवासियों के लिये एक यादगार बन कर रह गया। आपको इस अभूतपूर्व कार्य के लिये तत्कालीन ब्रिटेन की माहरानी विक्टोरिया ने आपकी सराहना करते हुए आपको एक प्रशस्ति पत्र भेजा और आपको भारत सरकार ने एक सरटिफिकेट ऑफ मेरिट भेंट कर अलंकृत किया और आपको भारत सरकार द्वारा सम्मान में एक खिलत प्रदान की गयी।

पंडित दया निधान गंजू 55 वर्ष की आयु हो जाने पर सन् 1879 में

सरकारी नौकरी से सेवानिवृत्त हुऐ। आप फिर अपना समय अधिकतर शेर–शायरी में व्यतीत करने लगे। लगभग 2 वर्ष पश्चात सन् 1881 में लगभग 57 वर्ष की आयु में आपका निधन हो गया।

पंडित दया निधान गंजू को उर्दू तथा फ़ारसी की शेर–शायरी से बेहद लगाव था। आप काफ़ी कम आयु से ही इन दोनों भाषाओं में शेर कलम बन्द करने लगे थे। आप अपनी शायरी इशरत तखल्लुस से करते थे। आपके कुछ अशायर बहारे गुलशने कश्मीर में भी प्रकाशित हुए हैं। चूंकि आप उर्दू तथा फारसी भाषा के विद्वान थे अतः आप अपनी शायरी में बहुत ही अलंकृत और परिमार्जित भाषा का ही अधिकतर प्रयोग करते थे और शेर कहने में इस बात पर विशेष ध्यान देते थे कि वह शायरी की व्याकरण के अनुरूप हो और हल्का फुल्का न हो। आपकी शैली और अपने भावों को प्रकट करने के लिये शब्दों के चयन का अन्दाज़ा उनकी निम्नलिखित बन्दिश से भलि भांति लगाया जा सकता है।

"दीद ख़म जुल्फ़ें स्याहिश
तबे दे गिर्दे तखद गिरद
अहदे गिरद हमे बाला
अस काकुल मिस्कीन ताबर्कम
गर बवारम अज़ गमजा
खुबान ज नसलमात–ऐ–इशरत
काफ़िर बाशिम गर बकनम
दर कूचा इशा वाज़ ग़दर"

पंडित दया निधान गंजू का विवाह लाहौर के एक कश्मीरी पंडित परिवार की कन्या के साथ सन् 1838 के आस पास सम्पन्न हुआ था। आपके एक मात्र पुत्र पंडित इकबाल कृष्ण गंजू की मृत्यु आपके जीवन काल में ही हो गयी थी। आपके तीन पौत्र पंडित जगपाल कृष्ण गंजू, पंडित इन्द्र कृष्ण गंजू और पंडित कुंवर कृष्ण गंजू थे। सन् 1904 में लखनऊ के कश्मीरी मुहल्ले में प्लेग ने एक महामारी का रूप ले लिया जिसमें अनेक कश्मीरी पंडितों की मृत्यु हो गयी और बहुत से कश्मीरी

पंडित अपने परिवारों सहित नगर के अन्य सुरक्षित स्थानों को पलायन कर गये। मुहल्ले का यह गंजू परिवार भी पलायन करके लालबाग़ चला गया और वहां रहने लगा। इस परिवार ने कब पलायन किया इसकी लिखित जानकारी अब उपलब्ध नहीं है।

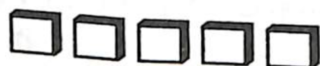
पंडित जगपाल कृष्ण गंजू लालबाग़ में जिस हवेली में रहते थे उस गली का नाम बाद में लखनऊ नगरपालिका ने जगपाल कृष्ण गंजू लेन रख दिया। पंडित जगपाल कृष्ण गंजू ने लालबाग में एक बहुत बड़ा भूखण्ड सन् 1914 में नगरपालिका को दान स्वरूप अपने पितामह पंडित दया निधान गंजू की मधुर स्मृति में एक भव्य पार्क विकसित करने के लिये प्रदान किया जिसका नाम बाद में दया निधान पार्क रखा गया। यह कभी नगर का अति विशाल और सुन्दर पार्क हुआ करता था। अब यह नगर महापालिका की धरोहर उपेक्षा का शिकार है जिसने इस भव्य पार्क की रेड़ मार कर इसकी ऐसी तैसी कर उसके मूल स्वरूप को ही नष्ट कर दिया है जो ट्रस्ट नियमावली में लिखे हुए प्राविधानों के बिलकुल विरूद्ध है। यहां जिसकी लाठी उसकी भैंस वाली कहावत चिरतार्थ हो रही है क्योंकि अब कानून और व्यवस्था में लोगों का विश्वास डगमगा चुका है। पंडित जगपाल कृष्ण गंजू की एक मात्र पुत्री बृज कुमारी का विवाह लखनऊ के प्रसिद्ध वकील पंडित जगत नारायण मुल्ला के सुपुत्र बृज नारायण मुल्ला के साथ सम्पन्न हुआ था।

पंडित इन्द्र कृष्ण गंजू की दो पुत्रियां सरोजिनी और प्रभा थी जिनमें सरोजनी का विवाह लखनऊ के राय बहादुर पंडित हरिहर नाथ मुट्टू के सुपुत्र रामेश्वर नाथ मुट्टू के साथ तथा प्रभा का विवाह मध्य प्रदेश की रियासत नरसिंहपुर के निवासी पंडित सुखदेव प्रसाद मुशरान के साथ सम्पन्न हुआ था। पंडित कुंवर कृष्ण गंजू की सन्तानों में एक पुत्र जीवन तथा दो पुत्रियां जयवन्ती और शीला है।

पंडित दया निधान गंजू ने अपने जीवन में अनेक सराहनीय कार्य किये जिनके लिये वह सदैव स्मरण किये जायेंगे। यह दुख का विषय है कि नगर में उनका एक मात्र प्रतीक चिन्ह दया निधान पार्क अब सरकारी

उपेक्षा के कारण अपने गौरवमय अतीत पर आंसू बहा रहा है जिसने नगर के बदलते हुए इतिहास को बहुत ही निकट से स्पर्श किया है। यदि हम अपनी अमूल्य धरोहरों को संरक्षित रखने के स्थान पर इसी प्रकार नष्ट करते रहेंगे तो हमारा भविष्य क्या होगा इसकी कल्पना करना बहुत कठिन कार्य नहीं है। आशा है हम समय रहते इस दिशा में सचेत होने का प्रयास करेंगे अन्यथा हमें लुप्त होने में बहुत अधिक समय नहीं लगेगा। इस सम्बन्ध में हिन्दी के प्रखर कवि उर्मिलेश के शब्द बहुत ही महत्त्वपूर्ण प्रतीत होते हैं।

आजकल बज़्म में आते हुए डर लगता है
क्या कहें कुछ भी सुनाते हुए डर लगता है
जब से इन्सानों की बस्ती में बसे हैं आकर
खुद को इन्सान बताते हुए डर लगता है।



अन्टार्टिका महाद्वीप पर पहुँचने वाले प्रथम कश्मीरी भूगर्भ शास्त्री

पंडित विजय कुमार रैना



इस संसार में कुछ व्यक्ति ऐसे भी हैं, जिनको अदभुत कार्यों को करने में बड़ा आनन्द आता है। वह हैरतअंगेज़ कारनामों को सम्पादित करने में एक विशेष प्रकार का रोमांच अनुभव करते हैं जो उनके शरीर में एक नयी शक्ति का संचार कर उनकों अवर्णनीय संतुष्टि की अनुभूति कराता है। इस प्रकार की मानसिकता से प्रभावित व्यक्ति अधिकतर अपना सम्पूर्ण जीवन कुछ इस प्रकार के असामान्य कार्यों को निष्पादित करने में समर्पित कर देतें हैं जो साधारण अवस्था में सम्भव नहीं और जिनकों करने में कभी कभी मनुष्य को अपने जीवन ही को अपार संकटमयी परिस्थितियों के मध्य से होकर निकालना पड़ता है जहां इस बात का तनिक भी आभास नहीं रहता कि अगले क्षण कौन सी भंयकर घटना घट सकती है। जो जीवन लीला को ही समाप्त कर बैठे। ऐसे जांबाज़ नौजवान जो हर पल अपने प्राणों को संकट में डालने के लिये तत्पर रहते हों इस संसार में बहुत कम हैं। क्योंकि हर व्यक्ति स्वभाव से कठिनाईयों से दूर रहना पसंद करता है और अपने जीवन को सुखमय वातावरण में आनन्दपूवर्क व्यतीत करने में अधिक विश्वास रखता है। कष्ट झेलने और विपत्तियों का दृढ़तापूर्वक सामना करने की शक्ति वास्तव में कुछ गिने चुने व्यक्तियों में ही होती है जिनके भीतर आत्म बल और आत्म विश्वास जैसे गुण विद्यमान होते है जो उनको अभूतपूर्व कार्यों को करने की प्रेरणा देते है और जिनके

आधार पर वह अपना निर्धारित लक्ष्य प्राप्त करने में सफल भी होते है चाहे उसके लिये उन्हें कितने ही कष्ट क्यों न उठाने पड़ें। ऐसे दृढ़ निश्चय के व्यक्ति कभी अपने मार्ग से विचलित नहीं होते और अपनी उपलब्धियों के लिये सदैव स्मरण किये जातें है। ऐसा ही एक अनूठा व्यक्तित्व पंडित विजय कुमार रैना का है जिनको अन्टार्टिका महाद्वीप पर अपने पद चिन्ह अंकित करने का गौरव प्राप्त हुआ। आप प्रथम कश्मीरी पंडित और सम्पूर्ण विश्व के प्रथम भूगर्भ शास्त्री हैं, जिसनें उस हिम से आच्छादित महाद्वीप की दो बार कठिन यात्रा की है।

पंडित विजय कुमार रैना का जन्म 18 दिसम्बर सन् 1933 को कश्मीर घाटी के श्रीनगर जनपद के मलिकागन मोहल्ले में स्थित अपने पैतृक आवास में हुआ था। आपके पिता पंडित जिया लाल रैना रियासत के कृषि विभाग के उप निदेशक के पद से सेवानिवृत्त हुए थे। आपके पूर्वज पहले नई सड़क मुहल्ले में रहते थे। पंडित जिया लाल रैना का विवाह श्रीनगर के निवासी पंडित वास कौल बमज़ाई की सुपुत्री चन्दा के साथ सम्पन्न हुआ था।

पंडित जिया लाल रैना की सन्तानों में दो पुत्र मोतीलाल तथा विजय कुमार और चार पुत्रियां बिमला, मंगला, इन्दिरा और ऊषा हैं। जिनमें बिमला का विवाह मेजर ह्रदय नाथ कौल के साथ, इन्दिरा का विवाह डा. राजेन्द्र प्रसाद सप्रू के साथ तथा ऊषा का विवाह डा. रूप टाकू के साथ सम्पन्न हुआ है।

पंडित ज़िया लाल रैना के ज्येष्ठ पुत्र पंडित मोतीलाल रैना अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात इंन्डियन एयरलाइन्स में कार्यरत थे। आप स्ट्रेपर कैप्टन के पद से सेवा निवृत्त हुए। आपका रूपा के साथ विवाह सम्पन्न हुआ था।

पंडित विजय कुमार रैना की प्रारम्भिक शिक्षा करननगर में स्थित नेशनल हाई स्कूल में सम्पन्न हुई जहां से आपने सन् 1948 में मैट्रिकुलेशन की परीक्षा उत्तीर्ण की। आपने फिर उच्च शिक्षा के लिये श्रीनगर में स्थित श्रीप्रताप कालेज में प्रवेश लिया जहां से आपने सन् 1952 में भौतिक

विज्ञान, रसायन विज्ञान तथा गणित जैसे विषय लेकर अपनी स्नातक की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। आपको एक स्नातक बन जाने के पश्चात एकाएक भूगर्भ विज्ञान जैसे विषय के प्रति सम्मोहन हो गया। अतः इस विषय में ज्ञान प्राप्त करने के लिये आपने जम्मू जाकर वहां जी0 जी0 एम0 साईन्स कालेज में पुनः स्नातक की कक्षा में भूगर्भ विज्ञान विषय लेकर प्रवेश लिया और जम्मू–कश्मीर विश्वविद्यालय से स्नातक की परीक्षा भूगर्भ विज्ञान में काफी अच्छे अंक प्राप्त कर सन् 1953 में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। आपने फिर इसी विषय में सन् 1955 में अपनी परस्नातक की परीक्षा उत्तीर्ण कीं और सम्पूर्ण विश्वविद्यालय में प्रथम स्थान प्राप्त किया।

पंडित विजय कुमार रैना ने फिर भूगर्भ विज्ञान में पी–एच. डी. की उपाधि प्राप्त करने का मन बनाया और आप अपना एक शोधार्थी के रूप में पंजीकरण कराने के लिये कश्मीर घाटी से मध्य प्रदेश के सागर नगर चले गये जहां सागर विश्वविद्यालय में इस विषय की उच्च शिक्षा का उचित प्रबन्ध था क्योंकि उस समय तक कश्मीर में भूगर्भ विज्ञान में उच्च शिक्षा प्रदान करने की कोई व्यवस्था नही थी। आपने साथ ही साथ छात्र वृत्ति के लिये जियोलौजिकल सर्वे ऑफ इन्डिया में एक आवेदन पत्र भी दे दिया ताकि शोध कार्य करने के लिये आपको किसी प्रकार की वित्तीय कठिनाई का सामना न करना पड़े। आपको जियोलौजिकल सर्वे ऑफ इन्डिया से साक्षात्कार के लिये निमंत्रण मिला पर आपको 150 रूपये माहवार पर एक शोध कर्ता के रूप में कार्य करने के स्थान पर आपकी योग्यता से प्रभावित होकर चयन समिति ने 250 रूपये माहवार पर कलकत्ता में विभाग की एक्स–रे मिनरलफिजिक्स लेबोरेट्री में जियौलाजिस्ट असिटेन्ट के पद पर आपको नियुक्त कर दिया। आपने फिर अपने जीवन में कभी पीछे मुड़ के नहीं देखा और निरन्तर प्रगति के पथ पर अग्रसर होते चले गये। लगभग 4 माह इस पद पर पूर्ण निष्ठा के साथ कार्य करने के पश्चात आपको प्रोन्नति कर के सन् 1956 में असिस्टेन्ट जियोलोजिस्ट के राजपत्रित पद पर नियुक्त कर दिया गया।

आपको फिर विभाग की ओर से पर्वतारोहण का प्रशिक्षण लेने के

लिये दारजिलिंग में स्थित हिमालियन माऊंटेनियरिंग इंस्टीट्यूट भेजा गया। इस संस्थान के प्राचार्य मेजर एन. डी. जियल आपके कठिन से कठिन पर्वत के शिखर पर चढ़ने के अभ्यास को देखकर आपसे इतना अधिक प्रभावित हुऐ कि उन्होंने आपका नाम सन् 1956 के ससीकांग पर्वतमाला के अभियान दल में सम्मिलित कर लिया – जिसको उस पर्वत की चोटी पर चढ़ना था। आपकी आयु तब केवल 22 वर्ष की थी और आप उस अभियान दल के सबसे कम आयु के सदस्य थे। आपने लद्दाख क्षेत्र की यह 7,400 मीटर ऊंची पर्वतमाला की ससीकांग शिखर पर बड़ी ही सुगमता पूर्वक चढ़कर एक नया कीर्तिमान स्थापित किया।

संयोग से इसी वर्ष जियोलोजिकल सर्वे आफ़ इण्डिया ने हिमनदों पर शोध कार्य करने की एक वृहद योजना बनाई और उत्तर भारत की बर्फ से आच्छादित पर्वत श्रृंखलाओं तथा हिमनदों का सर्वे करने के कार्य का भार युवा रैना को सौपां गया कि वह इस पूरे क्षेत्र का एक उचित ज़ियोलोजिकल मानचित्र तैयार करें। यह बहुत ही जटिल तथा जोखिम भरा कार्य था आपने बहुत ही दक्षतापूर्वक इस कठिन कार्य को बहुत ही कम समय में पूर्ण किया और इसके साथ ही साथ लद्दाख का हिमाचल प्रदेश के मनाली जनपद से सीधा सम्पर्क स्थापित करने के लिये एक और मार्ग का मानचित्र तैयार किया जो देश की आन्तरिक सुरक्षा की दृष्टि से बहुत ही महत्वपूर्ण और सामरिक कार्य था।

सन् 1959 में भारतीय वायु सेना ने उत्तर प्रदेश के गढ़वाली पहाड़ी क्षेत्र में नीलकंठ पर्वत शिखर पर चढ़ने के लिये एक अभियान दल का गठन किया जिसमें युवा रैना को एक सदस्य के रूप में सम्मिलित किया गया ताकि वह इस सम्पूर्ण क्षेत्र का सर्वे कर उसका एक जियोलोजिकल मानचित्र तैयार करें। युवा रैना ने यह कार्य बहुत ही कुशलतापूर्वक पूर्ण किया। इसी वर्ष युवा रैना ने भूमि में विद्यमान विभिन्न तत्वों का पता लगाने के लिये सम्पूर्ण आसाम क्षेत्र का वृहद सर्वे का कार्य किया और साथ ही साथ कराकोरम के हिमनद का अध्ययन किया। नीलकंठ अभियान दल के सदस्यों में युवा रैना के अतिरिक्त ऐयर कमांडोर गोयल, पी. एन. निकोरे,

तथा तीन शेरपा थे। जिनका 2 नवम्बर सन् 1959 को नई दिल्ली में भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू द्वारा अपने निवास स्थान तीन मूर्ति हाउस में भव्य स्वागत किया गया। और पंडित नेहरू ने उनके इस साहसिक कार्य के लिये उनकी भूरि भूरि प्रंशसा की। और उनके उज्जवल भविष्य की मंगलकामना की।

युवा रैना को उनके इस कठिन कार्य से प्रसन्न होकर उनके विभाग ने पदोन्नति करके सन् 1960 में जियोलोजिस्ट के पद पर नियुक्त कर दिया और आपको अंडमान और निकोबार द्वीप समूह पर स्थित ज्वालामुखियों के विस्फोट से निकलते हुए लावे में विद्यमान तत्वों का वहां जाकर व्यापक अध्ययन करने का कार्य सौंपा। युवा रैना ने अन्डमान–निकोबार द्वीप समूह में रह कर इस कार्य को पूर्ण दक्षता के साथ सम्पादित किया। और ज्वालामुखियों के लावे में विद्यमान तत्वों का गूढ़ अध्ययन किया। आपने लगभग वहां दो वर्ष रहकर लावे में विद्यमान गंधक के अलावा अन्य तत्वों की खोज की। और अपना एक विस्तृत शोध पत्र इस सम्बन्ध में विभाग को प्रस्तुत किया।

युवा रैना को फिर उनके विभाग ने सन् 1962 में सिक्किम में नियुक्त कर दिया जहां आपको उस क्षेत्र में भूमि में विद्यमान तत्वों की खोज करना था। आपको इसके साथ ही साथ वहां की पर्वत श्रंखलाओं के हिमनदों पर भी अनुसंधान करना था कि उनकी बनावट क्या है और उनके विशेष गुण क्या है। आपको लगभग 4 वर्ष पश्चात विभाग ने प्रोन्नति करके एक वरिष्ठ जियोलोजिस्ट बना दिया। आप सिक्किम में लगभग 7 वर्ष रहे और इसी प्रकार के शोध कार्य उस क्षेत्र में करते रहे।

युवा रैना ने सन् 1970 में पश्चिम बंगाल की जैयन्ती पर्वतमाला पर चढ़ने वाले अभियान दल का नेतृत्व किया और फिर सन् 1971 में हिमाचल प्रदेश में स्थित पांगी घाटी का मानचित्र तैयार किया। आपने इसी प्रदेश में सन 1972 व सन् 1973 में क्रमशः लाडल घाटी तथा स्पिट घाटी का प्रथम बार व्यापक जियोलोजिकल मानचित्र तैयार किया। आप सन् 1974 और सन् 1977 के मध्य अपने विभाग के द्वारा गारा हिमनद तथा गोगवांग

हिमनद के अध्ययन के लिये गठित की गई प्रोजेक्ट टीम के मुखिया रहे और वहां के शोध कार्यों का नेतृत्व करते रहे।

युवा रैना ने कश्मीर के गुलमर्ग क्षेत्र में एम. एम. तथा एस. आई. द्वारा प्रायोजित हिमनदों पर स्कीगं करने का विधिवत प्रशिक्षण लिया। इसमें पूर्ण रूप से अभ्यस्त होने के पश्चात आप सन् 1978 में इस विधा में और अधिक निपुण होने के उद्देश्य से कनाडा चले गये और वहां आपने अति आधुनिक ग्लेशियालोजी तथा ग्लेसियर हाईड्रालोजी जैसे विषयों में योग्यता प्राप्त की। जो कनाडा के कार्लेटन विश्वविद्यालय द्वारा वहां के प्रख्यात पियटो हिमनद पर प्रायोजित किये गये थे।

युवा रैना को हिमनदों पर अति आधुनिक प्रशिक्षण लेने के पश्चात सन् 1979 में प्रोन्नति करके लखनऊ में विभाग द्वारा नव गठित स्नोआईस और ग्लेशियोलोजी प्रभाग का निदेशक बना दिया गया और आप 3 गोखले मार्ग पर आवास लेकर अपने परिजनों के साथ निवास करने लगे। आपको विभाग द्वारा संचालित उत्तरी भारत के पश्चिमी पहाड़ी क्षेत्र में समस्त शोध कार्यों का प्रभारी बना दिया गया जिनमें मुख्य रूप से जम्मू-कश्मीर, हिमाचल प्रदेश और उत्तर प्रदेश के पर्वतीय क्षेत्र शामिल थे।

29 जुलाई सन् 1982 को रैना लखनऊ से कश्मीर गये जहां आपको अपने विभाग द्वारा चलाये जा रहे विभिन्न शोध कार्यों का निरक्षण कर उनकी गुणवत्ता का आंकलन करना था। आपको वहां भारत सरकार के सागर विकास विभाग के सचिव डा. जहूर कासिम का अतिद्रुतगामी संदेश प्राप्त हुआ कि आप तुरन्त कश्मीर से बहुत ही महत्पूर्ण वार्तालाप के लिये दिल्ली आ जायें। आपके दिल्ली पहुंचने पर डा. कासिम ने आपको सूचना दी कि आपकों भारत के द्वितीय आन्टार्टिका अभियान दल का नेता चुना गया है और आप वैज्ञानिकों के इस दल का नेतृत्व करेंगे जो उस महाद्वीप पर विभिन्न अनुसन्धानों से सम्बन्धित कार्यों को वहां अंजाम देगा। इसके पूर्व डा. कासिम स्वंय भारत के प्रथम अन्टार्टिका अभियान दल का सन् 1981 में नेतृत्व कर चुके थे और उस महाद्वीप का नाम "दक्षिण की

गंगोत्री" रख चुके थे।

युवा रैना के लिये इस द्वितीय अभियान दल को संगठित करना स्वाभाविक रूप से एक बहुत बड़ी चुनौती थी। आपने बड़ी ही दक्षतापूर्वक तथा सावधानी के साथ इस दुर्गम समुद्री यात्रा के लिये उचित उपकरण और वैज्ञानिकों का चयन किया ताकि किसी प्रकार की कठिनाई का सामना न करना पड़े और अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में किसी प्रकार का कोई व्यवधान न उत्पन्न होने पाये। आपने देश की विभिन्न राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं के 11 वैज्ञानिकों की एक टीम गठित की जिनमें भारत सरकार के मौसम विभाग के डॉ. सी. आर. श्रीधरन को इस दल का उपनेता बनाया गया। इस दल के अन्य सदस्यों में मुख्य थे विभाग के एम. के. कौल और एस. के. चतुर्वेदी, दिल्ली की राष्ट्रीय भौतिक विज्ञान प्रयोगशाला से डा. ऐ. के. सेन गुप्ता, तथा पी. के. परेचा, मौसम विभाग के ऐ. के. शर्मा, राष्ट्रीय भूविज्ञान प्रयोगशाला के श्री मित्तल और लुई द क्रुज तथा इनके अतिरिक्त भारतीय वायु सेना, थल सेना तथा नौसेना के 4 डाक्टर और 4 इन्जिनियर तथा केन्द्र सरकार के फिल्म प्रभाग का एक छायाकार जो वहां किये गये कार्यों का उचित छायांकन कर सकने की क्षमता रखता हो।

रैना को अपने इस अभियान दल को अन्तिम रूप देने में लगभग 5 माह का समय लगा। आपने अपने इस अभियान दल के लिये नार्वे द्वारा निर्मित "पोलर सर्किल" नामक जलयान को चुना जो इस प्रकार की समुद्री यात्रा करने के लिये हर प्रकार से उपयुक्त था और जिसके द्वारा भारत का प्रथम अभियान दल अन्टार्टिका महाद्वीप की यात्रा कर चुका था। यह जलपोत अति आधुनिक यंत्रों और उपकरणों से सुसज्जित था जो बर्फ़ से आच्छादित सागर में यात्रा करने की क्षमता रखता था। उस समय यह जलपोत सिंगापुर में समुद्र के तट पर लंगर डाले हुऐ था। रैना ने अपनी यात्रा प्रारम्भ करने से पूर्व सिंगापुर जाकर इस जलपोत का पुनः निरीक्षण किया तथा उसके उपकरणों की व्यापक जांच की कि वह इस यात्रा के लिये पूर्ण रूप से उपयुक्त रहेगा कि नहीं। आप अपनी इस जांच–पड़ताल

से संतुष्ट होकर पुनः भारत लौट आये।

19, नवम्बर सन् 1982 को रैना ने गोवा के लिये उड़ान भरी और 23 नवम्बर सन् 1982 को नार्वे का जलपोत "पोलर सर्किल" सिंगापुर से गोवा के बन्दरगाह पहुंचा। उसके "डेक" पर वैज्ञानिक उपकरणों तथा अन्य साज–सामान को लादा गया जो जल, वायु और पृथ्वी के सूक्ष्म से सूक्ष्म स्पन्दन को नापने की क्षमता रखते हों। इनके साथ जलपोत पर दो हेलीकाप्टर बर्फ पर चलने वाले दो ट्रैक्टर तथा दो स्कूटर भी चढ़ाये गये जिनके द्वारा उस हिम से आच्छादित महाद्वीप पर हर प्रकार के अनुसन्धान से सम्बंधित कार्यों को सम्पादित किया जा सके। जलपोत पर अभियान दल के लगभग 40 सदस्यों के लिये भोजन की भी उचित व्यवस्था की गयी जो 2 माह के लिये पर्याप्त हो जिसमें नार्वे के इस पोत के चालक दल के 12 संदस्य भी सम्मिलित थे। ताकि इस प्रस्तावित कठिन समुद्री यात्रा में किसी प्रकार का व्यवधान न हो।

नार्वे के इस जलपोत 'पोलर सर्किल" ने 1 दिसम्बर सन् 1982 को गोवा के मरमगांव बन्दरगाह से अपनी समुद्री यात्रा प्रारम्भ की और 9 दिन के पश्चात 10 दिसम्बर सन् 1982 को यह जलपोत मारिशस द्वीप के तट पर पहुंचा वहां 3 दिन विश्राम करने के पश्चात 13 दिसम्बर सन् 1982 को इस जलपोत ने अन्टार्टिका महाद्वीप के लिये मौरिशस से प्रस्थान किया।

यह जलपोत समुद्र की ऊंची–ऊंची लहरों को चीरता हुआ तथा अपने विशेष उपकरणों द्वारा बर्फ को काटता हुआ 23 दिसम्बर सन् 1982 को हिम से आच्छादित अन्टार्टिका महाद्वीप के तट पर पहुंचा और रैना तथा उनके दल के सहयोगियों ने तुरन्त इस जलपोत से उतर कर उस हिम से आच्छादित महाद्वीप पर अपने पूर्व निर्धारित कार्य प्रारम्भ कर दिये। इस दल का मुख्य कार्य उस महाद्वीप पर अनुसन्धान के लिये एक आधार स्थापित करना था जिसके लिये हरप्रकार के वातावरण में उपयोगी विशेष झोपड़ियों कोवहां स्थापित करना था जिनको रूड़की में स्थित केन्द्रीय भूनिर्माण संस्थान ने काफ़ी अनुसंधान के पश्चात इस विशेष कार्य के लिये निर्माण किया था। इसके साथ ही साथ उस महाद्वीप पर एक

10,000 फीट लम्बी हवाई पट्टी का निर्माण भी करना था जिससे भारत का उस महाद्वीप से विमान द्वारा सम्पर्क स्थापित हो सके। इस हवाई पट्टी के लिये भारतीय अभियन्ताओं को बर्फ पर चिन्ह अंकित करने के लिये विशेष सूखे हुए रंगों का प्रयोग करना था जो उसके निर्माण में सहायक हों।

15, जनवरी सन् 1983 को भारत की तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने सटेलाईट फोन के द्वारा इस भारतीय अभियान दल के सदस्यों का कुशल–क्षेम पूंछा और दल के नेता रैना से लगभग 15 मिनट बातचीत की तथा उनको तथा उनके दल के सदस्यों को उनके इस सराहनीय कार्य की प्रशंसा करते हुए बधाई दी। श्रीमती गांधी की इस संवेदनशील वार्तालाप ने दल के समस्त सदस्यों को रोमांचित कर दिया।

वास्तव में इस अन्टार्टिका महाद्वीप पर अभियान दल भेजने का विचार सर्वप्रथम देश के उच्चतम स्तर पर श्रीमती इन्दिरा गांधी के नेतृत्व में लिया गया। जिनको यह आभास हुआ कि हिन्द महासागर पर विकसित देशों के बढ़ते हुऐ प्रभाव से उचित प्रकार से निपटने के लिये तथा देश की आन्तरिक सुरक्षा की दृष्टि से अब यह परम आवश्यक हो गया है कि भारत भी इस महाद्वीप से अपना सम्बन्ध स्थापित करे अन्यथा वह इस सम्पूर्ण क्षेत्र में विश्व के अन्य देशों की तुलना में बहुत अधिक पिछड़ जायेगा जो भविष्य में देश की सुरक्षा की दृष्टि से बहुत ही घातक सिद्ध होगा। अब तक विश्व के लगभग 12 विकसित देश अन्टार्टिका महाद्वीप से अपने सम्बन्ध स्थापित कर चुके हैं। भारत अविकसित देशों में प्रथम है तथा उसके पश्चात चीन का नम्बर है।

भारतीय अभियान दल के सदस्यों ने बहुत ही कुशलतापूर्वक हर प्रकार के वातावरण के लिये उपयुक्त दो अलुमिनियम की झोपड़ियों, को उस महाद्वीप पर इस प्रकार से फिट किया कि वह शून्य से कई अंश नीचे तक का तापमान झेल सकें और उन पर किसी प्रकार का कोई प्रतिकूल प्रभाव न पड़े जिससे अनुसन्धान से सम्बंधित विभिन्न कार्यक्रमों को सुचारू रूप से भविष्य में किया जा सके। भारतीय अभियन्ताओं ने हवाई पट्टी

का भी बड़ी दक्षता पूर्वक निर्माण किया तथा दल ने अन्य भूगर्भ विज्ञान से सम्बंधित प्रयोग किये तथा अपने हर कार्य की उचित समीक्षा की इस अभियान दल ने 26 जनवरी सन् 1983 को उसी महाद्वीप पर भारतीय गणतंत्र दिवस बहुत ही हर्ष और उल्लास पूर्वक मनाया जिसमें वहां तिरंगा झंडा फहराया गया और उसको भारतीय नौसेना के दो हेलीकाप्टरों ने पुष्प वर्षा करके तथा भारतीय तिरंगे झंडों तथा नौसेना के ध्वजों के साथ आकाश में उड़ कर सलामी दी। दिन में एक प्रतिभोज का भी आयोजन किया गया जिसमें वहां उस समय उपस्थित रूसी अभियान दल के सदस्यों को भी आमंत्रित किया गया।

यह भारतीय अभियान दल लगभग 2 माह तक अन्टार्टिका महाद्वीप पर विभिन्न शोध कार्य करने के पश्चात 21 फरवरी सन् 1983 को वहां से स्वदेश के लिये रवाना हुआ अपनी वापसी यात्रा में यह दल 3 दिन के लिये मारिशस में ठहरा।

21 मार्च सन् 1983 को यह अभियान दल गोवा पहुंचा जहां मरमुगॉव बन्दरगाह पर अपार जन समूह ने एकत्रित होकर इस अभियान दल के सदस्यों का भव्य स्वागत किया और उसके नेता रैना को फूलों की मालाओं से लाद दिया। अनेक नौसेना के अधिकारियों, विभिन्न संगठनों के पदाधिकारियों तथा बहुत बड़ी संख्या में स्कूल के बच्चों ने आपका बहुत ही श्रद्धापूर्वक स्वागत किया तथा इस ऐतिहासिक यात्रा के लिये हार्दिक बधाई दी रैना ने अपने संक्षिप्त सम्बोधन में इस यात्रा को अभूतपूर्व बताया।

गोवा के तत्कालीन मुख्यमंत्री प्रताप सिंह राणे ने इस अभियान दल के स्वागत में वहीं बन्दरगाह पर जल पान का आयोजन किया तथा दल के सदस्यों का स्वागत करते हुऐ उनके इस महान कार्य की भूरि-भूरि प्रशंसा की जिसने सम्पूर्ण देश को गौरवान्वित कर अनुसन्धान के क्षेत्र में एक नया कीर्तिमान स्थापित किया। रैना ने अपनी इस यात्रा को बहुत ही सफ़ल, उपयोगी तथा महत्वपूर्ण बताया।

विजय कुमार रैना को सन् 1985 में विभाग के अन्तर्राष्ट्रीय प्रभाग का निदेशक बना दिया गया ताकि वह अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भूगर्भविज्ञान

के क्षेत्र में हो रहे विभिन्न शोध कार्यों के मध्य उचित समन्वय स्थापित कर सकें। अपने सन् 1989 में पुनः अन्टार्टिका महाद्वीप जाने वाले भारतीय अभियान दल का नेतृत्व किया इस प्रकार आप प्रथम भारतीय हैं जिसने अन्टार्टिका महाद्वीप की दो बार यात्रा करके एक नये इतिहास की रचना की अभी तक यह सौभाग्य विश्व में किसी अन्य व्यक्ति को नहीं प्राप्त हो सका है। आपने अपने द्वितीय अभियान में वहां के बेडल सागर पर विभिन्न प्रयोग किये और शोध कार्य के क्षेत्र में एक नया अध्याय जोड़ा। इसके पूर्व सन् 1988 में विभाग ने आपको प्रोन्नति करके उपमहानिदेशक बना दिया था। आप इस पद से 31 दिसम्बर सन् 1991 को कलकत्ता (कोलकाता) से सेवानिवृत्त हुऐ।

विजय कुमार रैना का विवाह कश्मीर घाटी के श्रीनगर जनपद के निवासी डॉ0 शम्भू नाथ क़स्बा की सुपुत्री मोहिनी के साथ 29 सितम्बर 1960 को श्रीनगर में सम्पन्न हुआ। श्रीमती मोहिनी रैना बहुत ही सुशील तथा क्रियाशील महिला हैं। आपने देश की विभिन्न प्रतिष्ठित शिक्षण संस्थाओं में अध्यापन का कार्य किया है जैसे श्रीनगर कश्मीर के प्रेज़ेन्टेशन कान्वेन्ट में, लखनऊ के लामाटीनियर कालेज में, कलकत्ता के महादेवी बिरला विद्यालय में तथा चन्दीगढ़ के सेन्ट जान्स कालेज में आप अपने लखनऊ में प्रवास के समय लखनऊ की कश्मीरी एसोसिएशन की एक सक्रिय सदस्या रही और उसकी गतिविधियों में खुलकर हिस्सा लेती रहीं। आपने उसके तत्वावधान में अनेक महत्पूर्ण आयोजन और कार्यक्रम किये तथा उसकी पत्रिका हिमाल का सम्पादन किया। आपने कलकत्ता के कश्मीरी समाज की पत्रिका वितस्ता का भी कुछ वर्ष सम्पादन का कार्य किया। आप तीन वर्ष विभाग के अधिकारियों की पत्नियों के संगठन की अध्यक्ष रहीं। आप आजकल पंचकुला के कश्मीरी समाज की एक सक्रिय सदस्या हैं और बहुत ही निष्ठापूर्वक उसकी पत्रिका पंचतरणी के सम्पादन का कार्य कर रही हैं।

इस रैना दम्पत्ति के केवल एक पुत्री निशु है जिसने लखनऊ विश्वविद्यालय से बी0एस–सी0 करने के उपरान्त मुम्बई के एस0एम0डी0टी0

विश्वविद्यालय से कपड़ों पर विभिन्न रंगों के नमूने बनाने का विशेष प्रशिक्षण लिया है कि उनको किस प्रकार सुन्दर और आकर्षक बनाया जा सके। निशु ने एम0बी0ए0 का डिप्लोमा कलकत्ता से प्राप्त किया है तथा अमरीका से कम्प्यूटर डिजाइनिंग का विशेष प्रशिक्षण लिया है। निशु का विवाह 8 जुलाई सन् 1988 को पंडित ओंकार नाथ तथा श्रीमती मोहिनी कौल के सुपुत्र सुनील के साथ सम्पन्न हुआ है। आजकल यह दम्पति जापान के टोकियो नगर में रह रहा है जहां सुनील कौल कार्यरत है। निशु 1994 से भारत के बाहर रह रही है।

पंडित विजय कुमार रैना सेवा निवृत्त हो जाने के पश्चात अब हरियाणा प्रदेश के पंचकुला नगर में रहते हैं। आपने अपने 36 वर्ष के सेवा काल में केवल 2 वर्षों को छोड़ कर जब आप अन्डमन व निकोबार द्वीप समूह पर कार्यरत थे अपना अधिकतर समय हिमनदों के मध्य व्यतीत किया है। अतः यदि आपको सफ़ेद बर्फ़ का शैदायी कहा जाये तो अनउपयुक्त न होगा। आप बहुत ही सभ्य और सौम्य स्वभाव के व्यक्ति हैं जिसमें सदा से कुछ विशेष कार्य करने की प्रबल इच्छा शक्ति रही है। आपने अब तक विभिन्न राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय शोध पत्रिकाओं में भूगर्भ विज्ञान से सम्बन्धित अनेक विषयों पर लगभग 53 उच्च स्तरीय शोधपत्र प्रकाशित किये हैं। आप हिमनदों के पानी के प्रवाह घर शोध हेतु गठित अन्तर्राष्ट्रीय संगठन के एक सम्मानित सदस्य रहे। आप अपने विभाग की हिमनदों पर परामर्शदाता समिति के सदस्य रहे। आपको अपने इस अभूतपूर्व कार्य के लिये भारत सरकार द्वारा वर्ष 1983–84 में राष्ट्रीय मिनरल अवार्ड से सम्मानित किया गया। आपने इंग्लैण्ड, सिंगापुर, नार्वे, जर्मनी, कनाडा, अमरीका तथा मारीशस का व्यापक भ्रमण किया है।

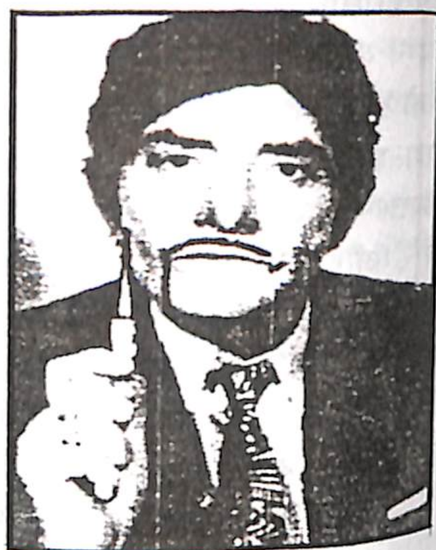
आप एक सक्रिय समाज सेवी है। आप पंचकुला के कश्मीरी समाज के तीन वर्ष सन् 2001 तक अध्यक्ष रहे और आपने अपने कार्यकाल में वहां बिरादरी के उत्थान के लिये अनेक महत्त्वपूर्ण कार्य किये और समाज को एक नयी दिशा देने की चेष्टा की। पुस्तकें पढ़ने और दूरदर्शन पर खेल कूद के कार्यक्रम देखने में आपकी विशेष रूचि है। आपको बाग़बानी का भी

बेहद शौक है और अपने घर में आपने एक सुन्दर बग़ीचा बना रखा है। जहां नित्य पौधों की देखभाल में आप अपना समय व्यतीत करते हैं। आजकल, आप एक पुस्तक के रूप में अपने संस्मरण लिखने में व्यस्त है। जो दिल्ली के मिनर्वा प्रेस द्वारा इमेजेस अन्टार्टिका शीर्षक के अन्तर्गत बहुत ही शीघ्र प्रकाशित की जाने वाली है। आप एक प्रतिभाशाली सर्वगुण सम्पन्न व्यक्ति हैं। ज़िसका जीवन अदभुत गाथाओं का एक वृहद संकलऩ है जो इस बात को स्वयं दर्शाता है कि यदि मनुष्य में आत्मबल और द्रढ़ इच्छा शक्ति हो तो वह संसार में क्या नहीं कर सकता। ऐसे व्यक्ति मुख्यता: समाज में नयी परम्पराओं को स्थापित कर उसको एक नयी दिशा देते हैं और आने वाली पीढ़ियों के लिये प्रेरणा का स्रोत बनते हैं। हिन्दी के प्रखर कवि उदयभान हंस के शब्दों में :–

"मैं आग को छू लेता हूं चन्दन की तरह
हर बोझ उठा लेता हूं कंगन की तरह
यह प्यार की मदिरा का नक्श है जिसमें
कांटा भी लगे फूल के चुम्बन की तरह।"



अभिनेता कुलभूषण नाथ पंडित



"जानी ज़माना हम से है हम ज़माने से नहीं" जैसा प्रसिद्ध और दमदार संवाद एकदम मस्तिष्क पटल पर अभिनेता राज कुमार की छवि को अंकित कर देता है। वह राज कुमार जिसने अपने संवादों को अदा करने के स्टाइल के कारण फिल्म जगत में अपनी एक विशेष पहचान बनाई और अभिनय के क्षेत्र में नये कीर्तिमान स्थापित किये। इस विलक्षण कलाकार ने केवल अपने संवादों को एक विशेष प्रकार की लय में उच्चारण करने के कारण अपने असंख्य प्रशंसक बनाये जो केवल आपकी इस अदा के दीवाने थे। आपने अपने सशक्त अभिनय द्वारा अनगिनत सिने प्रेमियों का दिल जीता जो आपके अभिनय से प्रभावित होकर आपके भक्त हो गये थे और जिनके लिये आप एक मुख्य प्रेरणा का स्रोत थे। आपने अभिनय करने की कला की बिल्कुल एक नयी शैली विकसित की जिसने सम्पूर्ण फिल्म जगत को एक नयी दिशा दी, और संवाद द्वारा कलात्मक अभिनय करने के नये आयाम सिने प्रेमियों के समक्ष प्रस्तुत किये जिसके कारण आपके अभिनय को देखकर अधिकतर आपके प्रशंसक एंव प्रेमी मंत्रमुग्ध हो जाते थे। यद्यपि आप फिल्मों में एक नायक के रूप में बहुत अधिक सफल नहीं हुए पर अन्य भूमिकाओं में आपने दर्शकों पर अपने अभिनय की अमिट छाप छोड़ी और विभिन्न चरित्रों का सजीव अभिनय कर फिल्म जगत के इतिहास में एक बिल्कुल नये अध्याय की रचना की।

आपने अपने को कला के उस उच्चतम शिखर पर स्थापित कर दिया जहां प्रायः हर अभिनेता का पहुँच पाना कठिन है आप अपने जीवन में ही इस अदभुत अभिनय कला के प्रणेता बन गये थे जो आज भी अतुलनीय है। आपने एक चरित्र अभिनेता के रूप में हिन्दी फिल्म जगत के इतिहास में अपने प्रभावशाली और सशक्त अभिनय द्वारा वह स्थान बनाया जिसको पूर्व में किसी अन्य कलाकार द्वारा बना पाना सम्भव न हो सका। आपने अभिनय करने की कलात्मक अभिव्यक्ति का जो अनूठा इतिहास रचा वह सदैव स्वर्ण अक्षरों में अंकित किया जायेगा।

हिन्दी फिल्म जगत के इस स्वाभिमानी, प्रतिष्ठित तथा संवेदनशील अभिनेता का वास्तविक नाम कुलभूषण नाथ पंडित था। जो अपने को किसी अन्य कलाकार के समकक्ष रखना कतई पसन्द नहीं करता था क्योंकि वह अपने को फिल्म जगत का सरताज समझता था। और उसको अपनी हर अदा पर बेहद नाज़ था। इस महान कलाकार के पूर्वज पंडित गोपाल दास करवायूं मूल रूप से कश्मीर घाटी के श्रीनगर ज़िले के करवानी मोहल्ले के निवासी थे जो फतेह कंदल के निकट है और इस नाते वह अपना कुलनाम 'करवायूं' लिखते थे। आपका कश्मीर में फलों का व्यापार था। आप 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में और अधिक धन कमाने की इच्छा से कश्मीर से पंजाब चले गये और लाहौर के शेर दरवाज़ा क्षेत्र के भीतर आबाद कूचाऐ हकीम अमर चन्द मुहल्ले में एक किराये का मकान लेकर अपने परिवार सहित रहने लगे।

पंडित गोपालदास करवांयूं के दो पुत्र दुर्गा प्रसाद तथा देवी प्रसाद थे। पंडित दुर्गा प्रसाद करवांयूं का जन्म सन् 1883 में हुआ था आप अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात अंग्रेजों द्वारा अपने मनोरंजन के लिये रावलपिंडी नगर में स्थापित रावलपिंडी क्लब में मुख्य लिपिक के पद पर नियुक्त कर दिये गये थे इस कारण आप अपने परिवार सहित लाहौर से रावलपिंडी चले गये और वहीं निवास करने लगे। आपके तीन पुत्र मदन मोहन नाथ, ब्रिज मोहन नाथ तथा श्याम मोहन नाथ और एक पुत्री शिवराजवती थीं।

पंडित गोपाल दास करवांयू के दूसरे पुत्र पंडित देवी प्रसाद करवांयू लाहौर में ही निवास करते रहे, और कदाचित अपना पारिवारिक व्यवसाय करते रहे। आपका जन्म सन् 1885 के आसपास हुआ था। आपके तीन पुत्र जगदीश्वर नाथ, रामेश्वर नाथ तथा राजेश्वर नाथ और तीन पुत्रियां थी।

आपके जयेष्ठ पुत्र पंडित जगदीश्वर नाथ करवांयू अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात ब्रिटिश शासन काल में सेना के कार्यालय में नियुक्त हो गये थे। आपका विवाह सुश्री राजरानी के साथ कश्मीर में सम्पन्न हुआ था जो हब्बा कदल के निवासी पंडित शिवनाथ बक्शी की सुपुत्री थीं। इस दम्पत्ति के छः पुत्र क्रमशः महेन्द्र नाथ, जीवनलाल, कुलभूषण नाथ, कुंवर कृष्ण नाथ, सुरेश कुमार तथा आनन्द कुमार और तीन पुत्रियां दुलारी, किशन और शान्ति थीं। इन सब संतानों ने अपना कुलनाम करवायूं के स्थान पर पंडित लिखना प्रारम्भ कर दिया क्योंकि कदाचित करवायूं कुलनाम उनके पारिवारिक व्यवसाय के सम्बन्धों को इंगित करता था। जो उन्हें शिक्षित हो जाने के पश्चात कुछ अटपटा सा लगता थां और उसके स्थान पर पंडित कुलनाम लिखना कुछ अधिक उपयोगी और उपयुक्त प्रतीत हुआ।

जीवन लाल पंडित का विवाह लखनऊ के कटरा बिज़न बेग के निवासी पंडित ओंकार नाथ कौल अकबराबादी की सुपुत्री 'स्वरूप कुमारी के साथ, कुंवर कृष्ण नाथ (पंडित) सोपोरी का विवाह अमृतसर के कूचाऐ कश्मीरी पंडितान के निवासी पंडित देवी प्रसाद राज़दान की सुपुत्री निर्मल कान्ता के साथ, आनन्द कुमार पंडित का विवाह दिल्ली के ले0 कर्नल स्वरूप नाथ वाचूं की सुपुत्री डॉ0 वीनू वांचू के साथ, दुलारी का विवाह लाहौर के एक कौल परिवार में किशन का विवाह श्रीनगर के बीज बिहारा मुहल्ले के निवासी पंडित राधेनाथ तिक्कू के साथ तथा शान्ति का विवाह कश्मीर के निवासी पंडित बद्री प्रसाद फ़ोतेदार के साथ जो भूतपूर्व केन्द्रीय मंत्री माखनलाल फोतेदार के भाई हैं सम्पन्न हुआ है।

कुलभूषण नाथ पंडित का जन्म 8 अगस्त सन् 1927 को पंजाब प्रान्त

के एक छोटे से कस्बे लोरालाई में हुआ था जहां उस समय आपके पिता पंडित जगदीश्वर नाथ करवायूं नियुक्त थे। आप की प्रारम्भिक शिक्षा लोरालाई (अब पाकिस्तान) में ही सम्पन्न हुई जहां से आपने अपनी मैट्रिक की परीक्षा सन 1943 में उत्तीर्ण की। आप फिर उच्च शिक्षा प्राप्त करने के उददेश्य से लोरालाई से लाहौर चले गये जहां उच्च शिक्षा के लिये उचित व्यवस्था थी। आपने लाहौर में राजकीय विद्यालय से सन् 1945 में इन्टरमीडिएट की परीक्षा उत्तीर्ण की तथा लाहौर के पंजाब विश्वविद्यालय से सन् 1947 में स्नातक की उपाधि प्राप्त की। आप फिर एक अच्छी नौकरी की तालाश में लाहौर से बम्बई (मुम्बई) चले गये और तत्कालीन बाम्बे प्रेस्डिेन्सी की पुलिस सेवा में भर्ती हो गये। आपको बम्बई में महिम पुलिस चौकी का प्रभारी बना दिया गया।

आपको बम्बई में पुलिस विभाग में कार्य करते हुए कुछ अधिक समय नहीं हुआ था कि अभिनेता प्रेम अदीब के प्रयास से आपकी फिल्म निर्देशक नज़म नकवी से अकस्मात भेंट हो गई जो आपके व्यक्तित्व और बात करने के अन्दाज़ से बहुत अधिक प्रभावित हुऐ और उन्होनें आपकों अपनी प्रस्तावित फिल्म *रंगीली* में काम करने के लिये अनुबन्धित कर लिया। यहीं से पुलिस सब इंस्पेक्टर कुलभूषण नाथ पंडित अभिनेता राज कुमार बन गये और उनके फिल्मी जीवन की यात्रा आरम्भ हुई।

सन् 1952 में आपकी प्रथम फिल्म *रंगीली* प्रदर्शित की गयी यह एम0 एण्ड सी. स्टूडियों द्वारा निर्मित की गयी थी और रेहाना इसमें आपकी नायिका थीं। इसी वर्ष आपकी दो अन्य फिल्में *अनमोल सेहरा* जो फिल्म फाइनेन्सर द्वारा अमर दत्त के निर्देशन में जिसमें गीता, नीलिमा, जयश्री, तथा अमिता साथी कलाकार थे और *इन्सान* जो न्यू स्पेशल थियेटर द्वारा जगदीश सेठी के निर्देशन में बनी थी तथा जिसमें पृथ्वीराज कपूर, कन्हैया लाल, रागिनी और कमल कपूर साथी कलाकार थे प्रदर्शित की गयीं पर यह सभी तीनों फिल्में बाक्स आफिस पर बहुत अधिक सफल नहीं सिद्ध हो सकीं।

सन् 1953 में आपकी फिल्म *शक्ति रम्भा* प्रदर्शित की गयी जो चन्द्र

कला द्वारा धीरू भाई देसाई के निर्देशन में निर्माण की गयी थी। इसमें आपके साथी कलाकार थे भारत भूषण, अन्जलि देवी और ललिता पवार। आपने फिर सन् 1954 में तीन फिल्मों में कार्य किया। यह फिल्में थीं एन एण्ड सी फिल्म्स के बैनर तले बनी *महात्मा कबीर* जिसका निर्देशन जागीरदार ने किया था जिसमें सुलोचना ,सुरेन्द्र और ललिता पवार अन्य कलाकार थे, जी. पी. प्रोडक्शन्स के बैनर तले बनी *राधा कृष्ण* जिसका निर्देशन राजा नेने ने किया था, जिसमें कामिनी कौशल, जानकीदास, रतन कुमार तथा आग़ा मुख्य कलाकार थे और रत्न दीप पिक्चर्स द्वारा निर्मित *तुलसीदास* जिसका निर्देशन बालचन्द्र और करसुख भट्‌ट ने किया था जिसमें अन्य कलाकार थे महिपाल, श्यामा, दुलारी, और सुन्दर।

राज कुमार की दो फिल्में *घमण्ड* और *लाखों में एक* सन् 1955 में प्रदर्शित की गयीं। घमण्ड का निर्माण कीर्तन प्रोडक्शन्स द्वारा दीपक आशा के निर्देशन में किया गया था। जिसमें श्यामा, कमल मेहरा और मुराद मुख्य भूमिकाओं में थे तथा *लाखों में एक* एम एण्ड टी फिल्म्स द्वारा हीरा सिंह के निर्देशन में बनाई गयी थी। जिसमें जयराज और आशा माथुर अन्य मुख्य कलाकार थे।

सन् 1956 में राजकुमार की चार फिल्में प्रदर्शित की गयीं। यह थीं पुष्पा पिक्चर्स द्वारा एस फतेहलाल के निर्देशन में बनी *अयोध्यापती* जिसमें साथी कलाकार थे ऊषा किरन और अभिभट्‌टाचार्य, *राम नवमी* जिसका निर्माण सुभाष प्रोडक्शन्स द्वारा रमन बी0 देसाई के निर्देशन में किया गया था तथा जिसमें निरूपा राय और प्रेम अदीब साथी कलाकार थे, *अमर सिंह राठौर* जो दिनेश फिल्मस द्वारा जसवन्त झावेरी के निर्देशन में निर्माण की गयी थीं जिसमें जय राज, निरूपा राय तथा हेलेन मुख्य भूमिकाओं में थे तथा *कृष्ण सुदामा* जिसका निर्माण तस्वीरिस्तान ने शक्ति कुमार के निर्देशन मे किया था और जिसमें साथी कलाकार थे निरूपा राय, प्रेम अदीब, और बलराज साहनी।

राज कुमार का फिल्मों में संघर्ष करने का दौर एक प्रकार से सन् 1957 में समाप्त हुआ जब महबूब खां की बहुचर्चित फिल्म *मदर इण्डिया*

प्रदर्शित की गयी जिसने बाक्स आफिस पर सफलता के नये कीर्तिमान स्थापित किये। इस फिल्म में नरगिस, सुनील दत्त, तथा राजेन्द्र कुमार जैसे अन्य महान कलाकार थे। इस फिल्म में राज कुमार ने नरगिस के पति की भूमिका अदा की थी जिसके लिये महबूब खा ने पहले दिलीप कुमार को चुना था पर उनके मना कर देने पर यह भूमिका राज कुमार को महबूब खां ने दी थी जिसने राज कुमार की किस्मत ही एकदम बदल दी। राज कुमार ने इस फिल्म में अपने सशक्त अभिनय द्वारा गांव के एक बेबस तथा कर्ज में डूबे हुऐ किसान के चरित्र को जीवन्त कर दिया और बड़े बड़े फिल्मी समीक्षक भी आपकी अभिनय करने की क्षमता का लोहा मानने को बाध्य हो गये। इस फिल्म ने एक नया इतिहास रचा और राज कुमार को एक सुपर स्टार बना दिया।

इसी वर्ष आपकी प्रख्यात निर्देशक सोहराब मोदी द्वारा निर्मित एक ऐतिहासिक फिल्म नौ शेरवान–ए–आदिल प्रदर्शित हुई। जिसमें आपने सोहराब मोदी के राज कुमार के रूप में एक दमदार अभिनय किया और दर्शकों पर अपनी एक अमिट छाप छोड़ी। आपने इसी फिल्म में अपने संवादो को बोलने की एक बिल्कुल नयी शैली विकसित की जिसने बाद में फिल्म जगत में आपकी एक अलग पहचान बनाई। इसी संवाद अदा करने की शैली ने ही आपको वास्तव में सफलता के उच्चतम शिखर तक पहुंचाने में बहुत बड़ी सहायता की। यद्यपि आपकी बाद की फिल्मों के अभिनय पक्ष की तुलना में मदर इण्डिया में एक भारतीय असहाय किसान के चरित्र को आत्मसात करना एकदम भिन्न था पर समीक्षकों को यह विश्वास अवश्य करना पड़ा कि आप में अभिनय करने की अपार क्षमता है और आप हर प्रकार के चरित्र के साथ पूर्ण न्याय करने में सक्षम हैं। आपकी दो मुख्य फिल्में नीलमणि और शाही बाजार भी इसी वर्ष प्रदर्शित की गई। नीलमणि का निर्माण गीता प्रोडक्शंन्स ने कुन्दन कुमार के निर्देशन में किया था। जिसमें अन्य कलाकार नलिनी जयवन्त, प्रेम अदीब और ललिता पवार थे। शाही बाजार चादंनी चित्र द्वारा पद्यम कान्त पाठक के निर्देशन में निर्माण की गयी थी। जिसमें चित्रा, महिपाल, सप्रू और

हेलेन साथी कलाकार थे।

सन् 1958 राज कुमार के लिये भाग्यशाली रहा क्योंकि इस वर्ष आपकी चार फिल्में प्रदर्शित की गयी। यह चार फिल्में थीं। *दुल्हन* जिसका निर्माण पुष्पा पिक्चर्स ने वी० एम० व्यास के निर्देशन में किया था, जिसमें निरूपा राय, नन्दा और जागीरदार थे, *जेलर* जिसका मिनर्वा मूवीज़ ने सोहराब मोदी के कुशल निर्देशन में निर्माण किया था जिसमें कामिनी कौशल और सोहराब मोदी मुख्य भूमिकाओं में थे, *माया बाज़ार* जिसको बाबू भाई मिस्त्री के निर्देशन में बसंत के बैनर तले बनाया गया था जिसमें महिपाल, अनिता गुहा तथा उल्हास सह कलाकार थे तथा *पंचायत* जो तस्वीरिस्तान द्वारा लेखराज बक्शी के निर्देशन में निर्माण की गयी थी जिसमें पद्यमनी बाई, श्यामा और ज़बीन जलील सह नायिकाऐं थी।

हिन्दी फिल्म जगत के दो सर्वश्रेष्ठ अभिनेताओं राज कुमार और दिलीप कुमार का आमना सामना सर्वप्रथम जेमिनी की बहुचर्चित फिल्म *पैगाम* में हुआ था जो सन् 1959 में प्रदर्शित की गई और जिसमें विजयंतिमाला तथा बी. सरोजा देवी थीं। इसको दक्षिण के महान निर्देशक एस० एस० वसन ने निर्देशित किया था। इस फिल्म में इन दोनों फिल्म जगत की महान विभूतियों ने अपनी अभिनय करने की क्षमता का परिपक्व परिचय दिया और एक दूसरे पर हावी होने की पूरी चेष्टा की। जिसके कारण इस फिल्म के इन दोनों महान कलाकारों ने कलात्मक अभिनय की बुलन्दियों को छूते हुए एक नया इतिहास रचा और सिने प्रेमियों पर एक अमिट छाप छोड़ी। यह फिल्म इन दोनों कलाकारों के लिये एक यादगार बन गयी। राज कुमार की जो अन्य फिल्में इस वर्ष प्रदर्शित की गयीं वह थीं *अर्धानिगनी* जिसका निर्माण मार्स एण्ड मूवीज़ ने अजीत चक्रवर्ती के निर्देशन में किया था। जिसमें मीना कुमारी और दुर्गा खोटे नायकाऐं थीं, *दो गुण्डे* जिसका निर्माण मिर्नवा मूवीज़ द्वारा वी. एम. व्यास के निर्देशन में किया गया था जिसमें अजीत, कुमकुम, जयश्री, नूतन और ओम प्रकाश सह कलाकार थे, *उजाला* जिसका ईगल फिल्मस ने नरेश सहगल के निर्देशन में निर्माण किया था। जिसमें माला सिन्हा और शम्मी कपूर सह

कलाकार थे तथा *स्वर्ग से सुन्दर देश हमारा* जिस फिल्म को मंगल मूर्ति प्रोडक्शंन्स के बैनर तले प्रवीन कुमार के निर्देशन में बनाया गया था जिसमें सरिता और कन्हैया लाल अन्य भूमिकाओं में थे। इन सभी फिल्मों में राज कुमार ने एक शहरी युवक के किरदार को बहुत ही सफलता पूर्वक निभाया था जो उनके *मदर इण्डिया* में किये गये चरित्र से एकदम भिन्न थे। राजकुमार के अभिनय जीवन का दूसरा दौर सन् 1960 में महल पिक्चर्स द्वारा वरिष्ठ निर्देशक किशोर साहू के निर्देशन में बनी फिल्म *दिल अपना प्रीत परायी* के प्रदर्शन के साथ प्रारम्भ हुआ जिसमें मीना कुमारी उनकी नायिका थीं। आपने इस फिल्म में एक संजीदा डाक्टर का किरदार बहुत ही खूबसूरती के साथ निभाया जिसमें उनके चरित्र में एक अनाम सा दर्द और सोंचती हुई आँखों में समाहित एक पीड़ा साफ़ परिलक्षित होती है। इस प्रकार के संवेदनशील चरित्र राजकुमार नें बाद में अन्य फिल्मों में भी किये और यह सिद्ध कर दिया कि वह वास्तव में एक बहुमुखी प्रतिभा के कलाकार हैं जो हर प्रकार के चरित्र को जीवन्त कर देने की असीमित क्षमता रखता है। आपकी इस वर्ष प्रदर्शित होने वाली अन्य फिल्में थीं *दुर्गामाता* जो विक्रम प्रोडक्शन्स द्वारा डी0 एस0 रांगा के निर्देशन मे निर्माण की गयी थी तथा जिसमें आपकी नायिका थी जानकी, *मायामच्छन्दर* जिसका निर्माण बी0 वी0 प्रोडक्शन्स द्वारा बाबू भाई मिस्त्री के निर्देशन मे किया गया था। जिसमें साथी कलाकार थे निरूपा राय और मनहर देसाई और लोकशक्ति चित्र द्वारा राम चन्द्र ठाकुर के निर्देशन मे बनी *वीर दुर्गादास* जिसमें आपके साथी कलाकार थे जया, निरूपा राय और मनहर देसाई।

सन् 1961 में राजकुमार की तीन फिल्में प्रदर्शित हुई। यह फिल्में थी एस0 एम0 बसन्त के निर्देशन में जेमिनी की *घराना* जिसमें आशा पारिख और राजेन्द्र कुमार सह कलाकार थे *जय चित्तौड़* जिसको रागिनी चित्र द्वारा निर्माण किया गया था जिसमें निरूपा राय और जयराज मुख्य भूमिकाओं में थे तथा *वारंट* जिसको शान्ती निकेतन फिल्मस द्वारा केदार कपूर के निर्देशन में बनाया गया था जिसमें अशोक कुमार, शशिकला और

जयराज अन्य कलाकार थे।

राजकुमार की एक और बहुचर्चित फिल्म *आज और कल* सन् 19
में प्रदर्शित की गयी । यह फिल्म पंचदीप चित्र द्वारा बसंत जोगलेकर
निर्देशन में तैयार की गयी थी जिसमें अशोक कुमार, नन्दा, सुनील द
और तनुजा जैसे कलाकार थें। इसी वर्ष राजकुमार को जिन अन्य फि
ने शोहरत प्रदान की वह थीं *दिल एक मन्दिर* जिसका निर्माण चित्रा
द्वारा श्रीधर के निर्देशन में किया गया था। जिसमें मीना कुमारी, राजे
कुमार और महमूद साथी कलाकार थे, *गोदान* जिसका फिल्मस् ने त्रिलो
जेटली के निर्देशन मे निर्माण किया था। जिसमें कामिनी कौशल औ
महमूद साथी कलाकार थें। *फूल बने अंगारे* जो ऐशियाटिक आर्ट प्रोडक्श
द्वारा सूरज प्रकाश के निर्देशन में बनाई गयी थी जिसमें माला सिन्हा औ
जानी वाकर थें तथा *प्यार का बन्धन* जिसको एम0 एस0 फिल्मस् ने नरे
सहगल के निर्देशन में बनाया था जिसमें निशी, धूमल, जानी वाकर औ
नाज़ ने भूमिकाऐं निभायी थीं।

राज कुमार को एक सुपर स्टार बनाने वाली फिल्म *वक्त* सन् 19
में प्रदर्शित हुई जिसका निर्माण बी. आर. फिल्मस के बैनर तले यश चोप
के निर्देशन में किया गया था। इसमें सुनील दत्त, साधना, शशि कपूर
शर्मिला टेगौर, बलराज साहनी और अचला सहदेव जैसे कलाकार थे। इ
फिल्म में राजकुमार ने अपने दमदार अभिनय द्वारा फिल्म के नायक
सुनील दत्त की एक प्रकार से हत्या कर दी और उनको फिल्म जगत
नायक का हत्यारा की संज्ञा दी जाने लगी। आपका अपने अन्दाज में कह
गया यह संवाद " *चुनाव सेठ जिनके घर शीशे के हों वह दूसरों के घ*
पर पत्थर नहीं फेंका करते" हर दर्शक को इतना भाया कि वह उसी को
रटने लगा और आप एक सर्वप्रिय अभिनेता बन गये। इस फिल्म ने राज
कुमार को नयी बुलन्दियों पर पहुंचा दिया जिसके बाद फिर आपने अपने
जीवन में कभी पीछे मुड़ के नहीं देखा।

इसी वर्ष आपके अभिनय की धाक जमाने वाली जो अन्य फिल्में
प्रदर्शित हुई वह थीं *काजल* जिसे कल्पना लोक ने राम महेश्वरी के

निर्देशन में निर्मित किया था। जिसमें मीना कुमारी, धर्मेन्द्र, पद्यमिनी और मुमताज़ साथी कलाकार थे, *ऊंचे लोग* जिसको चित्र कला ने फ़णि मजूमदार के निर्देशन में बनाया था। जिसमें अशोक कुमार, और फिरोज़ खां साथी कलाकार थे, *रिश्ते नाते* जिसका निर्माण अमर ज्योति फिल्मस द्वारा के. एस. गोपाल कृष्ण के निर्देशन में किया गया था जिसमें नूतन, जमुना, अमीता, नाज़िर हुसैन और धूमल सह कलाकार थे तथा *श्री राम भरत मिलाप* जिसमें पृथ्वीराज कपूर , अनीता गुहा, और महिपाल आपके सह कलाकार थे।

आपकी रहस्य और रोमांच से भरपूर फिल्म *हमराज़* सन् 1967 में प्रदर्शित हुई जिसका निर्माण बी. आर. फिल्मस द्वारा बी. आर. चोपड़ा के कुशल निर्देशन में किया गया था। आपके साथी कलाकार थे सुनील दत्त और नायिका के रूप में एक नया चेहरा विमी जो इस फिल्म के बाद फिल्म जगत से लुप्त हो गयीं। इस वर्ष राज कुमार की एक और फिल्म नयी रोशनी प्रदर्शित हुई जिसका निर्माण बासु फिल्मस के द्वारा श्रीधर के निर्देशन में किया गया था। जिसमें अशोक कुमार, माला सिन्हा, और विश्वाजीत अन्य भूमिकाओं में थे।

राज कुमार की एक अन्य बहुचर्चित फिल्म *मेरे हुजूर* सन् 1968 में प्रदर्शित की गयी जिसमें राज कुमार ने एक लखनवी नवाब का बेहतरीन अभिनय किया जिसको सिने प्रेमियों द्वारा बहुत सराहा गया। इस फिल्म का निर्माण मूवी मुगलस द्वारा लखनऊ में जन्में विनोद कुमार के निर्देशन में किया गया था। इसमें आपके साथी कलाकार थे माला सिन्हा, जीतेन्द्र और जानी वाकर। इसी वर्ष आपकी दो और फिल्में प्रदर्शित की गयीं जो थी *नील कमल* जिसका निर्माण कल्पना लोक ने राम महेश्वरी के निर्देशन में किया था। जिसमें वहीदा रहमान, मनोज कुमार, शशिकला और महमूद सह कलाकार थे तथा *वासना* जिसका निर्माण अनामिका आर्ट्स द्वारा टी. प्रकाश राव के निर्देशन में किया गया था जिसमें सह कलाकार थे पद्यमिनी और विश्वाजीत।

सन् 1970 और सन् 1971 में राज कुमार की फिल्में क्रमशः *हीर*

राझा और लाल पत्थर प्रदर्शित की गयीं। हीर राझा का निर्माण औ निर्देशन चेतन आनन्द ने किया था इसमें नायिका के रूप में प्रिया राजवं प्रथम बार रूपहले पर्दे पर दिखाई दीं साथ में थे प्राण और अजीत। ला पत्थर का निर्माण एफ. सी. मेहरा ने सुशील मजूमदार के निर्देशन में किय था।

राज कुमार की एक नया इतिहास रचने वाली फिल्म पाकीजा सन् 1971 में प्रदर्शित की गयी जिसने बाक्स आफिस पर एक नया कीर्तिमा स्थापित किया। इस फिल्म के निर्माणं में कमाल अमरोही ने लगभग 15 वर्ष का समय व्यतीत किया था जो उनके जीवन की सबसे उत्तम कृति थी। इस फिल्म में बहुत ही भव्य सेट लगाये गये थे और अभिनय पक्ष के हर कलात्मक पहलू पर बहुत ही बारीकी के साथ ध्यान दिया गया था जिसने फिल्म निर्माण के क्षेत्र में नये आयाम विकसित किये और एक विशेष शैली को जन्म दिया। इस फिल्म में अभिनय पक्ष की दर्शकों ने भूरि भूरि प्रंशसा की और कमाल अमरोही के निर्देशन करने की क्षमता का लोहा माना। इस फिल्म की नायिका थीं मीना कुमारी और साथ में थे सदाबहार अशोक कुमार। इसी वर्ष आपकी फिल्म मर्यादा भी प्रदर्शित हुई जिसका निर्माण और निर्देशन अरविन्द सेन ने किया था जिसमें साथी कलाकार थे माला सिन्हा, राजेश खन्ना और प्राण।

राज कुमार की आर0 माधवन के निर्देशन में बनी ऐ. ऐ. नाडियावाला की फिल्म दिल का राजा जिसमें वहीदा रहमान और लीना चन्दरवारकर सह कलाकार थी, सन् 1972 में रवि आनन्द द्वारा चेतन आनन्द के निर्देशन में निर्माण की गयी फिल्म हिन्दुस्तान की कसम जिसमें प्रिया राजवंश और विजय आनन्द थे, सन् 1973 में राजतिलक द्वारा निर्माण की गयी छत्तीस घण्टे जिसमें सुनील दत्त, माला सिन्हा और परवीन बाबी सह कलाकार थे, सन् 1972 में अनिल वर्मा द्वारा निर्माण की गयी फिल्म एक के बाद एक जिसमें अशोक कुमार, नवीन निश्चल और शर्मिला टेगौर साथी कलाकार थे, सन् 1976 में राम महेश्वरी के निर्देशन में बनी कर्म योगि जिसमें माला सिन्हा , रेखा, रीना राय, और जीतेन्द्र सह कलाकार थे सन् 1978 में मुरली

धरन द्वारा राम महेश्वरी के निर्देशन में बनी फिल्म चम्बल की कसम जिसमें मौसमी चटर्जी और शत्रुघन सिन्हा थे सन् 1980 में मोहन राव द्वारा इस्माईल श्रौफ़ के निर्देशन में निर्माण की गयी बुलन्दी जिसमें आशा पारिख, डेनी और किम थे बी. एस. खन्ना द्वारा चेतन आनन्द के निर्देशन में निर्माण की गयी फिल्म कुदरत जिसमें हेमा मालिनी, राजेश खन्ना और विनोद खन्ना थे सन् 1981 में प्रदर्शित की गयी।

राज कुमार की अपनी शर्तों पर काम करने की ज़िद उनके अपने चरित्र की अकड़ और किसी के सामने न झुकने के अंपने सिद्धांतों को उन्होंने अपने फिल्मी किरदारों में बखूबी मिला दिया। आपने कई फिल्मों में हिंसा प्रधान भूमिकाएें की। आपसे जब किसी ने पूछा कि आपने इतनी अधिक फिल्में अनुबन्धित कर ली हैं जितनी पहले कभी नहीं कीं तो आपका उसको तपाक सा उत्तर था कि जानी, राज कुमार ऐसे ही नहीं मिलते हैं कई हज़ार ढूंड़ो तों एक मिलता है। हम वही करेंगे जो हमें अच्छा लगेगा।

राज कुमार की फिल्म धर्म कांटा सन् 1982 में प्रदर्शित की गयी। इसका निर्माण व निर्देशन सुलतान अहमद ने किया था। इसमें राजेश खन्ना, जीतेन्द्र और वहीदा रहमान सह कलाकार थे।

सन् 1984 में राज कुमार की तीन फिल्में प्रदर्शित हुई वह थीं एक नयी पहेली जिसका निर्माण सुब्बा राव ने के. बालाचन्द के निर्देशन में किया था। जिसमें हेमा मालिनी, पद्यमिनी कोल्हापुरी और कमल हसन थे। राज तिलक जिसका निर्माण अनिल ने राज कुमार कोहली के निर्देशन में किया था जिसमें सुनील दत्त, धर्मेन्द्र, हेमा मालिनी और रीना राय सह कलाकार थे तथा शरारा जिसका निर्माण आर. जे. चक्रवर्ती ने एस. बी. राजेन्द्र सिंह के निर्देशन में किया था जिसमें हेमा मालिनी और शत्रुघन सिन्हा मुख्य भूमिकाओं में थे। राज कुमार की तीन फिल्में इतिहास जिसका निर्माण नवजीवन प्रोडक्शन्स ने वी. जोशी के निर्देशन में किया था, जिसमें अनिल कपूर और शबाना आज़मी थे, मरते दम तक जिसका निर्माण प्राण लाल मेहता ने मेंहुल कुमार के निर्देशन में किया था जिसमें

गोविन्दा, फराह, और शक्ति कपूर थे तथा *मुकद्दर का फैसला* जिसको यश जौहर ने प्रकाश मेहरा के निर्देशन में बनाया था जिसमें राज बब्बर और मीनाक्षी शेशादरी थे सन् 1987 में प्रदर्शित की गयीं।

राज कुमार की तीन और मुख्य फिल्में सन् 1988 में प्रदर्शित की गयीं। यह फिल्में थी *महावीरा* जिसका निर्माण अशोक ने नरेश सहगल के निर्देशन में किया था जिसमें धर्मेन्द्र और डिम्पिल कपाड़िया थे, *मोहब्बत के दुश्मन* जिसका निर्माण व निर्देशन प्रकाश मेहरा ने किया था। जिसमें हेमा मालिनी, संजय दत्त और फराह सह कलाकार थे तथा *साजिश* जिसका निर्माण जे. आर. मल्होत्रा द्वारा राज कुमार कोहली के निर्देशन में किया गया था जिसमें लीना चन्दनवारकर, डिम्पिल कपाड़िया और राज बब्बर थे दर्शकों के द्वारा काफी सराही गयी।

कुछ लोग यह भी कहतें थे कि राज कुमार का अक्खड़पन वास्तविक रूप से एक मुखौटा था जो उन्होनें मूर्ख और जाहिल लोगों को अपने से दूर रखने के लिये पहना था। आम फिल्मी दुनिया उनको एक ऐसे व्यक्ति के रूप में जानती थी जो स्वभाव से एक घमंडी था और लोगों को दुत्कारने और परेशान करने वाला था पर यह एक मिथक था जो राज कुमार ने अपने चारों ओर बना रखा था। आपके फिल्मी जीवन के सफर का तीसरा दौर सन् 1989 से प्रारम्भ हुआ जब आपने अधिकतर हिंसा प्रधान फिल्मों में भूमिकाऐं निभायीं। आपकी सन् 1989 में तीन मुख्य फिल्में प्रदर्शित हुईं जो थीं *देश का दुश्मन* जिसका निर्माण मनमोहन कपाड़िया ने राज कुमार कोहली के निर्देशन में किया था जिसमें हेमा मालिनी, आदित्य पंचोली और माधुरी दीक्षित थे *जंग बाज* जिसका निर्माण प्रा... लाल मेहता ने मेहुल कुमार के निर्देशन में किया था जिसमें गोविन्दा, मन्दाकिनी और डेनी थे तथा *सूर्या* जिसका निर्माण विजय मेहता ने इस्माईल श्रौफ़ के निर्देशन में किया था जिसमें विनोद खन्ना, भानुप्रिया और अमरीश पुरी ने भूमिकाऐं की थीं।

राज कुमार की फिल्म *पुलिस और पब्लिक* सन् 1990 में प्रदर्शित हुई। इसका निर्माण विजय मेहता ने रोमाईल श्रौफ़ के निर्देशन में कि...

था तथा इसमें नसीरउद्दीन शाह, पूनम ढिल्लों और कबीर बेदी अन्य मुख्य भूमिकाओं में थे।

हिन्दी फिल्म जगत की दो महान हस्तियां राज कुमार और दिलीप कुमार पुनः 35 वर्ष पश्चात सुभाष घई की फिल्म *सौदागर* में आमने सामने आयी जो सन् 1991 में प्रदर्शित की गयी। इस फिल्म ने एक नया इतिहास रचा जिसमें कई पीढ़ियों के संघर्ष की गाथा को दर्शाया गया था। इस फिल्म में राज कुमार और दिलीप कुमार ने अपने परिपक्व अभिनय की सिने प्रेमियों पर एक अमिट छाप छोड़ी। इस महान फिल्म में अन्य कलाकार थे मनीषा कोईराला और विवेक मुशरान। यद्यपि राज कुमार अपने जीवन के अन्तिम चरण में कैंसर जैसे भयानक रोग से ग्रसित हो गये थे। जिससे उनको अभिनय करने में काफी कठिनाई होती थी पर उन्होंने फिल्म जगत में यह बात किसी पर भी प्रकट नहीं होने दी और केवल अपनी आत्मशक्ति के बल पर फिल्मों में प्रभावशाली अभिनय करते रहे। अपने गिरते हुए स्वास्थ्य में भी के. सी. बोकाड़िया के निर्देशन में बनी फिल्म *पुलिस और मुजरिम,* विनोद खन्ना और मनीषा कोईराला के साथ की जो सन् 1992 में प्रदर्शित हुई तथा *तिरंगा* नाना पाटेकर तथा वर्षा उडगांवकर के साथ की जो सन् 1993 में प्रदर्शित की गई आपने *तिरंगा* के पश्चात बड़ी बजट वाली फिल्मों को साइन करना एक दम बन्द कर दिया आपकी फिल्मे *बेताज बादशाह* ममता कुलकर्णी और शत्रुघन सिन्हा के साथ तथा *उलफत की नयी मंजिले* वहीदा रहमान के साथ सन् 1994 में प्रदर्शित की गयीं। आपकी फिल्में *गाड एण्ड गन* जैकी श्रौफ़ और गौतमी के साथ तथा *जवाब* मुकेश खन्ना और करिश्मा कपूर के साथ सन् 1995 में प्रदर्शित की गई।

कुछ वर्ष पहले जब मेहुल कुमार अपनी फिल्म *मरते दम तक* की दिल्ली में शूटिंग के समय राज कुमार की मृत्यु के दृष्य को छायांकन करने के लिये तैयारी में जुटे हुए थे तो राज कुमार ने अपने खास अन्दाज में कहा कि जानी मौत के लिये इतना ताम झाम क्यों ? देखना जब हम इस दुनियां से जायेंगे तो किसी को कानो कान खबर नहीं होगी। और

हुआ भी ठीक ऐसा ही। 3 जुलाई सन् 1996 को 69 वर्ष की आयु में यह महान कलाकार इस संसार से सदा के लिये विदा हो गया और किसी को भी कानोंकान इसकी भनक नहीं लगी। उनकी मृत्यु का समाचार उनके दाह संस्कार के पश्चात फिल्म जगत को मिल पाया क्योंकि उन्होने अपने परिजनों को ऐसा करने का निर्देश दे रखा था। वह यह नहीं चाहते थे कि कोई भी व्यक्ति एक मृत राज कुमार को देखे उसके मन में सदा एक जीवित राज कुमार की छवि बनी रहनी चाहिए क्योकि किसी ने आज तक किसी शेर को मरते हुए नहीं देखा।

राज कुमार अपने अहं और अक्खड़पन के लिये पूरी फिल्म नगरी में प्रसिद्ध थे। एक बार जब प्रकाश मेहरा फिल्म जंजीर की मुख्य भूमिका के लिये राज कुमार के पास गये तो उन्होंने प्रकाश मेहरा के तेल चुपड़े हुए बालों को देख कर फिल्म करने से मना कर दिया और कहा जानी तुम एक बेहतरीन स्क्रिप्ट लेकर आये हो लेकिन तुमने जो बालों में तेल लगाया है वह मुझे पंसद नहीं ये भूमिका बाद में अमिताभ बच्चन ने निभायी।

राज कुमार ने फिल्मों की शूटिंग में अधिक व्यस्त रहने के कारण विलम्ब से विवाह किया। आपका विवाह दिल्ली की एक क्रिश्चियन विमान परिचारिका जेनी के साथ सम्पन्न हुआ था जिसका विवाह के उपरान्त गायत्री नाम रखा गया। आपके दो पुत्र पुरू राज कुमार और पाणिनी तथा एक पुत्री वास्तविका है। पुरू राज कुमार को प्रकाश मेहरा ने अपनी फिल्म ब्रह्मचारी में मुख्य भूमिका देकर लांच किया। राज कुमार के दूसरे पुत्र पाणिनी राज कुमार निर्माता कुलभूषण गुप्ता की फिल्म से नायक बनने की चेष्टा कर रहा है। वास्तविका भी एक फ़िल्म अभिनेत्री बनने की जुगाड़ में है।

राज कुमार अपने जीवन के अन्तिम वर्षो में फिल्मों मे काम करना बन्द करके दिल्ली में सदा के लिये बसना चाहते थे जहां उनके अग्रज भ्राता डा0 जीवन लाल पंडित अपने परिवार सहित रहते थे। आपने अपनी मृत्यु से कुछ दिन पूर्व अपनी पुरानी विदेशी शिवरोलेट कार से दिल्ली तक

की यात्रा की योजना भी बनाई थी जिसके लिये कार को गैरिज भेज कर उसकी मरम्मत करायी गयी और उसके चारों पहियों के टायर बदले गये। परिवार वालों के लाख मना करने के बाद भी उन्होंने यह यात्रा करने का द्रढ़ निश्चय किया लेकिन फिर गिरते हुए स्वास्थ्य के कारण उनको यह स्वीकार करना पड़ा कि वह यह यात्रा कर पाने की स्थिति में नहीं है। यह कदाचित प्रथम अवसर था जब उन्होंने जीवन में हार को स्वीकारा। जिस प्रकार कुन्दन लाल सहगल विग लगा कर अभिनय करते थे उसी प्रकार राज कुमार भी विग लगा कर अभिनय करते थे पर उन्होंने किसी पर यह नहीं प्रकट होने दिया कि उनके बाल नकली हैं। आपको दोपहर का खाना खा कर सोने की आदत थी। बी. आर. चोपड़ा की फिल्म _हमराज़_ की शूटिंग चल रहीं थी। खाना खा कर जब वह गये तो 2.30 बजे तक वह सेट पर लौट कर नहीं आये तो सबको चिन्ता होने लगी। चोपड़ा साहब घबराकर मेकअप रूम देखने गये वह बाहर से बन्द था मेकअप मैन से चाभी लेकर वह कमरा खोल कर अन्दर घुसे तो देखा राज कुमार बिना विग लगाये सो रहे हैं। जब राज कुमार सोकर उठे तो उन्होने स्वीकार किया कि लगातार विग लगाने से सर गर्म हो जाता है और पसीना मरने से उसमें चिपचिपाहट हो जाती है इस लिये हर दिन दो घण्टे विग उतार कर सो लेता हूँ ताकि जानी तबियत ठीक रहे और काम करने में चिड़चिड़ापन न आने पाये।

यों तो राज कुमार ने अनेक प्रख्यात फिल्म निर्देशकों के साथ काम किया पर वह महबूब खां को अपना गुरू मानते थे। मीना कुमारी उनकी प्रिय अभिनेत्री थीं। राज कुमार वरली स्थित समुद तट के निकट अपने आवास में अधिकतर सफेद पठान सूट पहनते थे और पावों में चप्पल के स्थान पर लकड़ी की खडांऊ पहनते थे। आप एक कट्टर ब्राह्मण और शिव के उपासक थे तथा सदैव अपने शरीर पर जनेऊ धारण किये रहते थे। आपने ग्लेमर की चंकाचौध और लोकप्रियता की आधीं में भी ज़मीन से जुड़े अपने पावों को कभी डगमगाने नहीं दिया और अपने परिवार को सस्ती लोकप्रियता से सदैव दूर रखा। राज कुमार ने जो भी किया खुलकर

किया वह आम फिल्मी हस्तियों की तरह कुंठित और नकली व्यक्तित्व का मुखौटा लगा कर नहीं घूमते थे। वह अपने आदर्शों और सिद्धातों के पक्के थे। आपने कभी अपने जीवन में किसी प्रकार का समझौता नहीं किया। राज कुमार एक ही था और पुनः कदाचित कोई दूसरा राज कुमार नहीं होगा। आपके जीवन का सार निम्नलिखित शब्दों में व्यक्त किया जा सकता है।

"हमको मिटा सके वह ज़माने में दम नहीं
ज़माना हमसे है हम ज़माने से नहीं



भारतीय खुफ़िया तंत्र के सरताज

पंडित रामेश्वर नाथ काव



आजकल किसी भी देश के लिये उसकी आन्तरिक सुरक्षा की दृष्टि से तथा उसको बाहरी आक्रमणों से समुचित रक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से उसका अपना एक शक्तिशाली खुफ़िया संगठन होना परम आवश्यक हैं। जो उस देश के शासन तंत्र को समय रहते इन अतिसंवेदनशील विषयों से सम्बन्धित उचित सूचनाएं उपलब्ध कराता रहे ताकि देश की सुरक्षा के हित में उपयुक्त उपाय ठीक समय पर किये जा सकें और देश में उचित कानून और व्यवस्था बनी रहे। यह खुफ़िया तंत्र वास्तव में शासन की आँख और कान के समान होता है। जो उसको समय समय पर देश के भीतर घटित हो रही घटनाओं से अवगत कराता रहता है ताकि इस प्रकार की घटनाओं से उत्पन्न परिस्थितियों के समाधान के लिये किसी भी प्रकार का कोई कदम उठाने में शासन को कोई कठिनाई न हो। जिससे कानून और व्यवस्था के भंग होने की ज़रा सी भी आशंका प्रतीत होती हो।

मध्ययुगीन काल में भी विभिन्न राजा और माहराजा इस कार्य के लिये अय्यार (गुप्तचर) नियुक्त करते थे जो उनको उनकी रियासतों या साम्राज्यों में हो रही हर प्रकार की घटनाओं से अवगत कराते रहते थे और इन जासूसों के द्वारा दी गयी सूचनाओं के आधार पर वह राजा तथा माहराजा अपने राज में उचित व्यवस्था करते थे ताकि उनकी प्रजा को

किसी प्रकार की कठिनाई न उठानी पड़े। अतः देश में उचित कानून और व्यवस्था बनाये रखने के लिये तथा उसको बाहरी आक्रमणों से मुक्त रखने के लिये यह आवश्यक है कि उसका अपना एक शक्तिशाली खुफ़िया संगठन हो जो देश के शासन तंत्र को हर प्रकार के संकट से सावधान करता रहे। इसकी और अधिक आवश्यकता तब अनुभव हुई जब सन् 1962 में चीन ने अकस्मात हमारे देश पर आक्रमण कर दिया जिसकी हमको भनक भी नहीं लगी और हमारे देश की कई हज़ार किलोमीटर भूमि पर उसने अवैध क़ब्ज़ा कर लिया इसी घटनाक्रम के उपरान्त देश की नीति निर्धारण करने के उच्चतम स्तर पर यह निर्णय लिया गया कि देश में एक ऐसा खुफ़िया तंत्र विकसित किया जाये जो विदेशों में हो रही गतिविधियों के बारे में सूचनाऐं संग्रहित कर शासन तंत्र को उपलब्ध कराता रहे ताकि भविष्य में इस प्रकार की स्थिति फिर न उत्पन्न होने पाये कि हमारा कोई भी पड़ोसी देश जब चाहे हम पर आक्रमण कर दे और हमें उसकी हवा तक न लगे तथा हम उसका समुचित जवाब देने की परिस्थिति में न हों। जिस व्यक्ति ने इस प्रकार के खुफ़िया तंत्र की आधारशिला रखी और उसको एक शक्तिशाली संगठन के रूप में विकसित किया जो विदेशी गुप्तचर गतिविधियों पर अपनी पैनी निगाहें रख कर उनका निरन्तर आंकलन कर शासन को उनसे अवगत कराता रहे वह थे पंडित रामेश्वर नाथ काव जो अपने परिजनों और सहयोगियों में अधिकतर रामजी काव के नाम से जाने जाते थे। आपने रॉ नामक खुफ़िया तंत्र का गठन कर न केवल अपनी अदभुत क्षमता का परिचय दिया अपितु खुफ़िया तंत्र के इतिहास में अपनी अनूठी कार्यप्रणाली द्वारा एक नये अध्याय की रचना की जिसे सदैव स्वर्ण अक्षरों में अंकित किया जायेगा।

पंडित रामेश्वर नाथ काव के पूर्वज पंडित घासी राम काव मूल रूप से कश्मीर घाटी के श्रीनगर जनपद के हब्बा कदल के निकट ज़ैनदार मुहल्ले के निवासी थे जो 18वीं शताब्दी के प्रारम्भ में अपने पुत्र पंडित दामोदर दास काव तथा अन्य परिजनों के साथ कश्मीर घाटी से निकल कर मुग़ल मार्ग द्वारा रावल पिंडी तथा लाहौर होते हुऐ दिल्ली आ गये और

वहां बाज़ार सीता राम में निवास करने लगे जो उस समय कश्मीरी पंडितों का एक प्रमुख केन्द्र हुआ करता था। पंडित दामोदर दास काव के दो पुत्र क्रमशः गुलाब राय और दया निधान तथा एक पुत्री बेनो बीबी थी जिनका विवाह एक चन्ना परिवार में हुआ था।

कालान्तर में पंडित दया निधान काव अवध में नवाब आसफ़उद्दौला (1775–1798) के शासन काल में दिल्ली से अपने परिवार सहित लखनऊ चले आये और कश्मीरी मुहल्ले में निवास करने लगे। आपने कश्मीरी मुहल्ले में अपने परिवार के निवास के लिये तीन हवेलियां निर्माण करायीं। आप नवाब आसफ़उद्दौला के दरबार में नियुक्त हो गये थे और बाद में अपनी योग्यता और कार्यकुशलता के कारण नवाब द्वारा दीवान बना दिये गये थे। आप बहुत ही कर्मठ तथा परिश्रम करने वाले व्यक्ति थे और अपने को स्फूर्तिवान रखने के लिये हल्का फुल्का व्यायाम अवश्य करते थे। आपको बेहतरीन और लज़ीज़ कश्मीरी पकवान और व्यंजन खाने का बेहद शौक़ था। जिनको पकाने के लिये आपके यहां कश्मीरी रसोइये की विशेष व्यवस्था रहती थी। आपके यहां दीवान होने के नाते काफ़ी व्यक्तियों का आना जाना लगा रहता था। जिनकी आवभगत आप पूरे जोश के साथ दिल खोल कर करते थे। और सदा इस बात पर विशेष ध्यान देते थे कि कहीं किसी भी आगन्तुक के स्वागत सत्कार में किसी भी प्रकार की कमी न रहने पाये।

पंडित दया निधान काव के दो पुत्र बद्री नाथ और भोला नाथ तथा एक पुत्री गौरी शुरी थी। जिनका विवाह मुहल्ले के एक दर परिवार में हुआ था। नवाबी शासन काल में लखनऊ नगर में पीने के पानी को उपलब्ध कराने के लिये कोई जलकल की व्यवस्था नहीं थी। अधिकतर पीने के पानी की आपूर्ति के लिये लोग अपने घरों में कुऐं बनवाते थे या फिर नगर के मुख्य स्थलों पर बड़ी–बड़ी शाही बावलियां निर्माण करायी जाती थीं जिन्हें अब इन्दारा कुओं के नाम से जाना जाता है। पंड़ित भोला नाथ काव ने भी एक हलब कुऐं का निर्माण कराया था ताकि शुद्ध जल की आम जनता के लिये आपूर्ति की जा सके यह कुआं बाद में उनकी स्मृति में

"भोलानाथ का कुंआ" के नाम से नगर में प्रसिद्ध हो गया और अब इस नाम से अब्दुल अज़ीज़ रोड पर एक पूरा मुहल्ला आबाद है।

जिस सड़क को अब हम विक्टोरिया स्ट्रीट या तुलसीदास मार्ग के नाम से जानते हैं इसका निर्माण अंग्रेज़ों ने सन् 1857 के गदर के पश्चात अनगिनत महलों और भवनों को तोपों से ध्वस्त करके किया था। नवाबी समय में इस सड़क का कहीं अता पता नहीं था। उस समय शीश महल, मच्छी भवन, तथा छतर मंज़िल से शाही सवारियां जैसे नवाबों के हवादार, बेगमों के सुखपाल तथा पल्लेदार पालकियां और पीनसें इत्यादि चौक के गोल दरवाज़े से अकबरी गेट और कश्मीरी मुहल्ले होते हुए रूस्तम नगर में स्थित शिया मुसलमानों के मुख्य तीर्थ स्थल दरगाह हज़रत अब्बास ज़ियारत के लिये जाते थे। बादशाह की सवारी के लिये भी यही मुख्य मार्ग हुआ करता था। उस समय कश्मीरी मुहल्ले के ठाट–बाट निराले थे जहां विद्वान और रईस कश्मीरी पंडितों की भव्य हवेलियां हुआ करती थीं जो नवाब आसफउद्दौला के शासन काल में लखनऊ में आकर बसे थे और राज दरबार में विभिन्न उच्च पदों पर नियुक्त थे। मुन्शी राम सहाय "तमन्ना" ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि एक बार नवाब आसफ़उद्दौला ज़ियारत के लिये दरगाह हज़रत अब्बास जाते समय पंडित भोला नाथ काव की कश्मीरी मुहल्ले में स्थित हवेली में उनसे मिलने के लिये पधारे थे।

पंडित बद्री नाथ काव के चार पुत्र क्रमशः रतन नाथ, केदार नाथ, कामेश्वर नाथ तथा बिशम्भर नाथ तथा तीन पुत्रियां धन्वन्ती शुरी, आनन्दी शुरी और शारिका शुरी थीं। जिनमें सबसे बड़ी पुत्री धन्वन्ती शुरी का विवाह लखनऊ के कश्मीरी मुहल्ले के निवासी पंडित अयोध्या नाथ कौल बक्शी तथा शारिका शुरी का विवाह पंडित बैज नाथ हुक्कू के साथ सम्पन्न हुआ था।

पंडित केदार नाथ काव ब्रिटिश शासन काल में लखनऊ के प्रसिद्ध कैनिंग कालेज से अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात अंग्रेज़ों द्वारा बनारस में डिप्टी कैलेक्टर के पद पर नियुक्त कर दिये गये थे और आप

वहां अपने परिजनों के साथ रामनगर मुहल्ले में रहते थे। आपके दो पुत्र त्रिलोकी नाथ तथा द्वारिका नाथ थे। पंडित त्रिलोकी नाथ काव ने अपनी शिक्षा पूर्ण करने के पश्चात कुछ समय बनारस (वाराणसी) में एक निजी सिगरट निर्माण करने वाली कम्पनी में कार्य किया जिसको बनारस के तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश पंडित जगमोहन नारायण मुशरान ने अपने पुत्र को व्यवसाय प्रदान करने के उद्देश्य से स्थापित किया था। जिसकी बाद में युवावस्था में ही अकस्मात मृत्यु हो गयी। पंडित त्रिलोकी नाथ काव फिर अच्छी नौकरी प्राप्त करने के लिये बनारस रियासत से बड़ौदा रियासत पलायन कर गये और वहां एक कैमिस्ट के पद पर एक निजी कम्पनी में कार्य करने लगे। आपका विवाह लखनऊ के निवासी पंडित शम्भू नाथ जुत्शी की सुपुत्री सुश्री दयाशुरी जुत्शी के साथ सम्पन्न हुआ था। आपके तीन पुत्र क्रमशः परमेश्वर नाथ, अर्जुन नाथ तथा ज्ञान नाथ और तीन पुत्रियां रामेश्वरी, लक्ष्मी शुरी और शान्ति शुरी थीं जिनमें रामेश्वरी का विवाह पंडित रामेश्वर नाथ गुर्टू के साथ लक्ष्मी शुरी का विवाह पंडित विश्व नाथ सप्रू के साथ सम्पन्न हुआ था। शान्ति शुरी जीवन भर अविवाहित रहीं। आप बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में प्रोफ़ेसर थीं। आपकी सन् 1998 में मृत्यु हो गयी।

पंडित द्वारिका नाथ काव लखनऊ के कैनिंग कालेज से बी0ए0 की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात डिप्टी कलेक्टर के पद पर नियुक्त कर दिये गये थे। आपका विवाह सुश्री खिमावती कौल. के साथ सम्पन्न हुआ था जो लाहौर के निवासी पंडित श्री कृष्ण कौल की पुत्री थीं आपके दो पुत्र रामेश्वर नाथ तथा श्याम सुन्दर नाथ थे जिनमें श्याम सुन्दर नाथ का जन्म अपने पिता की मृत्यु के पश्चात हुआ था। पंडित द्वारिका नाथ काव की मृत्यु लखनऊ में भरी जवानी में सन् 1923 में हो गयी जहां आपको किंग जार्ज मेडिकल कालेज में उपचार के लिये भर्ती किया गया था।

पंडित रामेश्वर नाथ काव का जन्म 2 अक्टूबर, सन् 1917 को बनारस रियासत में हुआ था जहां उस समय आपके पितामह पंडित केदार नाथ काव रामनगर में रहते थे। आपके पिता की युवावस्था में मृत्यु हो

जाने के कारण आपका लालन पालन आपके चाचा पंडित त्रिलोकी नाथ काव के संरक्षण में बड़ौदा रियासत में हुआ। इस नाते आपकी प्रारम्भिक शिक्षा बड़ौदा में ही सम्पन्न हुई। आप फिर उच्च शिक्षा ग्रहण करने के उद्देश्य से बड़ौदा से लखनऊ चले आये और आपने कैनिंग कालेज में प्रवेश ले लिया जहां से आपने सन् 1936 में अपनी बी0ए0 की परीक्षा उत्तीर्ण की। आप फिर लखनऊ से इलाहाबाद चले गये और वहां इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अंग्रेज़ी साहित्य विषय लेकर एम0ए0 के प्रथम वर्ष में प्रवेश ले लिया आप इलाहाबाद में म्योर हास्टल में रहते थे। आपने सन् 1938 में इलाहाबाद विश्व विद्यालय से एम0ए0 की परीक्षा उत्तीर्ण की और इलाहाबाद में ही रह कर संघ लोक सेवा आयोग द्वारा विभिन्न परिक्षाओं में बैठने के लिये तैयारी करने के उद्देश्य से इलाहाबाद विश्व विद्यालय में एल–एल0 बी0 के प्रथम वर्ष की कक्षा में प्रवेश ले लिया।

आपने सन् 1939 में इलाहाबाद विश्वविद्यालय से एल–एल0बी0 के प्रथम वर्ष की परीक्षा उत्तीर्ण की और साथ ही साथ आपका इम्पीरियल पुलिस (आई0पी0) में चयन हो गया और आप इलाहाबाद से कानून की पढ़ाई मध्य में ही छोड़ कर मुरादाबाद में स्थित पुलिस ट्रेनिंग कालेज में प्रशिक्षण लेने के लिये चले गये। चूंकि आप बाल्यावस्था से ही बहुत अधिक सफ़ाई पसन्द और नोक–पलक वाले व्यक्ति थे तथा साफ़ सुथरे रहने में आपको विशेष रूचि थी इस नाते आपकी अपने साथियों और अंग्रेज़ अधिकारियों से बहुत अधिक पटरी नहीं खाती थी जो लबझब तरीके से रहते थे और गन्दे गुन्दे कपड़े पहनते थे। आपका अपना यह प्रशिक्षण का कार्यक्रम समाप्त कर लेने के पश्चात सर्वप्रथम आपकी नियुक्ति सन् 1940 में कानपुर में एक असिस्टेन्ट सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिस के रूप में कर दी गयी।

19वीं शताब्दी में उत्तरी भारत में ठगों ने बड़ा उत्पात मचा रखा था। वह यात्रियों को मार्ग में लूट लिया करते थे तथा उनकी हत्या तक कर देते थे। ठगों के इस आतंक से प्रभावशाली ढंग से निपटने के लिये ईस्ट इण्डिया कम्पनी के कर्नल स्लीमैन ने सर्वप्रथम एक कठोर कानून बनाने

का प्रस्ताव प्रस्तुत किया जिसके अन्तर्गत अंग्रेज़ों ने ठगों के विरूद्ध एक अधिनियम सन् 1832 के आस पास पारित किया ताकि इन ठगों की गतिविधियों पर अंकुश लगाया जा सके। इसके साथ ही साथ देश भर की अन्य संवेदनशील सूचनाओं को एकत्रित करने के लिये अंग्रेज़ों ने एक सेन्ट्रल क्रिमिनल इन्वेस्टीगेशन डिपार्टमेन्ट नाम से एक नये विभाग का सृजन किया जो प्रमुख रूप से देश की आन्तरिक सुरक्षा की दृष्टि से गठित किया गया था। ब्रिटिश शासन काल में इस विभाग में अधिकतर अंग्रेज़ और मुस्लिम अधिकारियों की भरमार थी। पंडित रामेश्वर नाथ काव प्रथम हिन्दू अधिकारी थे जो इस अति संवेदनशील विभाग में प्रतिनियुक्ति पर गये थे क्योंकि उनको कुछ ऐसा प्रतीत हुआ कि सिविल पुलिस विभाग में रह कर और साधारण पुलिसिया कार्य करके वह कदाचित अपनी योग्यता, प्रतिभा और कार्यकुशलता का परिचय दे पाने में कभी समर्थ नहीं हो पायेंगे।

लगभग इस नव विभाग में एक वर्ष कार्य करने के पश्चात 21 जनवरी सन् 1942 को पंडित रामेश्वर नाथ काव का विवाह इलाहाबाद उच्च न्यायालय के न्यायाधीश न्यायमूर्ति तेज नारायण मुल्ला की सुपुत्री मालिनी के साथ इलाहाबाद में सम्पन्न हो गया और आप अपनी पत्नी के साथ दिल्ली में रहने लगे।

सन् 1947 में देश के स्वतंत्र होने के पश्चात अंग्रेज़ों द्वारा गठित इस विभाग का पुर्नगठन कर उसका नाम इन्टेलिजेन्स ब्यूरो रख दिया गया और एक आई0पी0 अधिकारी संजीवी को उसका मुखिया बना दिया गया पर उनमें और तत्कालीन गृह मंत्री सरदार वल्लभ भाई पटेल में कुछ मतभेद हो जाने के कारण संजीवी ने अपने पद से त्याग पत्र दे दिया और उनके स्थान पर भोला नाथ मलिक को आई0बी0 के निदेशक के पद पर नियुक्त कर दिया गया भोला नाथ मलिक ने इस विभाग को संगठित करने में इस बात पर विशेष ध्यान दिया कि कहीं यह नाज़ी जर्मनी के तानाशाह ऐडोल्फ हिटलर के खुफ़िया तंत्र "गेस्टापों" का रूप न लेले।

भोला नाथ मलिक ने पंडित रामेश्वर नाथ काव को उनकी योग्यता

के आधार पर देश के तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू की सुरक्षा का कार्यभार सौंपा जिसको पंडित रामेश्वर नाथ काव ने बड़ी दक्षतापूर्वक सम्पादित किया जिससे पंडित नेहरू आपकी कार्य प्रणाली और कार्य कुशलता से बहुत अधिक प्रभावित हुऐ।

पंडित नेहरू ने पंडित रामेश्वर नाथ काव को सन् 1950 के दशक में भारत से घाना भेज दिया जो उस समय एक नये स्वतंत्र देश के रूप में विश्व के मानचित्र पर उदय हुआ था। आपका कार्य वहां के प्रधानमंत्री निक्रुमाह की उचित सुरक्षा व्यवस्था को मूर्ति रूप देना था तथा उस नवगठित देश की समुचित सुरक्षा प्रणाली को विकसित करना था। आपने यह कार्य बहुत ही सूझ–बूझ के साथ बड़ी ही निष्ठापूर्वक किया और पुनः वहां से भारत वापस लौट आये।

पंडित जवाहर लाल नेहरू को सन् 1956 की ऐतिहासिक बन्डन्ग कौंफ्रेंस में भाग लेने के लिये जिस "कश्मीर प्रिंसेज़" नाम के विमान से चीन के तत्कालीन प्रधान मंत्री चाऊ–एन–लाई के साथ यात्रा करनी थी वह संदिग्ध परिस्थितियों में दुर्घटनाग्रस्त हो गया जिससे किसी गहरी साज़िश की आशंका व्यक्त की जाने लगी। इस दुर्घटना की उचित जांच के लिये एक अन्तर्राष्ट्रीय दल गठित किया गया जिसमें चीन और ब्रिटेन के गुप्तचर शामिल थे। भारत की ओर से इस दल में पंडित रामेश्वर नाथ काव को सम्मिलित किया गया। ताकि इस विमान दुर्घटना के सही कारणों का पता लगाया जा सके।

चीन द्वारा भारत पर सन् 1962 में अकस्मात भयंकर आक्रमण कर देने के पश्चात शासन के उच्चतम स्तर पर यह निर्णय लिया गया कि देश में इन्टेलिजेंस ब्यूरो के अतिरिक्त एक ऐसा प्रभावशाली खुफ़िया तंत्र होना चाहिये जो विदेशों में हो रही अतिगोपनीय गतिविधियों के बारे में कारगर सूचनाऐं एकत्रित करने की क्षमता रखता हो ताकि भविष्य में इस प्रकार की परिस्थिति फिर दुबारा न उत्पन्न होने पाये कि हमारा कोई भी पड़ोसी देश हमारी सीमाओं का उल्लंघन करे और हमें उसकी भनक तक न लगे। इसी आशय की पूर्ति हेतु सन् 1963 में ऐविऐशन रिसर्च सेन्टर (ऐ0आई0सी0)

नाम से एक अति आधुनिक तकनीक पर आधारित खुफ़िया तंत्र की स्थापना की गयी जिसका मुख्य उद्देश्य विदेशों में हो रही अतिसंवेदनशील गतिविधियों की सूचनाऐं एकत्रित करना था। इस नयी संस्था का निदेशक स्वाभाविक रूप से पंडित रामेश्वर नाथ काव को बनाया गया जिनको इस प्रकार के कार्यों में पूर्ण दक्षता प्राप्त थी। क्योंकि आप ब्रिटेन के खुफ़िया तंत्र "स्काट लैण्ड यार्ड", अमेरिका के सी0आई0ए0 और तत्कालीन पश्चिम जर्मनी की खुफ़िया ऐजेन्सी बी0एन0डी0 की कार्य प्रणाली का गूढ़ अध्ययन कर चुके थे। आपने इस नवगठित देश के खुफ़िया तंत्र को बड़ी ही सूझ–बूझ के साथ संगठित कर विकसित किया ताकि उसकी कार्य प्रणाली में किसी प्रकार की विसंगति न रहने पाये और उसकी गणना विश्व स्तर की अन्य संस्थाओं के समान होने लगे।

सन् 1966 में ताशकन्द में लाल बहादुर शास्त्री की संदिग्ध परिस्थितियों में मृत्यु हो जाने के पश्चात श्रीमती इन्दिरा गांधी भारत की प्रधानमंत्री बनीं। श्रीमती गांधी ने देश में एक इस प्रकार के खुफ़िया तंत्र की आवश्यकता समझी जिसका कार्य क्षेत्र बहुत विशाल हो और जो विदेशों में हो रही हर प्रकार की गतिविधियों के बारे में सूचनाऐं एकत्रित कर समय रहते शासन के उच्चतम स्तर को उनसे अवगत कराने की क्षमता रख सके ताकि उन्हीं के अनुसार अग्रिम सुरक्षात्मक उपाय किये जा सकें। श्रीमती गांधी ने इस कार्य को मूर्ति रूप देने के लिये स्वाभाविक रूप से पंडित रामेश्वर नाथ काव को चुना क्योंकि वह काव साहब से न केवल व्यक्तिगत रूप से परिचित थीं अपितु अपने पिता के समय उनकी कार्य प्रणाली को बहुत निकट से अनुभव कर चुकी थीं कि वह हर कार्य को कितनी बारीकी के साथ दक्षतापूर्ण करने की क्षमता रखते थे। श्रीमती गांधी के आदेश पर पंडित रामेश्वर नाथ काव ने इस नये संगठन को खड़ा करने का कार्य भार ग्रहण किया और बहुत ही निष्ठापूर्वक इस नये खुफ़िया संगठन की रूप रेखा तैयार की। आपने कठिन परिश्रम करके 21 सितम्बर सन् 1968 को रिसर्च एण्ड अनालिसिस विंग (रॉ) नाम से इस नयी संस्था का विधिवत गठन किया और श्रीमती इन्दिरा गांधी ने आपको इस नयी संस्था का

संस्थापक निदेशक नियुक्त कर दिया और आपको इसके साथ ही साथ कैबिनेट सचिवालय का एक सचिव (अनुवेषण) बना दिया आपका मुख्य कार्य श्रीमती गांधी को देश की सुरक्षा से सम्बंधित विभिन्न विषयों पर अपने विचारों से अवगत कराना था।

सन् 1971 के भारत–पाक युद्ध में पंडित रामेश्वर नाथ काव ने पर्दे के पीछे से बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभायी जिसके कारण बंग्लादेश एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में विश्व के मानचित्र पर अस्तित्व में आया। आपने पाकिस्तान की सेना की हर प्रकार की गतिविधियों से शासन के शीर्ष स्तर को अवगत कराया जिसका पूर्ण लाभ लेते हुऐ हमारे सुरक्षा बलों ने पाकिस्तान की अत्याधुनिक हथियारों से लैस सेना पर अभूतपूर्व विजय प्राप्त कर एक नया इतिहास रचा जिसमें बिना कोई गोली चलाये हुए जनरल एन0ए0के0 नियाज़ी के नेतृत्व में लगभग 98000 पाक सैनिकों ने ढाका में ले0 जनरल जगजीत सिंह आरोरा के समक्ष आत्मसमपर्ण किया जो विश्व के समस्त युद्धों के इतिहास में एक बिलकुल अदभुत उदाहरण है। इस विजयश्री का पूरा श्रेय एक प्रकार से पंडित रामेश्वर नाथ काव को जाता है जिन्होंने बहुत ही कुशलता पूर्वक इस युद्ध की सम्पूर्ण व्यूह रचना की थी।

पंडित रामेश्वर नाथ काव सन् 1977 में 60 वर्ष की आयु पूर्ण हो जाने पर सेवा निवृत्त हुए। आप सेवा निवृत्त होने के पश्चात अपना समय अधिकतर प्रातःकाल नियमित रूप से विभिन्न यौगिक क्रियाओं को करने, चित्रकारी तथा मूर्तियों का निर्माण करने में व्यतीत करते थे। आप शरीर को स्वस्थ रखने के लिये नित्य योगाभ्यास करते थे। मूर्ति कला में आपकी विशेष रूचि थी जिसका आपने विधिवत प्रशिक्षण दिल्ली के एक स्कूल से लिया था।

श्रीमती इन्दिरा गांधी जब सन् 1980 में पुनः चुनाव जीत कर भारत की दूसरी बार प्रधानमंत्री बनीं तो उन्होंने पंडित रामेश्वर नाथ काव को अपना सुरक्षा सलाहकार नियुक्त कर दिया। उस समय पंजाब राज्य में अलगाववादी शक्तियां अपना सिर उठाने लगीं थीं और खालिस्तान की

मांग के समर्थक विभिन्न चरमपंथी गुट वहां हिन्दुओं की बड़े ही सुनियोजित तरीके से निर्मम हत्याएं करने में संलग्न थे जिसके कारण पूरे पंजाब राज्य में आतंकवाद एक उग्र रूप धारण करने लगा था। स्वर्ण मन्दिर जैसे पवित्र स्थल के अकालतख्त से जरनैल सिंह भिन्डरवाला जैसा आतंकी अपनी गतिविधियों को संचालित करने लगा। श्रीमती इन्दिरा गांधी ने विवश होकर इस आतंकवाद पर प्रभावशाली अंकुश लगाने के उद्देश्य से 6 जून सन् 1984 को सेना को Operation Blue Star आरम्भ करने का आदेश निर्गत किया जिसकी परणिती उसी वर्ष अक्टूबर माह में श्रीमती इन्दिरा गांधी की उन्ही के सुरक्षा कर्मियों द्वारा नृशंस हत्या कर दिये जाने के रूप में हुई।

श्रीमती इन्दिरा गांधी की इस अकस्मात मृत्यु के तुरन्त बाद उनके पुत्र राजीव गांधी को प्रधानमंत्री पद की शपथ दिलायी गयी क्योंकि संविधान के अनुसार प्रधानमंत्री का पद रिक्त नहीं रह सकता है। इस दुखद घटना से शासन तंत्र के उच्चतम शिखर पर यह निर्णय लिया गया कि इस प्रकार की आतंकवादी कार्यवाही से उचित प्रकार से निपटने के लिये एक ऐसे विशेष बल का गठन किया जाये जो हर प्रकार के संकट की घड़ी में और हर प्रकार की विषम परिस्थिति में त्वरित कार्यवाही करने की क्षमता रखता हो और जो देश में तीव्रगति से बढ़ रहे आतंकवाद पर प्रभावशाली अंकुश लगा सके। इस प्रकार के बल के गठन का भार पुनः पंडित रामेश्वर नाथ काव कों सौंपा गया जिन्होंने अपनी सूझ बूझ और कठिन परिश्रम द्वारा राष्ट्रीय सुरक्षा दल (एन0एस0जी0) नाम से इस अतिविशिष्ट पुलिस दल की कम्पनियों का गठन किया जो इस प्रकार की त्वरित कार्यवाही की पूर्ण क्षमता रखती है।

पंडित रामेश्वर नाथ काव ने सन् 1980 से सन् 1984 तक श्रीमती इन्दिरा गांधी के सुरक्षा सलाहकार के रूप में कार्य किया और देश की दोनों खुफ़िया ऐजेन्सियों आई0बी0 तथा रॉ का संचालन किया और इस प्रकार आप भारतीय खुफ़िया तंत्र के एक प्रकार से शिरोमणि बन गये। जब राजीव गांधी सन् 1984 में भारत के प्रधानमंत्री बने तो उन्होंने भी

पंडित रामेश्वर नाथ काव को अपना सुरक्षा सलाहकार नियुक्त किया था। पंडित रामेश्वर नाथ काव ने ही भारत जैसे प्रजातांत्रिक देश में प्रथम बार प्रधानमंत्री की विशेष सुरक्षा व्यवस्था के लिये प्रस्ताव रखा था।

सन् 1988 में विश्व नाथ प्रताप सिंह द्वारा कांग्रेस पार्टी से विद्रोह कर अलग हो जाने और जन मोर्चा नाम से एक नया राजनीतिक मंच स्थापित कर लेने के कारण राजीव गांधी को विवश हो कर प्रधानमंत्री पद से त्यागपत्र देना पड़ा और विश्वनाथ प्रताप सिंह भारत के प्रधानमंत्री बने। इस नयी व्यवस्था में पंडित रामेश्वर नाथ काव ने अपने आवास में रहना अधिक उचित समझा यद्यपि देश के शीर्षस्थ नेता उनसे देश की सुरक्षा से सम्बंधित महत्वपूर्ण पहलुओं पर बराबर उनसे विचार विमर्श करते रहे और उनका परामर्श लेते रहे।

पंडित रामेश्वर नाथ काव 16 जनवरी सन् 2002 को अपने अनुज भ्राता पंडित श्याम सुन्दर नाथ काव का कुशल क्षेम जानने के उद्देश्य से दिल्ली के अखिल भारतीय आर्युविज्ञान संस्थान गये जहां उनका उपचार चल रहा था। आपको वहां एका एक सीने में दर्द अनुभव हुआ और तुरन्त आपको गहन चिकित्सा कक्ष में वहीं उपचार के लिये भर्ती कराया गया। आपकी वहीं 20 जनवरी सन् 2002 के प्रातः काल लगभग 84 वर्ष की आयु में मृत्यु हो गयी। आपका दाह संस्कार दिल्ली के निगमबोध घाट पर सम्पन्न किया गया जिसमें अनेक गणमान्य लोगों ने भाग लिया जिनमें मुख्य रूप से प्रतिपक्ष की नेता श्रीमती सोनिया गांधी, जम्मू–कश्मीर के राज्यपाल गिरीश सक्सेना प्रमुख थे।

राष्ट्रपति के0आर0 नारायणन ने अपने शोक संदेश में पंडित रामेश्वर नाथ काव को उनकी देश के प्रति की गयी अभूतपूर्व सेवाओं की सराहना करते हुए उन्हें एक बहुमुखी प्रतिभा का धनी व्यक्ति बताया जिसने देश की सुरक्षा के लिये जिस प्रकार के तंत्र का गठन किया उसकी कल्पना भी कर पाना हर साधारण व्यक्ति के लिये सम्भव नहीं। आपने खुफ़िया तंत्र के इतिहास में एक नये अध्याय की रचना की जिसको कभी भुलाया नहीं जा सकता। प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेई ने

अपने शोक संदेश में आपको देश का एक महान सपूत बताया जिसने अपनी अनूठी कार्य प्रणाली द्वारा देश को खुफ़िया तंत्र के नये आयामों से परिचित कराया।

पंडित रामेश्वर नाथ काव बहुत ही सरल स्वभाव के मृदुभाषी व्यक्ति थे। इस नाते आप सबके प्रिय थे। आपको कभी भी किसी ने ऊंचे स्वर में वार्तालाप करते नहीं सुना और न ही कभी आपने अपने पद और सम्बन्धों को किसी पर थोपने का प्रयास किया जिसके कारण आप की इस मानवता का कई व्यक्तियों ने नाज़ायज़ लाभ भी लिया। आप बहुत ही सफ़ाई प्रिय व्यक्ति थे और सदा सुन्दर और साफ वस्त्र धारण करते थे। आपके द्वारा प्रशिक्षित खुफ़िया अधिकारी अधिकतर "काव बुआऐज़" की संज्ञा से सम्बोधित किये जाते थे जिनकी कार्य प्रणाली आपके समान परदे के पीछे से कार्य करने की थी।

पंडित रामेश्वर नाथ काव ने अपने लम्बे सेवा काल में सदा अपने को प्रचार से दूर रखा। आपको अपनी फोटो खिंचवाने से बहुत सख़्त परहेज़ था। आपकी पूरी सेवा में केवल एक बार छायाकार आपका छायाचित्र ले पाने में सफ़ल हो पाये थे। आपकी मृत्यु से देश के खुफ़िया तंत्र की एक बहुत बड़ी महान हस्ती हमसे विदा हो गयी जिसकी अब पूर्ति कर पाना कदाचित सम्भव नहीं। आपकी बंग्लादेश के गठन के सम्बन्ध में वहां की मुक्तिवाहिनी को भारतीय खुफ़िया तंत्र द्वारा उचित सहायता सूचनाओं के रूप में उपलब्ध कराने के कार्य से अमरीका इतना अधिक प्रभावित हुआ कि वहां के शासन तंत्र ने अपने खुफ़िया मुख्यालय "West Point" में प्रशिक्षणार्थियों को प्रशिक्षण देने के लिये पंडित रामेश्वर नाथ काव की कार्य पद्विती का वहां के प्रशिक्षण के पाठ्यक्रम में समावेश किया है। पंडित रामेश्वर नाथ काव के देश की सुरक्षा के सम्बन्ध में किये गये कार्यों को सदैव स्वर्ण अक्षरों में अंकित किया जायेगा। जिन व्यक्तियों को आपके संरक्षण में कार्य करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ वह आज भी आपकी प्रशंसा और गुणगान करते हैं। आपकी देश की संकट की घड़ी में की गई अभूतपूर्व सेवाओं के लिये आपको भारत रत्न के अलंकरण से सुशोभित

करना चाहिये। यदि मनुष्य में दृढ़ इच्छाशक्ति हो तो वह इस संसार में क्या नहीं कर सकता। कुछ इसी प्रकार के विचार हिन्दी के प्रतिष्ठित कवि निरंकार "सेवक" ने अपनी निम्नलिखित पंक्तियों में व्यक्त किये हैं।

"आकाश का यह जाल उठो चल कर तोड़ दें
तूफ़ान और आंधियों की दिशाओं को मोड़ दें
धरती के दुख को देख कर जो नहीं पिघल सके
उन बादलों को मुट्ठी में कस कर निचोड़ दें।।"



एक बेहतरीन अफ़साना निगार तथा शायर

कुँवर गौरी प्रसाद मुन्शी

"हमदम"



भारत में मुग़ल शासन काल में फ़ारसी भाषा को शाही भाषा माना जाता था और अधिकतर लोग उर्दू भाषा को उसकी लौंडी (नौकरानी) कहा करते थे इसी नाते उस समय हर व्यक्ति फ़ारसी भाषा के पठन–पाठन को अधिक महत्व देता था। और उसमें दक्षता प्राप्त करना अपने जीवन का मुख्य ध्येय समझता था। फ़ारसी भाषा में पारन्गत होना इसलिये भी महत्वपूर्ण था क्योंकि उस समय सारा राजकाज उसी भाषा में सम्पादित किया जाता था और उसी भाषा के ज्ञान पर एक अच्छी नौकरी प्राप्त करने की प्रबल सम्भावना रहती थी फ़ारसी भाषा के ज्ञान के अभाव में व्यक्ति को अधिकतर निकम्मा कहा जाता था। यही एक मुख्य कारण था कि समाज में आदर और सम्मान पाने के लिये कश्मीरी पंडितों ने भी फ़ारसी के ज्ञान पर बल दिया और उस भाषा में अपनी विद्वता के कारण वह अनेक ऊंचे पदों पर आसीन हुए और अपनी योग्यता द्वारा अनेक वर्षों तक व्यापक समाज में अपना वर्चस्व बनाये रखने में सफ़ल रहे तथा समाज के हर वर्ग का आदर और सम्मान पाते रहे।

लगभग यही परम्परा मुग़ल शासन काल के पश्चात ब्रिटिश शासन काल में भी कई वर्षों तक अबोध गति से चलती रही पर शैनेः–शैनेः अंग्रेज़ी भाषा की शिक्षा और पाश्चात्य सभ्यता का प्रभाव

समाज के उच्च वर्गों पर प्रकट होने लगा जो अंग्रेज़ों के अधिक सम्पर्क में थे और उनकी सभ्यता को अंगीकार करने को अधिक लाभप्रद समझ रहे थे। समाज का यह नव विकसित वर्ग जो उस समय ब्राऊन साहब कहलाता था मानसिक रूप से अपने को भारतीय कम और अंग्रेज़ अधिक समझता था और अंग्रेज़ों की चाटुकारिता में कुछ अधिक विश्वास रखता था पर उस समय भी फ़ारसी और उर्दू भाषा के ज्ञान को ही महत्व दिया जाता रहा क्योंकि अंग्रेज़ों के शासन काल में भी मुख्य रूप से इन्हीं भाषाओं के माध्यम से राज्य के अधिकतर कार्य सम्पादित किये जाते थे। इस काल में उर्दू तथा फ़ारसी भाषा के अनेक कश्मीरी पंडित विद्वान उत्पन्न हुऐ जिन्होंने उर्दू साहित्य को अपनी सशक्त लेखनी द्वारा न केवल जनमानस में लोकप्रिय बनाया अपितु उसमें अपने प्रयोगों द्वारा नये–नये तत्वों का समावेष करा कर उसको एक समृद्ध आधार देकर उसकी धरोहर में एक अभूतपूर्व वृद्धि की। जिन कश्मीरी पंडित साहित्यकारों ने अपनी कुशल लेखिनी द्वारा उर्दू साहित्य की सेवा कर उसे गौरवान्वित किया उनकी अग्रणी पंक्तियों में एक नाम कुँवर गौरी प्रसाद मुन्शी का है जिन्होंने अपनी साहित्यिक यात्रा एक अफ़साना निगार के रूप में प्रारम्भ की पर बाद में अपने को एक कुशल शायर के रूप में प्रतिष्ठित किया और उर्दू अदब को अपने बेहतरीन कलाम से नवाज़ा।

पारिवारिक सूत्रों से प्राप्त की गयी जानकारी के अनुसार कुँवर गौरी प्रसाद मुन्शी के पूर्वज 18वीं शताब्दी के प्रारम्भ में कश्मीर घाटी से निकल कर दिल्ली आ गये थे और कालान्तर में दिल्ली के निकट की किसी छोटी रियासत में दीवान हो गये थे। पर उनके सम्बन्ध में कोई विशेष लिखित सामग्री इस समय उपलब्ध नहीं हैं जिसका प्रयोग लेखन में किया जा सके। उपलब्ध लिखित सामग्री के अनुसार कुँवर गौरी प्रसाद मुन्शी के पूर्वज राजा दया राम मुन्शी मुग़ल शासन काल में बिहार के मुज़फ़्फ़रनगर ज़िले में जागीर पा गये थे जिनके पुत्र कुँवर ठाकुर प्रसाद मुन्शी अंग्रेज़ों के शासन काल में ईस्ट इण्डिया कम्पनी

के गर्वनर जनरल के ऐजेन्ट के मीर मुन्शी हो गये थे। आपके दो पुत्र थे जिनके नाम थे कुँवर कालका प्रसाद मुन्शी तथा कुँवर दुर्गा प्रसाद मुन्शी। कुँवर कालका प्रसाद मुन्शी और कुँवर दुर्गा प्रसाद मुन्शी अंग्रेज़ों के शासन काल में आगरा के डिप्टी कैलेक्टर बना दिये गये थे। आपने सन् 1857 के ग़दर में विषम परिस्थितियों तथा प्रतिकूल वातावरण में बहुत ही सूझ–बूझ के साथ तथा निष्ठापूर्वक अपने कार्यों का निर्वाह किया और नगर की कानून और व्यवस्था को बनाये रखने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभायी जिससे प्रसन्न होकर तत्कालीन भारत सरकार ने मथुरा ज़िले के धोताना और माधोपुर गांव आपको जागीर के रूप में प्रदान किये। आपने आगरा के सावन कटरा मुहल्ले में अपने परिजनों के लिये एक 40 कमरे की हलब हवेली का निर्माण कराया जो किसी शाही महल से कम न थी और जिसमें आप पूरे राजसी ठाट–बाट से रहते थे आपका इसी हवेली में देहान्त हुआ। कुँवर दुर्गा प्रसाद मुन्शी के वंशज पंडित कुलदीप नारायण मुन्शी बाद में लखनऊ के कश्मीरी मुहल्ले में आकर बस गये थे।

कुँवर श्याम प्रसाद मुन्शी, कुँवर कालका प्रसाद मुन्शी के एक मात्र पुत्र थे जो अपनी उर्दू तथा फ़ारसी भाषा की पारम्परिक शिक्षा समाप्त करने के पश्चात अंग्रेज़ों द्वारा तहसीलदार अव्वल के पद पर नियुक्त कर दिये गये थे चूंकि आप अधिकतर रोग ग्रस्त रहते थे इस नाते अधिक समय तक नौकरी नहीं कर सके और पेन्शन लेकर आगरे में ही रहने लगे जहां आपकी पैतृक हवेली थी आपके केवल एक पुत्री थी जिसका विवाह आपने सन् 1874 में पंडित स्वरूप नारायण भान के साथ किया था। अपने वंश को आगे चलाने के लिये आपने अपने दामाद पंडित स्वरूप नारायण भान के तीसरे पुत्र गौरी प्रसाद को गोद लेकर अपना दत्तक पुत्र बना लिया और इस प्रकार वह कुँवर गौरी प्रसाद मुन्शी हो गये। जिनको उनके सगे भाई बहन मामू कहने लगे और वह परिवार में इसी नाम से प्रसिद्ध हो गये।

कुँवर गौरी प्रसाद मुन्शी का जन्म आगरा में सन् 1880 में हुआ

था। जब वह केवल 9 वर्ष की आयु के थे तो उनके पिता जो अधिकतर अस्वस्थ रहते थे का लगभग 55 वर्ष की आयु में सन् 1889 में देहान्त हो गया इस प्रकार इनका लालन पालन अपनी माँ के संरक्षण में हुआ। पिता के अभाव और माँ के लाड़–प्यार के कारण आपका जीवन बहुत सुव्यवस्थित रूप से नहीं चल सका पर लम्बी–चौड़ी ज़मीनदारी होने के कारण कभी आपको आय की बहुत अधिक चिन्ता नहीं रही क्योंकि उस समय जीवनयापन के लिये बहुत अधिक धन की आवश्यकता नहीं होती थी और कम आय में भी लोग ठाट–बाट के साथ रहा करते थे और खुले दिल से लोगों का आदर–सत्कार करते थे।

आपकी प्रारम्भिक उर्दू तथा फ़ारसी भाषा की परम्परागत शिक्षा कुशल तथा अनुभवी मौलवियों की देख–रेख में सम्पन्न हुई। सादी की प्रख्यात गुलिस्तां–बोस्तां नामक पुस्तक आपको आपके पिता कुंवर श्याम नारायण मुन्शी ने पढ़ाई। आपने फिर उच्च शिक्षा ग्रहण करने के उद्देश्य से आगरा कालेज में प्रवेश लिया जहां आपने इण्टरमीडिएट तक पढ़ाई की और अंग्रेज़ी, फ़ारसी तथा अरबी भाषा में दक्षता प्राप्त की। आपने उसके पश्चात लगभग दो वर्ष तक कानून की पढ़ाई की पर उसकी परीक्षा में सम्मिलित नहीं हुऐ। लगभग 16 वर्ष की आयु में सन् 1896 में आपका विवाह सुश्री धनेश्वरी हांगल के साथ सम्पन्न हो गया जो फ़ैजाबाद ज़िले के प्रख्यात वकील और अकबरपुर के ज़मीनदार राय साहब पंडित बिशेश्वर नाथ हांगल की सुपुत्री थी।

कुँवर गौरी प्रसाद मुन्शी को अपनी शिक्षा समाप्त कर लेने के पश्चात 20वीं सदी के आरम्भ होते ही सन् 1901 में एकाएक अफ़साना निगारी का शौक़ प्रारम्भ हो गया और आप बड़े ही उत्साह पूर्वक लम्बे–लम्बे क़सीदे पूरी रवानी के साथ लिखने लगे। उस समय कानपुर का नामी प्रेस इस प्रकार के उर्दू के क़सीदे और कहानियां छापता था। उसने आपकी पुस्तकें छापने की अनुमति चाही पर आपने उसको अपनी स्वीकृति नहीं प्रदान की। आपने कुछ अफ़साने उस

समय की राजनीतिक हलचल को कथानक बना कर भी लिखे। जिनमें कुछ सामाजिक समस्याओं पर भी प्रकाश डाला गया और तत्कालीन ब्रिटिश शासन के कार्यकलापों को उजागर किया गया जिनको मुन्शी जय नारायण वर्मा ने लखनऊ से प्रकाशित होने वाली अपनी पत्रिका में प्रकाशित किया। आपका एक अफ़साना "ईरान का शहज़ादा" एक धारावाहिक के रूप में आगरा के उर्दू के समाचार पत्र "अल अज़ीज़" में प्रकाशित हुआ। आपने इसी तरह फ़िरदौसी को आधार बना कर "तूरान का फूल" नाम से एक नावेल लिखा जो बहुत अधिक लोकप्रिय हुआ और आगरा के तत्कालीन ले0 गर्वनर सर जेम्स डगलस लाटूश ने आपको उसकी सराहना करते हुए एक पत्र लिखा। इसी प्रकार जब सन् 1911 में दिल्ली में ब्रिटिश सम्राट जार्ज पंचम की ताजपोशी हुई तो आपने उनकी प्रशंसा में एक क़सीदा लिखा जो काफ़ी सराहा गया।

जब सन् 1922 में प्रिन्स ऑफ़ वेल्स भारत पधारे तो उनके स्वागत में एक क़सीदा और सन् 1929 में साईमन कमीशन के भारत आने पर एक रूबाई उन पर आपने आगरा के मुख्य उर्दू के समाचार पत्र में प्रकाशित कराई।

आपका पुस्तकें लिखने और उनको प्रकाशित कराने का शौक़ अबोधगति के साथ बिना किसी व्यवधान के सन् 1914 तक चलता रहा। जिस काल में आपने अनेक लोक प्रिय अफ़सानों की रचना की जिनको यदि संग्रहित किया जाता तो वह आज एक अमूल्य धरोहर होती। ऐसा अनुमान है कि आपने लगभग विभिन्न विषयों को कथानक बना कर लगभग 24 अफ़साने (नौविल) लिखे पर उस समय कई बैंकों के एकाएक दिवालिया होकर बन्द हो जाने के कारण आपका बहुत अधिक धन उन बैंकों में डूब गया और आपको बहुत अधिक वित्तीय हानि उठानी पड़ी। आपको इस दुःखद घटना से हृदय पर इतना गहरा आघात लगा कि आपने अफ़साना निगारी एकदम बन्द कर दी और संजीदा रहने लगे।

जीवन के इस बदलाव और दर्द ने आपके भीतर छिपे हुऐ शायर को जागृत कर दिया और आप शेर कलम बन्द करने लगे। आपने मौलाना निसार अकबराबादी मग़फूर को अपना उस्ताद बनाया और उनसे आप इस्लाह लेने लगे। शायरी करने के लिये आपने अपना उपनाम या तख़ल्लुस "हमदम" रखा और इसी उपनाम से आप अपने कहे हुऐ शेर कलम बन्द करने लगे। आपने कुछ दिन हज़रत वासिफ़ अकबराबादी की भी शर्गिदगी की पर आप किन्हीं कारणों से उनकी संगत से अपनी शायरी में बहुत अधिक निखार और आकर्षण लाने में सफ़ल नहीं हो सके। आप आरम्भ में नस्र और नज़्म दोनों में लेखन करते थे जिस पर एक बार आपके उस्ताद निसार अकबराबादी ने कटाक्ष करते हुए इतना अवश्य कहा था कि मियां नस्र और नज़्म इन दोनों में से एक को चुन लो वरना दोनों हाथ से तोतों की भांति निकल जायेंगी।

आप हर मौसम, हर वक़्त, हर त्योहार और हर मौजूं (विषय) पर बिना किसी भेदभाव के शेर कलम बन्द करने लगे। आपने इतना थोक में लिखा कि यदि आपके सारे कलाम को संग्रहित कर प्रकाशित कराया जाये तो आपका एक 500 पृष्ठों का दीवान तैयार हो जाये। आपको विशेष रूप से रूबाईयां, मसनवियां, तारीख़ीमाद्दे, साक़ीनामे तथा सेहरे कहने में महारत हासिल थी। आपका प्रारम्भ का कलाम अधिकतर आशिकाना है जो बाद में आपके सबसे छोटे पुत्र की सन 1927 में मृत्यु के पश्चात अधिकतर उदासी और मायूसी से लबरेज़ हो गया।

आपके कलाम और भाषा की पाकीज़िगी का अन्दाज़ा आपके द्वारा कलम बन्द किये गये निम्नलिखित शेरों से लगाया जा सकता है। आप फ़रमाते हैं :–

आखें नशीली यार की जो याद आयी हैं
पीना शराबे जाम का हमदम को सिम हुआ
पारसा हमदम बने हैं आजकल का ज़िक्र है

मयकदे से आ रहे थे हाथ में पैमाना था

आपने अपने सबसे छोटे लड़के की मृत्यु पर कुछ इस प्रकार बहुत ही दुखी मन से अर्ज किया:–

सेये मस्ती गयी है होश आया
हराम इस दिल को शग़ले गुल हुआ अब
कहो रो पीट कर तारीख़ हमदम
चराग बज़्मे राहत गुल हुआ अब सन् 1927

चूंकि आपको उर्दू, फ़ारसी और अरबी तीनों भाषाओं का ज्ञान था और एक लम्बे अन्तराल तक अफ़साने और क़सीदे लिखने का अनुभव था इस नाते शायरी करने में आपको अपने भावों को प्रकट करने और शब्दों का चयन करने में बहुत अधिक कठिनाई नहीं होती थी। और आप धारा प्रवाह शायरी करते थे। जो जन मानस में अपने इन्हीं विशेष गुणों के कारण लोक प्रिय हो जाती थी। आपकी सरल भाषा और अपने भावों को अभिव्यक्त करने के तरीके का अन्दाज़ा उनकी निम्नलिखित नज़्म से लगाया जा सकता है।

चढ़े तेवर हैं क्यों ये बेरूख़ी अब यार कैसी है
उलझना हर घड़ी हर बात पर तकरार कैसी है
निगाहे नाज़ का हो वार मुझ पर भी कि मैं देखूं
करे जो म्यान में ही काम वह तलवार कैसी है
तुम्हारी याद दिल में चुटकियां लेती है रह रह कर
ये दर परदा किसी के छेड़ अय दिलदार कैसी है
कभी ताका इसे बिस्मिल किया उसको उसे मारा
गज़ब की चुलबुली चंचल तेरी तलवार कैसी है
नशे में चूर मैयख़ाने से हमदम झूमते निकले
कोई उस वक़्त देखे आपकी रफ़तार कैसी है

कश्मीरी मुहल्ला, लखनऊ के उर्दू के प्रख्यात शायर पंडित बृज नारायण चकबस्त ने अपनी सशक्त लेखनी द्वारा मर्यादा पुरषोत्तम श्री राम के वनवास जाने के दृश्य का बहुत ही मार्मिक और सजीव चित्रण

किया है। "हमदम" साहब ने उसी तर्ज पर अपनी शायरी में श्रीराम के वनवास के दृश्य का चित्रण कुछ इस प्रकार किया है। इसमें महाराजा दशरथ को महारानी कौशल्या के सम्मुख विलाप करते हुए दर्शाया गया है। आपने कुछ इस प्रकार अपने भावों को प्रकट किया है।

बे सोंचे बात क्या मेरे मुंह से निकल गयी
रानी वचन को ले के अजब चाल चल गयी
रूकसत किया है राम को वनवास के लिये
ठहरे बदन में सांस किस आस के लिये
सरवन का खूंन रंग दिखाता है यह मुझे
जोगी का भेस धर के मेरे लाल चल दिये
अंजान में जो औरों को मैंने थे दुख दिये
आये करम वह सामने मेरे किये हुऐ
बचने का मैं नहीं मुझे ग़म ने किया तमाम
चौदह बरस को छूट गये लक्ष्मण, सिया और राम
हरदम ज़मी को फूंक कर रखते थे जो कदम
वनवास की वह उठाये तकलीफ़ दम बदम
मुंह को कलेजा आता है घुटता है मेरा दम
बच्चों पे मेरे टूट पड़ा हाय कोहे ग़म
आज दम तोड़ता हूं जाने का अब लुत्फ़ ख़ाक हैं
ईश्वर के बस सुपुर्द मेरी रूहे पाक है।"

"हमदम" साहब बहुत ही सरल स्वभाव के मृदु भाषी व्यक्ति थे जो आगन्तुको की सेवा करना अपना परम धर्म समझते थे। आप अपनी नाजुक मिज़ाजी के लिये प्रसिद्ध थे खाने–पीने के बेहद शौक़ीन थे। आप हर दिल अजीज़ व्यक्ति थे और पूरे आगरा शहर में कुछ इन्हीं ख़ास अदाओं की वजह से मशहूर थे तथा सब आपका बहुत आदर और सम्मान करते थे। आपके कुछ आशायर बहारे गुलशने कश्मीर में भी प्रकाशित हुए हैं। आपका लगभग 54 वर्ष की आयु में आगरा के

सावन कटरा मुहल्ले में स्थित अपनी हलब पैतृक हवेली में सन् 1934 में निधन हो गया।

''हमदम'' साहब को सात पुत्र और तीन पुत्रियां हुई। आपके पुत्रों के नाम क्रमशः हरि प्रसाद, जगदम्बा प्रसाद, राझा प्रसाद, कैलास प्रसाद, त्रिलोकी प्रसाद, राजेश्वर प्रसाद और रामेश्वर प्रसाद तथा पुत्रियों के नाम क्रमशः गिरजा, उमा और कामिनी थे।

''हमदम'' साहब की सबसे बड़ी पुत्री गिरजा का विवाह लखनऊ के बड़े ज़मीनदार तथा कटरा बिजन बेग के निवासी पंडित कैलास नारायण बक्शी के साथ सम्पन्न हुआ था। उनकी दूसरी पुत्री उमा का विवाह राजपूताना की रियासत जोधपुर के निवासी पंडित महेश नारायण गुर्टू के साथ सम्पन्न हुआ था तथा उनकी सबसे छोटी और लाडली पुत्री कामिनी का विवाह दिल्ली के निवासी पंडित श्याम नारायण जुत्शी के साथ सम्पन्न हुआ था।

''हमदम'' साहब के सबसे बड़े पुत्र पंडित हरि प्रसाद मुन्शी अपनी पढ़ाई समाप्त करने के पश्चात होम्योपैथिक डाक्टर हो गये थे और आगरा में ही रहते थे। आपका विवाह सुश्री कमला शुंगलू के साथ सम्पन्न हुआ था। इस दम्पति के कोई सन्तान नहीं थी।

''हमदम'' साहब के दूसरे पुत्र पंडित जगदम्बा प्रसाद मुन्शी अधिकतर बिरादरी में दमदम भाई के नाम से जाने जाते थे। आपका विवाह फ़ैजाबाद की निवासी सुश्री दुलारी कौल के साथ सम्पन्न हुआ था। आपने अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात प्रारम्भ में कुछ वर्ष डाक घर में नौकरी की पर किन्हीं कारणों से बाद में उससे त्याग पत्र दे दिया और आगरा में स्कूल और कालेज की पुस्तकों को प्रकाशित करने का व्यवसाय प्रारम्भ किया और सन् 1936 में आगरा में दमदम जी एण्ड कम्पनी के नाम से एक प्रकाशन की फ़र्म स्थापित की और 2 वर्ष तक उत्तर प्रदेश के पुस्तकों के प्रकाशकों के संगठन के अध्यक्ष रहे। आपके एक मात्र पुत्र का नाम श्याम स्वरूप मुन्शी था। जो अपने व्यवसाय को और अधिक बढ़ाने के लिये देश के स्वतंत्र होने के

पश्चात आगरा से उद्योग नगरी कानपुर आ गये और वहां पुस्तकों के प्रकाशन के लिये दो बड़ी कम्पनियां श्याम प्रकाशन मन्दिर तथा काश्मीरी पब्लिशिंग हाऊस नाम से स्थापित की। आपका विवाह सन् 1957 में मध्य प्रदेश के रतलाम ज़िले की सुश्री कृष्णा कारहल्लू के साथ सम्पन्न हुआ था। जो अब राधा मुन्शी के नाम से बिरादरी में प्रसिद्ध हैं। इस दम्पति के तीन पुत्र ब्रह्म स्वरूप, नारायण स्वरूप और गोपाल स्वरूप हैं तथा एक पुत्री दीपा है। जिसका विवाह सन् 2000 में इन्दौर के निवासी प्रदीप शुंगलू के साथ सम्पन्न हुआ है।

ब्रह्म स्वरूप मुन्शी का विवाह सन् 1989 में लखनऊ की सुश्री दिव्या हरकौली के साथ, नारायण स्वरूप मुन्शी का विवाह सन 1993 में देहरादून के निवासी पंडित शिव नारायण तिक्कू की सुपुत्री सुश्री मुक्ता तिक्कू के साथ तथा गोपाल स्वरूप मुन्शी का विवाह कानपुर की सुश्री माधुरी कौल के साथ सम्पन्न हुआ है।

"हमदम" साहब के तीसरे पुत्र पंडित राज्ञा प्रसाद मुन्शी अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात मध्य प्रदेश सरकार के शिक्षा विभाग में इन्सपेक्टर ऑफ स्कूल हो गये थे और उस प्रदेश के समय–समय पर कई जनपदों में नियुक्त रहे आप सेवानिवृत्त होने के पश्चात उज्जैन में बस गये। आपका विवाह जम्मू की सुश्री खिमा चन्ना के साथ सम्पन्न हुआ था। आपके दो पुत्र अशोक तथा राज कुमार और तीन पुत्रियां कुसुम, विनीता और गीता हैं।

"हमदम" साहब के चौथे पुत्र पंडित कैलास प्रसाद मुन्शी अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात वकील हो गये थे। आप अपनी वकालत को चमकाने के लिये आगरा से मध्य प्रदेश चले गये और वहां रायपुर में बस गये। आपका विवाह कृष्णा के साथ सम्पन्न हुआ था। आपके दोनों पुत्र विमल कुमार मुन्शी और योगेन्द्र कुमार मुन्शी प्रख्यात अधिवक्ता हैं पहला रायपुर में तथा दूसरा जबलपुर में वकालत करता है। पुत्रियों में मधु का विवाह जयपुर के पंडित चांद नारायण ज़िब्बू के साथ, प्रीति का विवाह धर परिवार में तथा ज्योति का विवाह पंडित

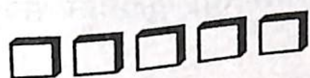
अमर नाथ कौल के साथ सम्पन्न हुआ है।

"हमदम" साहब के पांचवे पुत्र पंडित त्रिलोकी प्रसाद मुन्शी का युवावस्था में ही स्वर्गवास हो गया। आपके छठे पुत्र पंडित राजेश्वर प्रसाद मुन्शी अपनी आगरा में शिक्षा पूर्ण करने के उपरान्त मध्य प्रदेश की प्रशासनिक सेवा में चयनित कर लिये गये थे और काफ़ी उच्च पदों पर आसीन रहे। आपका विवाह सुश्री अन्नपूर्णा कौल के साथ सम्पन्न हुआ था। आपके दो पुत्र सुरेश और दिनेश हैं आपकी तीन पुत्रियां हैं जिनमें मीरा का विवाह सतना के रूप तंखा के साथ, चित्रा का विवाह एक गुर्टू परिवार में तथा इन्द्रा का विवाह लखनऊ के संजय बहादुर के साथ सम्पन्न हुआ है।

"हमदम" साहब के सबसे छोटे और सातवें पुत्र पंडित रामेश्वर प्रसाद मुन्शी का डिफ्थीरिया हो जाने के कारण काफ़ी अल्प आयु में सन् 1927 में निधन हो गया।

"हमदम" साहब अब हमारे मध्य नहीं हैं पर उनकी पैनी लेखिनी द्वारा उर्दू साहित्य की विभिन्न विधाओं में किया गया महत्वपूर्ण योगदान हमें सदा उनका स्मरण करता रहेगा जिसने उर्दू अदब को समृद्ध कर उसमें विभिन्न तत्वों का समावेश किया और उसको एक नवीन गति और उर्जा प्रदान की और उर्दू साहित्य लेखन को अपने प्रयोगों द्वारा एक नवीन स्वरूप प्रदान कर एक बिलकुल नयी दिशा दी जिस क्षेत्र में उस समय तक बहुत अधिक कार्य नहीं हुआ था। आपके जीवन दर्शन को हिन्दी के कवि राधेकृष्ण शर्मा "बन्धु" के शब्दों में कुछ इस प्रकार प्रकट किया जा सकता है।

"धरम की मान्यताओं को भरम से मत कुचल डालो
करम की लेखनी से भाग्य परिभाषा बदल डालो
जहां मुस्कान चेहरे पर प्रणय के गीत गाती है
लगाकर भीड़ या मजमा वहां तुम ग़म को मत पालो।"



एक प्रतिभावान अनूठे प्रशासक

राजा ज्ञान नाथ मदन



कश्मीर घाटी से समय समय पर विभिन्न परिस्थितियों में जो भी कश्मीरी पंडित विवश होकर वहां से निकल कर उत्तरी भारत के विभिन्न मैदानी क्षेत्रों में आकर बसे उन्होंने बहुत ही धैर्य और साहस का परिचय दिया इन कश्मीरी पंडितों ने व्यापक समाज में अपने आत्मबल और परिश्रम द्वारा अपने लिये एक विशिष्ट स्थान बनाया न कि किसी की दया पर आश्रित होकर। उन्होंने कभी भी किसी की लटकन बन कर रहना स्वीकार नहीं किया और सदैव पूर्ण संयम के साथ अपनी मान–मर्यादा की रक्षा की। उन्होंने सदा अपने निर्धारित लक्ष्य की ओर अपने ध्यान को केन्द्रित किया और उसको प्राप्त करने का भरसक प्रयत्न किया पर कभी भी इस प्रक्रिया में अपने आदर्शों और सिद्धांतों के साथ किसी भी प्रकार का कोई समझौता नहीं किया। इन्हीं कुछ विशेष गुणों के कारण वह शासन और प्रशासन के उच्चतम शिखर तक पहुंचने में सफ़ल हुऐ और उन्होंने अपने लिये समाज में एक सम्मानजनक स्थान बनाया तथा ख्याति अर्जित की। इसी प्रकार के एक अनूठे प्रशासक राजा ज्ञान नाथ मदन थे जो ब्रिटिश शासन काल में अपनी कुछ विशेष खूबियों के लिये सम्पूर्ण पंजाब प्रान्त में प्रख्यात थे।

विश्वस्त सूत्रों से प्राप्त की गयी जानकारी के अनुसार राजा ज्ञान नाथ मदन के पूर्वज पहले अपना कुलनाम राज़दान लिखते थे पर चूंकि

बाद में वह श्रीनगर में मदनयार मुहल्ले में रहने लगे इस नाते वह अपना कुलनाम मदन लिखने लगे ताकि अन्य राजदान परिवारों से अलग वह अपनी विशेष पहचान बना सकें। इस मदन परिवार के पूर्वज मुग़ल सम्राट औरंगज़ेब (1658—1707) के शासन काल में कश्मीर घाटी से निकल कर मुग़ल मार्ग द्वारा शाही राजधानी दिल्ली में आ गये थे। उस समय कश्मीर के सूबेदार इफ़्तिख़ार खां ने वहां काफ़ी आतंक मचा रखा था। और उसकी बर्बरता से मुक्ति प्राप्त करने के लिये काफ़ी बड़ी संख्या में कश्मीर से कश्मीरी पंडित देश के अन्य सुरक्षित क्षेत्रों में पयालन कर गये थे।

कालान्तर में इस मदन परिवार के पूर्वज अवध में नवाब शुजाउद्दौला (1753—1775) के शासन काल में दिल्ली से फैज़ाबाद में आकर बस गये और उसके राजदरबार में किसी पद पर नियुक्त कर दिये गये। सन् 1775 में नवाब शुजाउद्दौला की मृत्यु के पश्चात पंडित बख़्त मल मदन पुनः फैज़ाबाद से शाही राजधानी दिल्ली चले गये और वहां बाज़ार सीताराम मुहल्ले में निवास करने लगे जहां उस समय काफ़ी बड़ी संख्या में कश्मीरी पंडित रहते थे और जो उनकी सामूहिक शक्ति का उस समय एक प्रमुख केन्द्र हुआ करता था। पंडित बख़्त मल मदन के दो पुत्र थे जिनके नाम थे केदार नाथ और दीना नाथ।

पंजाब राज के माहराजा रंजीत सिंह (1801—1839) को सन् 1813 में अपने मालख़ाने में अभिलेखों तथा दस्तावेज़ों की उचित देखभाल और व्यवस्था के लिये एक कुशल तथा अनुभवी व्यक्ति की आवश्यकता अनुभव हुई जो बड़ी दक्षता पूर्वक इस कठिन कार्य को सम्पादित कर सके। माहराजा ने इस प्रकार के गुणों से परिपूर्ण व्यक्ति को खोज निकालने के लिये अपना एक संदेशवाहक दिल्ली की बाज़ार सीताराम मुहल्ले में भेजा जहां उस समय विद्वान तथा गुणी कश्मीरी पंडित निवास करते थे। संदेशवाहक ने पंडित गंगा राम रैना को माहराजा रंजीत सिंह की इच्छा से अवगत कराया और उन्हें लाहौर आने का निमंत्रण दिया। कालान्तर में माहराजा रंजीत सिंह ने पंडित गंगा राम रैना को अपने मालख़ाने का

प्रभारी बना दिया।

सन् 1815 में माहराजा रंजीत सिंह ने अपने मालख़ाने का औचक निरीक्षण किया और वह पंडित गंगा राम रैना की कार्य कुशलता से बहुत अधिक प्रभावित और प्रसन्न हुऐ। माहराजा ने पंडित गंगा राम रैना को तुरन्त अपना दीवान बना दिया और उनको इस बात का अधिकार प्रदान किया कि वह अपनी इच्छा के अनुसार किसी भी व्यक्ति को अपना सचिव बना सकते हैं जो उनकी इस कार्य में सहायता करने की योग्यता रखता हो। पंडित गंगा राम रैना ने अपना एक दूत भेज कर इस कार्य के लिये दिल्ली की बाज़ार सीताराम से पंडित दीना नाथ मदन को लाहौर बुला लिया जो उनके सम्बन्धी भी थे और इस प्रकार के कार्य में काफ़ी निपुण थे।

माहराजा रंजीत सिंह युद्ध स्थल में जाने से पूर्व सदैव पंजाब के गुजरात क्षेत्र में स्थित महान कश्मीरी संत धूनी साहब (पंडित मनसा राम राज़दान) की समाधी पर मत्था टेकने अवश्य जाते थे। यहीं पर माहराजा रंजीत सिंह की पंडित दीना नाथ मदन से प्रथम बार भेंट हुई और माहराजा ने उनको दरबार में मिलने का निमंत्रण दिया। माहराजा ने उनकी योग्यता और विद्वता को परख कर उनको अपने दरबार में नियुक्त कर लिया।

पंडित गंगा राम रैना के सन् 1826 में निधन हो जाने के पश्चात माहराजा रंजीत सिंह ने उनके स्थान पर पंडित दीना नाथ मदन को नियुक्त कर दिया और उनको सन् 1821 में दीवानी तथा फौजदारी अदालत का हाकिम बना दिया। पंडित दीना नाथ मदन को सन् 1838 में माहराजा रंजीत सिंह ने दीवान बना दिया और उस समय उनकी वार्षिक आय लगभग 10,000/– रूपये थी। वह कुछ उन गिने चुने व्यक्तियों में से एक थे जो पंजाब राज के अन्तिम वर्षों में एक छोटे से स्तर से तरक्की करते हुऐ शासन तंत्र के उच्चतम शिखर तक पहुंचे थे। आपको पंजाब का टेलीरैन्ड कहा जाता था और आपका व्यवहार बिलकुल योरोपियन

कूटनीतिज्ञों के समान था। आप अपने समय के एक महान द्रष्टा थे और आपको भविष्य में घटित होने वाली घटनाओं का पूर्व में ही आभास हो जाता था कि आगे क्या होने वाला है और उसी के अनुसार आप पैंतरा बदल कर अपना मार्ग निर्धारित करते थे। आपके इसी गुण के कारण यद्यपि आपने अनेक व्यक्तियों की किस्मत को बनते और बिगड़ते देखा पर आपके जीवन स्तर पर कभी भी किसी प्रतिकूल परिस्थिति का बुरा प्रभाव नहीं पड़ा और न ही कभी आपको कोई हानि उठानी पड़ी। आपके भाग्य का सितारा सदैव चमकता रहा और आप मान–सम्मान तथा ख्याति अर्जित करते रहे। जब की युद्धों की भीषण विभिष्का में अनेक गणमान व्यक्ति लुट पिट कर बुरी तरह से तबाह हो गये और उनका कोई नाम लेने वाला न रहा। यद्यपि आप राष्ट्रभक्त थे पर आपका राष्ट्र प्रेम अपने हितों से सर्वोपरि न था। आप अंग्रेज़ों से घृणा करते थे पर अपने आर्थिक लाभ के लिये आपने पंजाब में सिख शासन समाप्त होने के पश्चात अंग्रेज़ों के साथ भी कार्य किया और उनसे कूटनीति के स्तर पर मधुर सम्बन्ध स्थापित करने में सफ़ल हुऐ। आप माहराजा रंजीत सिंह के वित्त मंत्री हो गये थे और आपने अंग्रेज़ों द्वारा युद्ध में सिख सेना को परास्त करने के पश्चात 16 मार्च सन् 1846 को अमृतसर की ऐतिहासिक सन्धि पर पंजाब राज की ओर से हस्ताक्षर किये थे।

पंडित दीना नाथ मदन की सूझ–बूझ और दूरदर्शिता का ही परिणाम था कि युद्ध में परास्त होने के पश्चात भी अंग्रेज़ों ने आपको सन् 1847 में राजा की उपाधि से अलंकृत किया और आपको कलानौर का ईलाका एक जागीर के रूप में प्रदान किया जिसकी उस समय वार्षिक आय लगभग 20,000/– रूपये थी।

राजा दीना नाथ मदन ने लाहौर के वज़ीर खां चौक क्षेत्र में अपने परिजनों के निवास के लिये भव्य हवेलियों तथा वहां पुलिस लाईन्स के निकट एक शिव मन्दिर का निर्माण कराया। आपके दो पुत्र अमर नाथ और निरंजन नाथ थे। आपके ज्येष्ठ पुत्र पंडित अमर नाथ मदन से आपकी

पटरी नहीं खाती थी क्योंकि उनका स्वभाव आपके स्वभाव के एकदम विपरीत था आपको अपने ज्येष्ठ पुत्र पंडित अमर नाथ मदन का रहन–सहन व तौर तरीकां बिलकुल पसन्द नहीं था इस नाते आपने उनको अपनी जायदाद से वंचित कर अपने दूसरे पुत्र पंडित निरंजन नाथ मदन को अपना वारिस बना दिया। दुर्भाग्यवश दीवान निरंजन नाथ मदन की अपनी कोई सन्तान नहीं हुई और जिसके कारण राजा दीना नाथ मदन की सारी सम्पत्ति के वारिस प्रभु की इच्छा से अन्तोगत्वा दीवान अमर नाथ मदन के वंशज ही बने जिनको राजा दीना नाथ मदन ने अपनी जायदाद से वंचित करने का प्रयास किया था। राजा दीना नाथ मदन की लगभग 66 वर्ष की आयु में लाहौर में सन् 1857 में मृत्यु हो गयी।

दीवान अमर नाथ मदन का जन्म 1 अगस्त सन् 1822 को लाहौर के वज़ीर खां चौक में स्थित अपनी पैतृक हवेली में हुआ था। आप उर्दू तथा फ़ारसी भाषा के एक जाने माने शायर और विद्वान थे। आप माहराजा रंजीत सिंह के दरबार में राज कवि हो गये थे। आपने उर्दू तथा फ़ारसी भाषा में अनेक पुस्तकें लिखीं जिनमे माहराजा रंजीत सिंह का जीवन परिचय प्रमुख है। यद्यपि आप एक गठे हुऐ शरीर के कड़ियल नवयुवक थे पर हैज़ा हो जाने के कारण सन् 1867 में केवल 45 वर्ष की आयु में आप की दुःखद मृत्यु हो गयी। क्योंकि उस समय तक इस रोग के उचित उपचार के सन–साधन उपलब्ध नहीं थे।

दीवान अमर नाथ मदन "अकबरी" के दो पुत्र राम नाथ और मान नाथ थे। दीवान बहादुर दीवान राम नाथ मदन अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात पंजाब प्रान्त की न्यायिक सेवा में आ गये थे। आपको चार्ल्स ऐटिचिन्सन ने ज़िला जज बना दिया था। दीवान मान नाथ मदन उर्दू तथा फारसी के एक प्रतिष्ठित शायर थे। आप अपने पिता के समान इन दोनों भाषाओं में पारन्गत थे और अपना कलाम "अज़गरी" तख़ल्लुस से करते थे। आपकी शायरी का कुछ अंश बहारे गुलशने कश्मीर में प्रकाशित है। आपकी सन् 1894 में लगभग 34 वर्ष की आयु में मृत्यु हो गयी।

दीवान मान नाथ मदन के दो पुत्र क्रमशः सोम नाथ और ज्ञान नाथ तथा दो पुत्रियां धनराज और कमला थी। इन सबका लालन पालन उनके चाचा दीवान बहादुर दीवान राम नाथ मदन के संरक्षण में सम्पन्न हुआ क्योंकि उनके पिता की काफ़ी अल्पआयु में मृत्यु हो गयी थी। धनराज मदन का विवाह बाद में पंडित सूरज नारायण हाक्सर के पुत्र तथा इन्दौर रियासत क़े दीवान पंडित स्वरूप नारायण हाक्सर के पौत्र पंड़ित जगदीश नारायण हाक्सर के साथ सम्पन्न हुआ था।

दीवान सोम नाथ मदन का जन्म सन् 1881 में तथा आपके अनुज भ्राता राजा ज्ञान नाथ मदन का जन्म सन् 1885 में लाहौर के वजीर खां चौक मुहल्ले में स्थित अपनी पैतृक हवेली में हुआ था। इन दोनों भ्राताओं की शिक्षा लाहौर के राजकीय कालेज में सम्पन्न हुई। जिसको अंगेज़ों द्वारा सन् 1862 में भारतीय छात्रों को अंग्रेज़ी की शिक्षा देने के उद्देश्य से स्थापित किया गया था ताकि वह शासन तंत्र की एक कड़ी बन सके। यह दोनों भ्राता अपनी शिक्षा समाप्त कर लेने के पश्चात अंगेज़ों द्वारा तत्कालीन पंजाब प्रान्त की न्यायिक सेवा में ले लिये गये थे और उनको पारिवारिक परम्परा के अनुसार मुन्सिफ़ बना दिया गया था। दीवान सोम नाथ मदन बाद में ज़िला और सेशंस जज बना दिये गये थे। आप बहुत ही सरल स्वभाव के व्यक्ति थे। आपका युवावस्था में सन् 1930 में लगभग 49 वर्ष की आयु में निधन हो गया।

दीवान ज्ञान नाथ मदन ने अपने भाई के स्वभाव के एक दम विपरीत योरोपियन जीवन शैली को अंगीकार करने पर अधिक महत्व दिया। आप मुन्सिफ़ होने के पश्चात अपने पैतृक आवास को त्याग कर अंग्रेज़ों की सोहबत करने के उद्देश्य से उनके मध्य एक भव्य बंगला क्रय करके जेल रोड पर रहने लगे जहां उस समय अधिकतर अंग्रेज़ उच्च अधिकारी वर्ग निवास करता था। आप खान पान के शौकीन थे और अपनी वेश भूषा इत्यादि में इतनी अधिक अंग्रेज़ों की नकल करने लगे कि आपकी पत्नी चांद रानी कभी कभी आपकी इन हरकतों से खिन्न होकर आपको तंज़ से

''टोडी बच्चा'' कहती थीं।

जब 28 जून सन् 1914 को सरबिया के एक नवयुवक द्वारा आस्ट्रिया के भावी सम्राट राज कुमार आकिदूके फरडीनन्द की नृशंस हत्या कर दिये जाने के कारण प्रथम विश्व युद्ध प्रारम्भ हुआ तो दीवान ज्ञान नाथ मदन को यह अपने भाग्य को चमकाने और आर्थिक लाभ कमाने का एक सुनहरा अवसर प्रतीत हुआ। आपने तुरन्त अपने पद का उपयोग करते हुए सम्पूर्ण पंजाब प्रान्त के किसानों को ब्रिटिश इन्डियन आर्मी में भरती कराने की प्रक्रिया को एक जन आन्दोलन का रूप दे दिया। जिसके कारण पंजाब प्रान्त से बहुत बड़ी संख्या में किसान फौज में भर्ती होने लगे और युद्ध भूमि को ओर प्रस्थान करने लगे। आपकी युद्ध के प्रति की गयी इस अभूतपूर्व सेवा से अंग्रेज़ इतने अधिक प्रभावित और प्रसन्न हुए कि उन्होंने आपको इस महान कार्य के उपलक्ष्य में उपहार स्वरूप तीन सनदें और सम्मान के रूप में एक अलंकृत तलवार भेंट की।

दीवान ज्ञान नाथ मदन को कालान्तर में उनकी निष्ठा तथा कर्तव्य परायणता से प्रसन्न होकर अंग्रेज़ों ने उनको राय साहब की उपाधि से विभूषित किया और पंजाब प्रान्त के मोन्टगोमरी ज़िले में उनको चार गांव जागीर के रूप में प्रदान किये।

सन् 1922 में अंग्रेज़ों ने दीवान ज्ञान नाथ मदन को अपने विदेश विभाग में नियुक्त कर दिया जिसका गठन देश की विभिन्न रियासतों से सम्पर्क स्थापित करने के उद्देश्य से किया गया था। आपको अंग्रेज़ों ने सन् 1925 में राय बहादुर के अलंकरण से सुशोभित किया। आपके उस समय घनिष्ठ मित्रों में फिरोज़ खां नून जो बाद में पाकिस्तान के प्रधानमंत्री बने, सिकन्दर हयात, खिर्ज हयात, राजा नरेन्द्र नाथ रैना (छिज बल्ली) जैसे गणमान व्यक्ति थे।

दीवान ज्ञान नाथ मदन जेल रोड पर स्थित अपने भव्य बंगले में बड़े राजसी ठाट–बाट के साथ रहते थे जहां आपकी हर अदा बिलकुल निराली होती थी। आप बिलकुल शाही ढंग के साथ अपनी सजी धजी

लैन्डो घोड़ा गाड़ी पर नगर का भ्रमण करते थे। अपने आवास पर यदा कदा भव्य पार्टियों को आयोजित करना आपका एक मुख्य शग़ल था। जिनमें नगर के प्रतिष्ठित तथा गणमान व्यक्तियों को आमंत्रित किया जाता था। इन पार्टियों में जो केक बनवाये जाते थे उन पर अधिकतर आईसिंग के लिये यूनियन जैक के रंगों का प्रयोग किया जाता था जो उनकी अंग्रेज़ों के प्रति भक्ति को दर्शाता था। चूंकि आप एक उच्च अधिकारी थे इन नाते काफ़ी बड़ी संख्या में अधीनस्थ अधिकारी गण तथा अन्य गणमान व्यक्ति आपसे मिलने आते थे। चूंकि अपने व्यस्त कार्यक्रम में आपके लिये हर व्यक्ति से अलग–अलग मिलने का न तो समय था और न ही इस प्रकार का कोई प्रयोजन सम्भव था अतः इस समस्या के निराकरण के लिये आपने एक बिलकुल नया तरीका ईजाद किया था। आपने अपने बंगले के मुख्य द्वार के समीप एक हलब पेड़ के तने पर कील से एक काला लकड़ी का बक्सा टंगवा दिया था जिसके ऊपरी छोर पर एक झिरी कटी हुई थी और उस पर अंग्रेज़ी में सफ़ेद पेंट से Not at Home लिखा था जो भी व्यक्ति आपसे मिलने आता वह अपना Visiting Card उस लकड़ी के बक्से में झिरी से डाल देता। हर सप्ताह के किसी एक ख़ास दिन पर वह बक्सा खोला जाता और उसमें पड़े हुए Visiting Cards वाले व्यक्तियों को फिर जलपान पर आमंत्रित किया जाता और उनसे सामूहिक रूप से दीवान ज्ञान नाथ मदन मिलते थे और उनकी समस्याओं को बड़ी गम्भीरता पूर्वक सुनते थे तथा उनका निराकरण करते थे। यह आपने उस समय जनता से मिलने का एक अनूठा तरीका अपनाया था।

यद्यपि आप स्वयं शायर नहीं थे पर उर्दू तथा फ़ारसी की शेर–शायरी से आपको बेहद लगाव था। आपने अनेक शायरों के कलाम को हिफ़्ज़ कर रखा था। और बात बात में उस विषय पर मौजूं शेर फ़रमा देते थे। आप एक विचित्र स्वभाव के व्यक्ति थे जिनकी जीवन शैली के बारे में अपनी कुछ विशेष मान्यताऐं और धारणायें थीं। आपको सन् 1934 में भारत के तत्कालीन गर्वनर जनरल लार्ड विलिंगडन ने सी0आई0ई0 के अलंकरण

से नवाज़ा जिसमें आपको वाईसराय के साथ बैठने का अधिकार प्रदान किया गया।

आपको अंग्रेज़ों ने सन् 1935 में दिल्ली के निकट की नाभा रियासत की रीजेन्सी कौंसिल का अध्यक्ष बना दिया उसी वर्ष किंग जार्ज पंचम के शासन के 25 वर्ष पूर्ण होने के उपलक्ष्य में आपको नाभा रियासत के शासन तंत्र को तर्क संगत तथा न्यायपूर्ण बनाने के लिये रजत जयन्ती पदक से सम्मानित किया गया जब कभी भी किसी भी रियासत की कार्यप्रणाली में अंग्रेज़ों को कुछ गड़बड़ी प्रतीत होती थी तो वह दीवान ज्ञान नाथ मदन को उसको सुधारने के लिये तुरन्त उस रियासत में भेजते थे ताकि वहां के प्रशासन को समय रहते सुव्यवस्थित किया जा सके। क्योंकि अंग्रेज़ों को आपकी कार्य कुशलता पर पूर्ण विश्वास था और वह आपको इस प्रकार की कूटनीतिज्ञ कार्य पद्धति में निपुण मानते थे। आप सन् 1940 में 55 वर्ष की आयु पूर्ण हो जाने पर सेवा निवृत्त हुऐ। अंग्रेज़ों ने आपको सेवा निवृत्त हो जाने के पश्चात जयपुर रियासत भेज दिया जहां आप वहां के शासक माहराजा मान सिंह द्वितीय के प्रधान मंत्री नियुक्त कर दिये गये। आप कुछ वर्ष पश्चात सन् 1944 के आस पास इन्दौर रियासत के प्रधानमंत्री बना दिये गये। आपकी देश के प्रति की गयी उत्कृष्ट सेवाओं के लिये अंग्रेज़ों ने आपको "राजा" की उपाधी से अलंकृत किया।

राजा ज्ञान नाथ मदन का विवाह सन् 1900 के आस पास लाहौर की लारेन्स रोड के निवासी पंडित मनोहर नाथ जुत्शी की पुत्री सुश्री चांद रानी के साथ सम्पन्न हुआ था। आपके एक पुत्र ब्रह्मनाथ और एक पुत्री उमा हैं जिनका जन्म 1905 में हुआ था। उमा का विवाह उड़ीसा राज्य के कटक नगर की रियासत किला दर्पण के राजा पंडित श्याम सुन्दर नारायण सुत्थू के साथ सम्पन्न हुआ था। उमा सुत्थू बिरादरी में रानी दपर्ण के नाम से प्रसिद्ध हैं। आपआज कल अपने पुत्र रामेश्वर नारायण सुत्थू के साथ गुणगांव में रहती हैं और 97 वर्ष की आयु में भी काफ़ी क्रियाशील हैं।

राजा ज्ञान नाथ मदन के एक मात्र पुत्र दीवान ब्रह्म नाथ मदन का जन्म सन् 1903 में लाहौर में हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा लाहौर के राजकीय कालेज में सम्पन्न हुई। आपने फिर पंजाब विश्वविद्यालय से स्नातक की उपाधि ग्रहण की। आपको अपने छात्र जीवन में नाटकों में अभिनय करने में विशेष रूचि रही और आपने अनेक धार्मिक नाटकों में मुख्य भूमिकाओं में बड़े ही प्रभावशाली ढंग से अभिनय किया तथा दर्शकों की प्रशंसा का पात्र बने। आप बहुत ही आकर्षक व्यक्तित्व के स्वामी थे। आपका विवाह कृष्णा नेहरू के साथ सम्पन्न हुआ था। जो लाहौर के निवासी पंडित कुंवर प्रसाद नेहरू की पुत्री थीं। आपके तीन पुत्र क्रमशः रवीन्द्र नाथ, राजेन्द्र नाथ तथा नरेन्द्र नाथ और तीन पुत्रियां बीना, पदमा और प्रेमा हैं जिसमें बीना का विवाह पंडित कुलदीप जुत्शी के साथ, पदमा का विवाह दिल्ली के एक खन्ना परिवार में तथा प्रेमा का विवाह एक मल्होत्रा परिवार में सम्पन्न हुआ है। दीवान ब्रह्म नाथ मदन की लगभग 52 वर्ष की आयु में सन् 1956 के आस पास शिमला में मृत्यु हो गयी। उसी वर्ष कुछ माह पूर्व आपकी मां श्रीमती चांदरानी मदन की मृत्यु हो गयी।

सन् 1947 में देश के विभाजन के उपरान्त राजा ज्ञान नाथ मदन को उनकी लाहौर की सम्पत्ति के मुआवजे में भारत सरकार ने शिमला में भूमि प्रदान की जहां आपने अपने परिजनों के आवास के लिये दो Cottage तथा व्यवसाय के लिये दो सिनेमा हाल निर्माण कराये। आपको दो वस्तुओं से बहुत अधिक प्रेम था। एक तो किस प्रकार अधिक से अधिक धन को अर्जित किया जाये दूसरा किस प्रकार अपनी आयु को और अधिक लम्बा किया जाये। आपको किसी ने समझा दिया था कि पैदल चलने से मनुष्य की आयु अधिक हो जाती है इस नाते आप अपने शिमला में प्रवास के दौरान प्रतिदिन नियमित रूप से प्रातः काल और सांय काल लगभग चार किलोमीटर की पदयात्रा करते थे और उसको जांचने के लिये सदैव अपनी वास्कट की जेब में एक पेडोमीटर रखते थे। बीच–बीच में आप किसी एकान्त स्थल पर बैठ कर विश्राम करते थे जहां आप खुल कर हंसते थे

क्योंकि आपकी धारणा थी कि ऐसा करने से फेफड़ों का व्यायाम होता है और वह मजबूत होते हैं तथा मनुष्य की आयु बढ़ती है। आप अपनी आयु बढ़ाने की प्रक्रिया के प्रति इतने अधिक गम्भीर रहते थे कि आपने अपने एक मात्र पुत्र की शव यात्रा व दाह संस्कार में इसलिये भाग नहीं लिया कि कहीं उससे मानसिक तनाव और शारीरिक परिश्रम के कारण आपकी आयु कम न हो जाये।

राजा ज्ञान नाथ मदन महात्मा गांधी की विचारधारा से बिलकुल सहमत नहीं थे क्योंकि उनका स्पष्ट मत था कि इससे देश को और समाज को कोई लाभ होने वाला नहीं अपितु यह समाज को आगे चलकर एक ऐसे मोड़ पर ले जायेगा जहां से फिर लौट पाना कदाचित सम्भव नहीं हो सकेगा। यह विचारधारा समाज के विभिन्न वर्गों में मतभेद उत्पन्न कर उसके विघटन का मार्ग प्रशस्त करेगी। राजा ज्ञान नाथ मदन के वह शब्द आज की राजनीति के सन्दर्भ में कितने अर्थपूर्ण प्रतीत होते हैं जहां हर राज नेता वोट बैंक की राजनीति के अन्तर्गत समाज के हर वर्ग को आपस में लड़ा कर अपना उल्लू सीधा कर रहा है और अपनी कूटनीति द्वारा सम्पूर्ण समाज का शोषण कर रहा है। हर नेता अपने वर्ग विशेष की संख्या के बल पर अपनी राजनीतिक रोटियां सेंकने की जुगाड़ में है और अपने को अपनी जमात का देश की प्रजातांत्रिक व्यवस्था में राजा मान बैठा है। जो देश के संविधान में निहित भावनाओं के एकदम प्रतिकूल है। यह विभिन्न जातियों के मठाधीश आज के युग के राजा हैं जिनके आगे देश की कानून और व्यवस्था का कोई मूल्य नहीं क्योंकि उनके अपने इलाके में केवल उन्हीं का कानून चलता है और उनके हुक्म के बग़ैर वहां एक पत्ता भी नहीं हिल सकता है।

राजा ज्ञान नाथ मदन ने एक भरा पूरा जीवन व्यतीत किया। आपको ब्रिटिश साम्राज्य का Casabianca कहा जाता था। आपको हर उस वस्तु से प्रेम था जो विदेशों में निर्मित की गई हो। आपका शिमला में अपने आवास में 92 वर्ष की आयु में सन् 1977 में निधन हो गया। आपके लम्बे जीवन के अनेक ऐसे पहलू हैं जिन पर विस्तार से प्रकाश

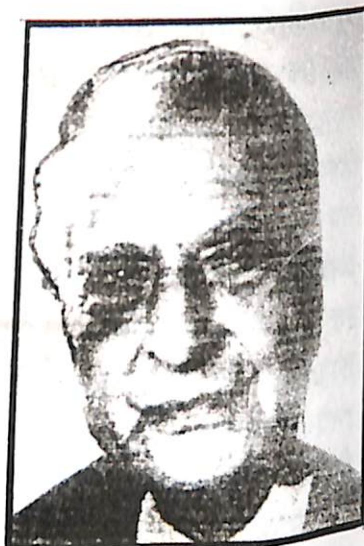
डालने की आवश्यकता है। आपने सदैव अपने जीवन में कुछ विशेष वस्तुओं को महत्व दिया और उसी लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये समर्पित भाव से कार्यशील रहे तथा कभी भी अपने को निर्धारित मार्ग से विचलित नहीं होने दिया। आपकी जीवन गाथा को हिन्दी के सशक्त हस्ताक्षर धर्मेन्द्र "गुमनाम" के शब्दों में कुछ इस प्रकार प्रकट किया जा सकता है:—

ज़िन्दिगी ललाट की शिकन
ज़िन्दिगी है चुलबुली चुभन
ज़िन्दिगी है गीत प्यार का
ज़िन्दिगी है दोस्तों हवन



एक महान चिंतक, विचारक और कूटनीतिज्ञ

पंडित परमेश्वर नारायण हाक्सर



कश्मीर घाटी ने समय–समय पर ऐसी महान विभूतियों को जन्म दिया जिन्होंने अपने ज्ञान के प्रकाश से समस्त संसार को प्रज्जवलित कर दिया और अपने विचारों की ऐसी अनमोल गंगा बहायी कि हर व्यक्ति उनका गुणगान करने लगा। इन मनीषियों ने अपने ज्ञान से समाज के विभिन्न क्षेत्रों में न केवल क्रान्तिकारी परिवर्तन किये अपितु मनुष्य की चिंतनशक्ति को एक नयी दिशा दी। उन्होंने अपने कठोर परिश्रम और साधना के द्वारा अनेक क्षेत्रों में नये कीर्तिमान स्थापित किये और अपने अनूठे कार्यों के लिये मान–सम्मान पाया। वह सबके लिये आदर का पात्र बने और पथ प्रदर्शक कहलाये। उन्होंने कभी भी अपने आदर्शों और सिद्धांतों के साथ कोई समझौता नहीं किया और हर विकट परिस्थिति का बड़े धैर्य तथा साहस के साथ सामना किया। उन्होंने प्रतिकूल परिस्थितियों तथा बिलकुल नये वातावरण में भी अपनी सूझ–बूझ का परिचय देते हुए बिना किसी पर आश्रित रहते हुए अपने को व्यापक समाज में सम्मानपूर्वक स्थापित करने का प्रयास किया और अपने ध्येय में वह सफल भी हुऐ। समाज के अन्य वर्गों, ने उनकी योग्यता, ज्ञान और कार्य करने की अदभुत क्षमता का लोहा माना और उनके मर्यादित आचरण की भूरि–भूरि प्रशंसा की वह अनेक व्यक्तियों के

लिये एक आदर्श और प्रेरणा का पात्र बने तथा समाज में अपना एक विशेष स्थान बनाने में सफल हुऐ। इसी प्रकार का एक अनूठा व्यक्तित्व पंडित परमेश्वर नारायण हाक्सर का था। जिनका बचपन यद्यपि मध्य भारत के साधन विहीन एक छोटे से कस्बे में व्यतीत हुआ पर वह अपनी योग्यता, ज्ञान और कठोर परिश्रम के बल पर सम्पूर्ण भारत के भाग्य विधाता बन गये। आपने देश के शासन तंत्र के उच्चतम शिखर पर रह कर ऐसी अनेक नीतियां निर्धारित कीं जिन्होंने सम्पूर्ण देश में बहुत कम समय में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन ला दिया और देश के सामाजिक ढांचे को एकदम बदल कर रख दिया।

पंडित परमेश्वर नारायण हाक्सर के पूर्वज मूल रूप से कश्मीर घाटी के बारामुला ज़िले के हाकचर गांव के निवासी थे इस नाते वह अपना कुलनाम हाक्सर लिखने लगे। सन् 1680 के आस पास पंडित महेश हाक्सर अपने हाकचर गांव से निकल कर रियासत की राजधानी श्रीनगर आ गये और वहां हब्बा कदल के निकट कनी कदल में निवास करने लगे। आपके पुत्र का नाम मनोहर हाक्सर तथा पौत्र का नाम रूप राम हाक्सर था। पंडित रूप राम हाक्सर के एक मात्र पुत्र पंडित नन्द राम हाक्सर थे जिनके दो पुत्र क्रमशः साहिब राम और सीताराम थें

विश्वस्त सूत्रों से प्राप्त की गयी जानकारी के अनुसार पंडित सीताराम हाक्सर कश्मीर घाटी में अपनी उर्दू तथा फ़ारसी भाषा की शिक्षा समाप्त करने के पश्चात अपने भाग्य को परखने के उद्देश्य से सन् 1804 में कश्मीर घाटी से मुग़ल मार्ग द्वारा देश की शाही राजधानी दिल्ली आ गये पर वहां उस समय अंग्रेज़ों के बढ़ते हुऐ प्रभाव को देखते हुऐ आपने दिल्ली में बहुत अधिक समय तक निवास करना कुछ उचित नहीं समझा। उस समय मुग़ल सम्राट शाह आलम द्वितीय (1759–1806) का शासन था जो केवल लाल किले के प्रांगण तक ही सीमित था। पंडित सीताराम हाक्सर ऐसे वातावरण में एक अच्छी नौकरी पाने की सम्भावनाओं का आंकलन करने के पश्चात दिल्ली से पलायन करके ग्वालियर रियासत चले गये जहां उनको उस समय नौकरी पा जाने की कदाचित सम्भावना

कुछ अधिक लगी। कुछ माह पश्चात आपके पुत्र पंडित जगत नारायण हाक्सर पुनः दिल्ली वापस आ गये और वहां बाजार सीताराम मुहल्ले में रहने लगे जो उस समय दिल्ली में कश्मीरी पंडितों का एक प्रमुख केन्द्र था।

पंडित जगत नारायण हाक्सर के एक मात्र पुत्र पंडित बिशन नारायण हाक्सर का जन्म सन् 1805 में दिल्ली की सीताराम बाजार में हुआ। आपकी उर्दू तथा फारसी भाषा की शिक्षा निकट के एक मकतब में कुशल तथा अनुभवी मौलवियों के संरक्षण में सम्पन्न हुई और आप बहुत शीघ्र इन दोनों भाषाओं के एक अच्छे ज्ञाता हो गये। आप भगवान श्री कृष्ण के सच्चे उपासक थे और प्रतिदिन उनकी पूजा–अर्जना बड़ी ही श्रद्धापूर्वक करते थे। आप भक्ति रस से ओत–प्रोत शायरी करते थे और आपकी शायरी में अधिकतर भगवान श्री कृष्ण का ही गुणगान होता था। आपने बाज़ार सीतराम की गली प्रेम नारायण में अपने परिजनों के निवास के लिये दो भव्य हवेलियां "रंग महल" और "शीश महल" निर्माण करवायीं। आपने मथुरा जिले में एक भव्य गोपाल मन्दिर तथा बिरादरी के सदस्यों के वहां ठहरने के लिये एक कश्मीरी धर्मशाला का भी निर्माण कराया। आपका लगभग 85 वर्ष की आयु में सन् 1890 में बाजार सीताराम में स्थित अपनी हवेली में निधन हो गया।

पंडित बिशन नारायण हाक्सर के चार पुत्र क्रमशः कन्हैयालाल उर्फ़ श्याम नारायण, स्वरूप नारायण, प्रेम नारायण और धर्म नारायण थे। आपके ज्येष्ठ पुत्र कन्हैया लाल हाक्सर बाद में दिल्ली से पलायन करके ग्वालियर रियासत में जाकर बस गये थे।

पंडित स्वरूप नारायण हाक्सर का जन्म सन् 1824 में दिल्ली की बाज़ार सीता राम में स्थित अपनी पैतृक हवेली में हुआ था। आपकी अंग्रेज़ी की शिक्षा देहली कालेज में सम्पन्न हुई जो आजकल सेन्ट स्टीफ़ेन्स कालेज के नाम से प्रख्यात है। आप अपनी कक्षा में काफ़ी मेधावी छात्र माने जाते थे इस नाते अपने अध्यापकों के प्रिय थे।

देहली कालेज के तत्कालीन हेडमास्टर एफ0 टेलर और प्रिंसपल

ऐ0 स्पेन्जर एम0डी0 आपकी प्रतिभा से बहुत अधिक प्रसन्न और प्रभावित थे। इन दोनों महानुभावों ने आपकी शिक्षा समाप्त हो जाने के पश्चात आपको इन्दौर रियासत के एक अंग्रेज़ी माध्यम के स्कूल में अध्यापन का कार्य ग्रहण करने की सलाह दी पर चूंकि उस समय तक उचित यातायात के साधन विकसित नहीं हो पाये थे और लम्बी यात्रा करने में समय के साथ–साथ मार्ग में लुट पिट जाने का सदा भय बना रहता था। अतः आपको प्रारम्भ में दिल्ली से इतनी दूर इन्दौर जाकर नौकरी करना कुछ अटपटा सा लगा। पर जब आपको आपके प्रिंसपल ने कई बार उलाहना दिया और कहा कि हम इंग्लैण्ड से इतनी दूर भारत आकर एक दम नये वातावरण में कार्य कर रहे हैं और तुम अपने देश में इन्दौर तक जाने का कष्ट उठाने के लिये अपने को मानसिक रूप से तैयार नहीं कर पा रहे हो तो कोई तुमसे जीवन में क्या अपेक्षा कर सकता है। पंडित स्वरूप नारायण हाक्सर को उनके प्रिंसपल का यह तीखा वाक्य एक तीर के समान लगा। जिसने उनकी अन्तर आत्मा को झकझोर कर रख दिया और उन्होंने दिल्ली से इन्दौर जाने का द्रढ़ निश्चय किया ताकि वह अपने प्रिंसपल की आकांक्षाओं के अनुरूप अपने को सिद्ध कर सकें।

पंडित स्वरूप नारायण हाक्सर ने सन् 1846 में दिल्ली से इन्दौर तक की कठिन यात्रा बैलगाड़ी द्वारा प्रारम्भ की और मार्ग में विभिन्न स्थानों पर विश्राम करते हुए अपनी इस यात्रा को पूर्ण करने में लगभग 2 माह का समय लिया जो स्वयं इस बात को दर्शाता है कि उस समय इस प्रकार की लम्बी यात्रा करना कितना कठिन और दुश्कर कार्य हुआ करता था। और अक्सर मार्ग में ठग तथा उचक्के यात्रियों को अकेला पाकर उनकी हत्या तक कर देते थे।

आपने इन्दौर रियासत में पहुंचने के पश्चात वहां के सिटी स्कूल में अध्यापन का कार्य प्रारम्भ किया जिसके लिये आपके नाम का अनुमोदन आपके देहली कालेज के प्रिंसपल ने किया था। आपकी प्रतिभा और कार्य कुशलता से प्रभावित होकर सन् 1850 में मध्य भारत में गर्वनर जनरल के ऐजेन्ट ने आपको वहां की रीजेन्सी में नियुक्त कर दिया और 175/–

रूपये माहवार पर अपना मीर मुन्शी बना लिया। आपको 20/- रूपये माहवार इसके अतिरिक्त अपने स्कूल से मिलता था। आप 22 मई सन् 1851 को मध्य भारत के तत्कालीन गर्वनर जनरल के एजेन्ट सर आर0एम0 सी0 हेमिल्टन बौरोनेट के पूर्णकालिक मीर मुन्शी बना दिये गये। इस पद पर पहले आपके देहली कालेज के सहपाठी शौकत अली कार्यरत थे। लगभग 5 वर्ष इस पद पर कार्य करने के पश्चात पंडित स्वरूप नारायण हाक्सर को मध्य भारत की बुन्देलखण्ड रीजेन्सी का अंग्रेज़ों ने दीवान बना दिया। आपने हिन्दू धार्मिक ग्रन्थों "महाभारत" तथा "विष्णु पुराण" का बहुत ही सुन्दर फ़ारसी भाषा में अनुवाद किया। आपकी यह ऐतिहासिक कृतियां आज भी तमिलनाडू के चेन्नई नगर में स्थित थियोसोफ़िकल सोसाइटी के पुस्तकालय में सुरक्षित हैं जिसे इन अमूल्य कृतियों को दान स्वरूप उनके वंशजों ने भेंट किया था। आपने मालवा क्षेत्र की संस्कृति और सभ्यता के बारे में भी विस्तार से लिखा है जिसमें मुख्य रूप से इन्दौर के व्यक्तियों की जीवन शैली का वर्णन है।

सन् 1857 के ग़दर के पश्चात पंडित स्वरूप नारायण हाक्सर को अंग्रेज़ों से एक बहुत बड़ी धनराशि मुआवज़े के रूप में प्राप्त हुई क्योंकि अंग्रेज़ फ़ौजियों ने उनकी दिल्ली की बाज़ार सीताराम में स्थित हवेलियों को काफ़ी क्षति पहुंचायी थी और उनमें जमकर लूट पाट की थी। पंडित स्वरूप नारायण हाक्सर के कर्नल डयूरेन्ड से बहुत अधिक मधुर सम्बन्ध थे। जिसने दिल्ली के तत्कालीन चीफ़ कमिश्नर सी0बी0 सैन्डर्स पर अपने प्रभाव का प्रयोग करते हुए उनको यह धनराशि दिलवायी थी। इसी धनराशि से पंडित स्वरूप नारायण हाक्सर ने मथुरा में एक सुन्दर गोपाल मन्दिर और धर्मशाला का निर्माण कराया। आपको अंग्रेज़ों ने सन् 1865 के आस पास एजेन्ट आर0जे0 मेडे का सचिव बना दिया। आपको अंग्रेज़ों ने सन् 1880 में सी0आई0ई0 के अलंकरण से सुशोभित किया। पंडित स्वरूप नारायण हाक्सर सक्रिय सरकारी सेवा से सन् 1884 के फरवरी माह में सेवा निवृत्त हुऐ। उस समय इंग्लैण्ड के सेक्रट्री ऑफ स्टेटस ने आपकी राज के प्रति की गयी अति विशिष्ट सेवाओं की सराहना

करते हुऐ आपकी पेंशन के लिये विशेष प्राविधान किया। आपकी इन्दौर रियासत में लगभग 74 वर्ष की आयु में सन् 1898 में मृत्यु हो गयी।

पंडित स्वरूप नारायण हाक्सर के पांच पुत्र क्रमशः सूरज नारायण, रूप नारायण, हृदय नारायण, राम नारायण और शिव नारायण थे। आपके पुत्र डॉ0 रूप नारायण हाक्सर आपकी इच्छा के विरूद्ध इन्दौर रियासत से पलायन करके लाहौर चले गये और वहां निवास करने लगे। पंडित हृदय नारायण हाक्सर अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात एक अकाउटेन्ट हो गये थे। पंडित राम नारायण हाक्सर ने अंग्रेज़ी साहित्य विषय लेकर एम0ए0 की उपाधि ग्रहण की और एक योग्य अध्यापक बने। पंडित शिव नारायण हाक्सर एक कुशल अभियन्ता हो गये थे।

इन्दौर रियासत में सन् 1910 में प्लेग का एक महामारी के रूप में प्रकोप होने के कारण पंडित हृदय नारायण हाक्सर और पंडित राम नारायण हाक्सर की इस भयानक रोग से ग्रस्त हो जाने के कारण युवावस्था में ही मृत्यु हो गयी जब यह दोनों भ्राता अपनी आयु के लगभग 3 दशक ही पूर्ण कर पाये थे। पंडित शिव नारायण हाक्सर की मृत्यु काफ़ी समय पश्चात लगभग 74 वर्ष की आयु में दिल्ली की बाज़ार सीता राम की अपनी पैतृक हवेली में सन् 1956 में हुई।

पंडित स्वरूप नारायण हाक्सर के ज्येष्ठ पुत्र पंडित सूरज नारायण हाक्सर का जन्म सन् 1855 में इन्दौर रियासत में हुआ था। आप अपनी शिक्षा समाप्त हो जाने के पश्चात केवल 18 वर्ष की आयु में अंग्रेज़ों द्वारा असिस्टेन्ट कमिश्नर बना दिये गये थे। आपकी युवावस्था में ही लगभग 34 वर्ष की आयु में अपने पिता के जीवन काल में सन् 1889 में मृत्यु हो गयी। आपके तीन पुत्र क्रमशः जय नारायण, जगदीश नारायण और इन्द्र नारायण तथा दो पुत्रियां बिशन और कमला थीं।

पंडित जगदीश नारायण हाक्सर का जन्म सन् 1887 में इन्दौर में अपनी पैतृक हवेली में हुआ था। आप अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात अंग्रेज़ों द्वारा मुन्सिफ़ नियुक्त कर दिये गये थे तथा बाद में मध्य भारत के विभिन्न छोटे कस्बों में सब जज के पद पर आसीन रहे। आपका

विवाह सन् 1907 में धनराज मदन के साथ सम्पन्न हुआ जो लाहौर के निवासी दीवान मान नाथ मदन की पुत्री थीं। आप उस समय इलाहाबाद विश्वविद्यालय में बी0ए0 के छात्र थे और आपकी पत्नी उस समय केवल 14 वर्ष की आयु की थीं। आपका निधन लगभग 57 वर्ष की आयु में 6 अक्टूबर 1944 को हो गया। आपकी पत्नी श्रीमती धनराज जगदीशवन्ती हाक्सर की मृत्यु काफ़ी वर्ष पश्चात लगभग 88 वर्ष की आयु में 22 अप्रैल सन् 1979 को दिल्ली में अपने पुत्र के निवास स्थान 4/9, शान्ति निकेतन, नई दिल्ली 110021 में हुई।

पंडित जगदीश नारायण हाक्सर के चार पुत्र क्रमशः परमेश्वर नारायण, हरीश नारायण, कृष्ण कुमार एवं वीरेन्द्र कुमार तथा एक पुत्री सरस्वती थीं जिनका सन् 1929 में दिल्ली की बाज़ार सीताराम में स्थित हाक्सर वालों की पैतृक हवेली में पंडित कामता प्रसाद मुशरान के साथ विवाह सम्पन्न हुआ था। जो उस समय पश्चिमी रेलवे में एक इन्जीनियर थे।

पंडित जगदीश नारायण हाक्सर के सबसे छोटे पुत्र वीरेन्द्र जिनका जन्म सन् 1929 में हुआ था। कलकत्ते के निवासी लक्ष्मी नारायण पंडित को गोद दे दिये गये थे। लक्ष्मी नारायण पंडित उच्च न्यायालय के प्रथम भारतीय न्यायाधीश न्यायमूर्ति शम्भू नाथ पंडित के पौत्र थे जो कलकत्ते में उस समय भवानीपुर में रहते थे। वीरेन्द्र की गोद देने के कुछ माह पश्चात लगभग 3 वर्ष की आयु में सन् 1932 में कलकत्ते (कोलकाता) में मृत्यु हो गयी।

पंडित जगदीश नारायण हाक्सर के दूसरे पुत्र हरीश नारायण हाक्सर का जन्म सन् 1915 में हुआ था। आप अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात दिल्ली की चांदनी चौक में स्थित अपने पारिवारिक प्रतिष्ठान "पंडित ब्रदर्स" का संचालन करते थे। आप आजीवन अविवाहित रहे। पंडित जगदीश नारायण हाक्सर के तीसरे पुत्र कृष्ण कुमार हाक्सर का जन्म सन् 1927 में हुआ था। आप पेशे से एक अभियन्ता थे और बिहार प्रान्त में दुर्गापुर के स्पात के कारखाने में कार्यरत थे। आपका विवाह रूप

जुत्शी के साथ सम्पन्न हुआ था जो शिमला के निवासी पंडित माहराज कृष्ण जुत्शी की पुत्री हैं। आप स्टील अथारिटी ऑफ़ इण्डिया लिमिटेड से सेवानिवृत्त हुऐ।

पंडित जगदीश नारायण हाक्सर के ज्येष्ठ पुत्र पंडित परमेश्वर नारायण हाक्सर का जन्म 4 सितम्बर सन् 1913 को गुजरानवाला (पाकिस्तान) में हुआ था ज़हां उस समय आपके बड़े मामा दीवान सोम नाथ मदन मुन्सिफ़ के पद पर कार्यरत थे।

पंडित परमेश्वर नारायण हाक्सर की लगभग 13 वर्ष की आयु तक कोई औपचारिक शिक्षा सम्भव नहीं हो सकी क्योंकि आपके पिता अधिकतर एक मुन्सिफ के पद पर मध्य भारत के विभिन्न छोटे कस्बों में नियुक्त रहे जहां अच्छे स्कूलों का अभाव था और उचित शिक्षा के साधन उपलब्ध नहीं थे। आपके पिता ने आपको किसी गांव के स्कूल भेजना उचित नहीं सम़झा क्योंकि उनको भय था कि ख़राब लड़कों की सोहबत में उनका बेटा कहीं बिगड़ न जाये और ग़लत रास्ते पर चलने लगें इस नाते आपके पिता ने आपको घर पर ही अध्यापकों द्वारा पढ़ाने की व्यवस्था की ताकि गांव के लफ़्फ़ाड़िया लौंडों की बुरी संगत का आप पर असर न पड़े। आपका बचपन सकोली नाम के एक छोटे से कस्बे में बड़ी मौज मस्ती के साथ बीता। आपने अपनी बाल्यवस्था में जो थोड़ी बहुत औपचारिक शिक्षा ग्रहण की वह अपने छोटे मामा राजा ज्ञान नाथ मदन के लाहौर में स्थित भव्य बंगले में प्रवास के समय सम्भव हो सकी जब वहां आपको Sacred Heart Convent में कुछ माह के लिये सन् 1921 में भर्ती कराया गया।

चूंकि आपका बाल्यवस्था में अधिकतर समय गांव के ठेठ वातावरण के माध्य व्यतीत हुआ इस नाते स्वभाविक रूप से गांव के खेल कूद में आपकी विशेष रूचि हो गई जैसे गुल्ली डन्डा, कंचे खेलना, कबड्डी, खो-खो, लुका छिपी इत्यादि या फिर आप अपना समय अपनी मां के साथ रसोई में उनकी खाना पकाने में सहायता करने के रूप में व्यतीत करते थे और यह समझने की चेष्टा करते थे कि कौन सा कश्मीरी व्यंजन या

पकवान किस प्रकार तैयार किया जाता है। आपको इससे एक लाभ यह हुआ कि धीरे धीरे आप अपनी मां के दिशा निर्देशन में हर प्रकार के कश्मीरी पकवान और व्यंजन बनाने में पारंगत हो गये। आपकी यौन ज्ञान से सम्बंधित जानकारी को जानने की जिज्ञासा को आपके गांव के एक लंगोटिया यार सखाराम (बाईन्डर नहीं) ने शान्त किया जब उसने आपको रात्रि के अंधेरे में खिड़की के झरोखे से वहां के तहसीलदार को अपनी पत्नी के साथ रतिक्रीड़ा में संलग्न दिखाया ताकि आपको उसके द्वारा बताये गये ज्ञान पर किसी प्रकार का कोई संदेह या शंका न उत्पन्न हो और आप इस सम्बन्ध में हर प्रकार से संतुष्ट और निश्चिन्त हो जायें।

पंडित परमेश्वर नारायण हाक्सर को संस्कृत की शिक्षा देने के लिये अध्यापक के रूप में ऐ0 सरकार साहब को नियुक्त किया गया था जो उनको संस्कृत के श्लोकों को सही ढंग से उच्चारण करने की विधि समझाते थे तथा पंचतंत्र और हितोपदेश की कहानियां पढ़ाते थे। आपको मिर्ज़ा असद उल्लाह ख़ां "ग़ालिब" की शेर–शायरी के प्रति भी काफ़ी लगाव हो गया और यदा कदा मूड में आने के बाद आप बहुत ही तरन्नुम के साथ उनका निम्नलिखित शेर गुनगुनाया करते थे।

"दिल ही तो है न संग–ओ–ख़िश्त
दर्द से भर न आये क्यों"

आपकी इसी प्रकार की घरेलू पढ़ाई वहां के कई छोटे कस्बों में जैसे गोंडिया, सितारा, बेतूल इत्यादि में चलती रही जहां जहां आपके पिता की नियुक्ति होती रही। जब सन् 1926 में आपके पिता की कटनी में नियुक्ति हुई तो प्रथम बार आपको वहां के साधूराम म्यूनिसिपल हाई स्कूल में भर्ती कराया गया ताकि आपकी औपचारिक शिक्षा का किसी प्रकार शुभारम्भ हो सके इस स्कूल के उस समय एक मराठी पांडूरंगा बुद्धादेव हेड मास्टर थे जो स्वभाव से बहुत कड़क व्यक्ति थे। पंडित परमेश्वर नारायण हाक्सर ने अपने इस स्कूल में शिक्षा के साथ–साथ वहां के अन्य कार्यक्रमों में भी सक्रिय रूप से भाग लेना प्रारम्भ किया जैसे खेल कूद में भागलेना, नाटकों में अभिनय करना टेनिस खेलना तथा गायन प्रतियोगिताओं में भाग लेना

इत्यादि। आपने इसी स्कूल से सन् 1929 में अपनी मैट्रीकुलेशन की परीक्षा उत्तीर्ण की।

आपको फिर आपके पिता ने गांव के देहाती वातावरण से दूर इलाहाबाद उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिये भेज दिया जो उस समय अच्छी शिक्षा का एक प्रमुख केन्द्र माना जाता था और जहां अधिकतर देश के सुदूर अंचलों से छात्र उच्च शिक्षा ग्रहण करने के उद्देश्य से आते थे। आपने कटनी से इलाहाबाद पहुंचने के पश्चात वहां के राजकीय विद्यालय में प्रवेश ले लिया जहां से सन् 1931 में आपने अपनी इण्टरमीडिएट की परीक्षा उत्तीर्ण की।

आपने अपनी उच्च शिक्षा को जारी रखने के उद्देश्य से फिर इलाहाबाद विश्वविद्यालय में प्रवेश ले लिया और उसके म्योर छात्रावास में रहने लगे। आप ने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से सन् 1933 में बी0एस–सी0 तथा सन् 1935 में एम0एम–सी0 की उपाधि ग्रहण की। आप सन् 1935 में इंग्लैण्ड चले गये और वहां लन्दन के अर्थशास्त्र के स्कूल में प्रवेश ले लिया जहां से आपने सन् 1937 में सोशल एन्थ्रोपोलोजी विषय लेकर बी0एस–सी0 की पुनः उपाधि ग्रहण की। आपने फिर किंगस कालेज से सन् 1939 में एल–एल0बी0 तथा सन् 1941 में एल–एल0एम0 की उपाधि ग्रहण की और सन् 1943 में लिंकनस इन से बार–एट–लॉ की सनद लेकर एक बैरिस्टर बन गये।

पंडित परमेश्वर नारायण हाक्सर अपने लन्दन प्रवास के दौरान वी0 के0 कृष्णा मेनन के सम्पर्क में आये जो वहां इण्डिया लीग नाम से एक संस्था चलाते थे और इसी संस्था के कार्यालय में एक प्रकार से अपना अड्डा जमाये हुऐ थे। आप एक बहुत ही विचित्र चरित्र के व्यक्ति थे जो अपना पेट अधिकतर काली काफ़ी पी कर भरते थे जिसके कारण वह कुछ तुनक मिज़ाज भी हो गये थे और ज़रा सी बात पर कभी कभी अपने आपे के बाहर हो जाते थे। आपकी समाजवादी विचारधारा ने पंडित परमेश्वर नारायण हाक्सर को इतना अधिक प्रभावित किया कि वह आपके परमभक्त बन गये और वहां आपकी समाजिक सोंच का प्रचार करने लगे। पंडित

परमेश्वर नारायण हाक्सर लन्दन में और जिन व्यक्तियों से अपने मधुर सम्बन्ध बनाने में सफ़ल हुऐ वह थे निखिल चक्रवर्ती और मोहन कुमारमंगलम। आप वहां यदा कदा फ़िरोज़ गांधी और इन्दिरा प्रियदर्शनी नेहरू के आवास के भी चक्कर लगाते थे जो उस समय लन्दन में ठहरे हुऐ थे और जिनका आपस में प्रेम तब अपने पूरे शबाब पर था आप फिरोज़ गांधी और इन्दिरा नेहरू के आग्रह पर उन्हें विशेष कश्मीरी पकवान भी बना कर खिलाते थे जिसमें आपको अपनी बाल्यवस्था से ही दक्षता प्राप्त थी।

पंडित परमेश्वर नारायण हाक्सर एक बैरिस्टर के रूप में सन् 1943 में लन्दन से भारत वापस आ गये और आपने इलाहाबाद उच्च न्यायालय में अपनी वकालत प्रारम्भ की। आपने सन् 1948 तक अपनी इस वकालत को बहुत ही लगन के साथ निष्ठापूर्वक जारी रखा और अपने को नगर में एक प्रतिष्ठित अधिवक्ता के रूप में अपनी योग्यता के बल पर स्थापित किया।

सन् 1947 में हमारा देश विदेशी शासन तंत्र के चंगुल से एक लम्बी गुलामी के बाद आज़ाद हुआ और पंडित जवाहर लाल नेहरू एक स्वतंत्र देश के प्रथम प्रधानमंत्री बने। पंडित जवाहर लाल नेहरू स्वयं इलाहाबाद के निवासी होने के कारण पंडित परमेश्वर नारायण हाक्सर की योग्यता तथा कार्य कुशलता से व्यक्तिगत रूप से भलि भांति परिचित थे पंडित नेहरू की कुछ ऐसी भी धारणा थी कि विदेश में शिक्षित व्यक्ति की सोंच का दायरा कुछ अधिक विशाल होता है और वह स्वभाव से उदारवादी होता है तथा उसमें संकुचित मानसिकता का अभाव होता है और वह निष्पक्ष होकर अधिक सुचारू रूप से कार्य करने की क्षमता रखता है क्योंकि उस समय तक हमारे देश में शिक्षा का बहुत अधिक विस्तार नहीं हुआ था और उच्च शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों की संख्या बहुत कम थी जो एक स्वतंत्र देश की नीतियों को निर्धारित करने की क्षमता रखते हों और देश के कर्णधार बन सकें। इस नाते पंडित नेहरू ने देशहित में पंडित परमेश्वर नारायण हाक्सर से राष्ट्र की विदेश सेवा में आने का आग्रह किया ताकि उनकी योग्यता का राष्ट्र को प्रगति के पथ पर ले जाने के लिये उपयुक्त

उपयोग किया जा सके जिसे पंडित परमेश्वर नारायण हाक्सर ने सहर्ष स्वीकार कर लिया और इस प्रकार सन् 1948 में अपनी वकालत को तिलांजलि देकर आप भारत की विदेश सेवा के एक प्रशासनिक अधिकारी बन गये।

पंडित नेहरू ने आपको सर्वप्रथम फ़स्ट सेक्रेट्री बना कर लन्दन में स्थित भारत के दूतावास में भेजा जहां उस समय वी0 के0 कृष्णा मेनन भारत के हाई कमिश्नर नियुक्त थे ताकि आप उनको दूतावास के कार्य में सहायता करें और उनके कुशल मार्ग दर्शन में कूटनीति में दक्षता प्राप्त कर पारन्गत बन सकें। आप कृष्णा मेनन की संगत में पंडित नेहरू की समाजवादी विचारधारा से परिचित हुऐ और आप उससे इतने अधिक प्रभावित हुए कि आपने उस नेहरू शैली की समाजवादी सोंच को अपने जीवन में अंगीकार कर लिया।

पंडित परमेश्वर नारायण हाक्सर की राजदूत के रूप में प्रथम नियुक्ति नाईजीरिया में हुई और वहां आपका कार्यकाल पूर्ण होने के पश्चात आपको आस्ट्रिया का राजदूत बनाया गया। आपको फिर सन् 1960 के दशक में पुनः लन्दन डिप्टी हाई कमिश्नर बना कर भेजा गया तथा उसके पश्चात आप वहां के कार्यकारी हाई कमिश्नर बना दिये गये।

11 जनवरी, 1966 को ताशकंद में लाल बहादुर शास्त्री की संदिग्ध परिस्थितियों में मृत्यु हो गयी जो वहां सन् 1965 के भारत पाक युद्ध के पश्चात पाकिस्तान के राष्ट्रपति जनरल अयूब खां के साथ एक सन्धि पर हस्ताक्षर करने के लिये गये थे। उनकी इस आकस्मिक मृत्यु के पश्चात 19 जनवरी, सन् 1966 को श्रीमती इन्दिरा गांधी भारत की प्रथम बार प्रधानमंत्री बनीं। श्रीमती गांधी ने तुरन्त भारत और अमरीका के मध्य कूटनीतिक सम्बन्धों को सुधारने के उद्देय से अमरीका की यात्रा की जिसमें श्रीमती गांधी अपनी सहायता के लिये लन्दन से पंडित परमेश्वर नारायण हाक्सर को अपने साथ ले गयीं जो उस समय वहा भारत के कार्यकारी हाई कमिश्नर के रूप में कार्य कर रहे थे। श्रीमती गांधी और अमरीका के राष्ट्रपति लिंडन जानसन के मध्य वाशिंगटन में हुई इस

वार्तालाप में पंडित परमेश्वर नारायण हाक्सर ने एक महत्वपूर्ण भूमिका निभायी और भविष्य में दोनों देशों के मध्य और अधिक मधुर सम्बन्ध बनाने की दिशा में एक ठोस कार्य योजना बनाई।

श्रीमती इन्दिरा गांधी ने सन् 1967 में पंडित परमेश्वर नारायण हाक्सर को अपना प्रमुख सचिव नियुक्त कर दिया जिस पद पर लाल बहादुर शास्त्री के समय लक्ष्मी कान्त झा कार्य कर रहे थे। इस प्रभावशाली पद पर नियुक्त हो जाने के पश्चात पंडित परमेश्वर नारायण हाक्सर के हाथ में एक प्रकार से सम्पूर्ण देश के शासन तंत्र की बागडोर आ गयी और वह देश के पूरे प्रशासनिक ढांचे के मुखिया बन गये और देश की नीतियों को निर्धारित करने लगे जो उनकी नेहरू मार्का समाजवादी विचारधारा पर अधिकतर आधारित थीं।

श्रीमती गांधी का बहुचर्चित 10 सूत्रीय कार्यक्रम आपके ही दिमाग की उपज थी जिसके तहत बीमा कम्पनियों और बैंकों का राष्ट्रीकरण तथा देश की विभिन्न रियासतों के शासकों को दिये जाने वाले मान–सम्मान तथा विशेष सुविधाओं को समाप्त करने जैसे क्रान्तिकारी कदम उठाये गये। जिन्होंने देश में सदियों से चले आ रहे सामाजिक ढांचे का प्रारूप एक ही झटके में एकदम बदल कर रख दिया और कुछ प्रभावित लोग तंज करते हुए कहने लगे कि "अब एक ही सफ़ में खड़े हैं महमूद और अयाज, न कोइ बन्दा रहा न कोई बन्दा नवाज़" अर्थात अब सब धान 22 पसेरी के हैं।

इसी क्रान्तिकारी कार्यक्रम ने श्रीमती इन्दिरा गांधी की छवि को बहुत ही तीव्र गति के साथ आम जनता के मध्य एक देवी के रूप में परिवर्तित कर दिया और वह उनको अपना मसीहा और संकटमोचन समझने लगी जिसके कारण श्रीमती गांधी रातों रात सारे देश की एक सर्वमान्य तथा सर्वप्रिय नेता बन गयीं। कांग्रेस पार्टी के दिग्गज नेताओं को उनकी यह लोकप्रियता अखरने लगी जो उनको एक गुड़िया समझने की भूल कर बैठे थे। कांग्रेस पार्टी में उनके विरूद्ध धीरे–धीरे भीतर ही भीतर व्यूह रचना रची जाने लगी कि किस प्रकार श्रीमती गांधी की लोकप्रियता

की आंधी को प्रभावशाली ढंग से रोका जाये जिसके तहत कांग्रेस पार्टी के भीतर सिन्डीकेट नाम से दिग्गज कांग्रेस नेताओं ने एक दल गठन किया जो श्रीमती गांधी की नीतियों की आलोचना कर उनके क्रियान्वयन में हर प्रकार से अवरोध उत्पन्न करता था। ताकि आम जनता उनके लाभ से वंचित रहे। विवश होकर श्रीमती इन्दिरा गांधी को 16 जुलाई सन् 1969 को अपने वित्त मंत्री मोरार जी देसाई को अपने मंत्री मण्डल से निष्कासित करना पड़ा जो इस सिंडिकेट दल के एक प्रमुख नेता थे और श्रीमती गांधी के हर प्रगतिशील कार्यक्रम में अवरोध उत्पन्न कर उसके क्रियान्वयन में बाधा डाल रहे थे। श्रीमती गांधी के इस ऐतिहासिक कदम से प्रथम बार कांग्रेस पार्टी का कांग्रेस (ओ) और कांग्रेस (आई) में विभाजन हुआ।

पंडित परमेश्वर नारायण हाक्सर ने प्रथम बार अपनी मातृभूमि कश्मीर की सन् 1968 में यात्रा की और आप वहां की नैसर्गिक सुन्दरता से बहुत अधिक प्रभावित हुऐ। आप अपने पूर्वजों के बारे में उचित जानकारी प्राप्त करने के उद्देश्य से मटन भी गये और वहां के कश्मीरी पण्डों से मिले जो अपनी बहियों में उन परिवारों की जानकारी तब लिखते थे जो कश्मीर से समय–समय पर पलायन करके भारत आते थे। पर आप अपने पूर्वजों के बारे में वहां अपने प्रवास के दौरान वांछित सामग्री संग्रहित करने में किन्हीं कारणों से बहुत अधिक सफ़लता नहीं प्राप्त कर सके यद्यपि आपने वहां विभिन्न सूत्रों से सम्पर्क स्थापित कर उनसे सम्बन्धित सही सूचना को एकत्रित करने की भरसक चेष्टा की।

आपने देश के समस्त खुफ़िया तंत्र को प्रधानमंत्री के कार्यालय के अधीन करके उसे देश की सामूहिक शक्ति का एक प्रकार से केन्द्र बिन्दु बना दिया और वह मंत्रीमण्डलीय सचिवालय से अधिक महत्वपूर्ण हो गया आप वहां से सब मंत्रालयों से सीधे सम्पर्क साध कर उनको दिशा निर्देश देने लगे और उनकी नीतियों का निर्धारण करने लगे जिसके कारण आप एक सशक्त व प्रभावशाली प्रशासक के रूप में सम्पूर्ण देश में प्रसिद्ध हो गये। आप इस पद से सन् 1973 में 60 वर्ष की आयु पूर्ण हो जाने पर सेवानिवृत्त हुऐ।

आपके सरकारी नौकरी से सेवानिवृत्त हो जाने के पश्चात श्रीमती इन्दिरा गांधी ने राजा दिनेश सिंह के स्थान पर आपको अपना सचिव और राजनीतिक परामर्शदाता नियुक्त कर दिया। आपने सन् 1974 और सन् 1977 के मध्य योजना आयोग के उपाध्यक्ष के रूप में भी कार्य किया।

जब सन् 1977 में प्रथम बार देश में जनता पार्टी की सरकार बनी और मोरारजी देसाई को उसका प्रधानमंत्री बनाया गया तो पंडित परमेश्वर नारायण हाक्सर ने देश की राजनीति में सक्रिय रूप से भाग लेने के स्थान पर उस बदले हुए वातावरण में अपने आवास में चुपचाप रहना अधिक उचित समझा। क्योंकि उस बदले हुऐ राजनीतिक परिवेश में आपके लिये कार्य करना प्रायः असम्भव था।

आपने सन् 1986 से सन् 1989 तक राष्ट्र की विज्ञान तथा औद्योगिक अनुसन्धान परिषद के उपाध्यक्ष के पद पर कार्य किया। आप कुछ समय तक दिल्ली की संगीत नाटक अकादमी के अध्यक्ष भी रहे। आपके नेतृत्व में देश की संस्कृति की नीति को निर्धारित करने के लिये केन्द्र सरकार ने हाक्सर कमेटी का गठन किया। आप सन् 1992 के आस पास दिल्ली के जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय के कुलाधिपति भी रहे। आप अपने परिजनों तथा निकट के मित्रों में बब्बू भाई के नाम से प्रसिद्ध थे।

पंडित परमेश्वर नारायण हाक्सर ने अपने जीवन में काफ़ी विलम्ब से विवाह किया जिसके कुछ पारिवारिक कारण थे आपने लगभग 39 वर्ष की आयु में सन् 1952 में लखनऊ के निवासी पंडित दीना नाथ सप्रू की पुत्री उर्मिला से बम्बई में अपने बहनोई पंडित कामता प्रसाद मुशरान के आवास पर विवाह किया जो उस समय पश्चिमी रेलवे के जनरल मैनेजर थे। आपके दादा पंडित सूरज नारायण हाक्सर और आपकी पत्नी उर्मिला के नाना पंडित राम नारायण हाक्सर आपस में सगे भाई थे। इस नाते इस विवाह में प्रारम्भ में कठिनाई हो रही थी क्योंकि इस प्रकार के सम्बन्धों को हिन्दू धर्म में किन्हीं कारणों से मान्यता नहीं दी गयी है। जबकि इस्लाम में इसे सबसे अधिक उत्तम माना जाता है।

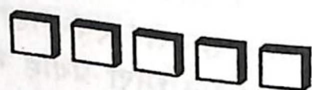
पंडित परमेश्वर नारायण हाक्सर की दो पुत्रियां अनामिका और नन्दिता हैं। आपकी छोटी पुत्री अनामिका ने बाराखम्बा रोड पर स्थित मार्डन स्कूल से अपनी मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की है। उसने फिर लेडी श्रीराम कालेज से बी0ए0 (आनर्स) की उपाधि ग्रहण की उसके पश्चात दिल्ली के राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय से विधिवत नाट्य निर्देशन का प्रशिक्षण लेकर वहां कुछ वर्ष अध्यापन का कार्य भी किया। अनामिका ने मास्को से भी नाट्य निर्देशन का प्रशिक्षण लिया है। उसकी "निराकार" नाम से एक व्यवसायिक रंगकर्मियों की अपनी एक रंगमण्डली हैं जिसके तत्वावधान में वह नाटकों के विभिन्न स्थानों पर प्रदर्शन करती है। अनामिका ने गत वर्ष अपने एक साथी कलाकार राजेन्द्र साहू के साथ विवाह किया है जिससे 7 मई सन् 2002 को उसको एक पुत्र रत्न की प्राप्ती हुई है।

पंडित परमेश्वर नारायण हाक्सर की बड़ी पुत्री नन्दिता ने देहरादून के प्रसिद्ध वेलहम स्कूल से अपनी मैट्रिकुलेशन की परीक्षा उत्तीर्ण की। उसके पश्चात उसने दिल्ली के जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय से बी0ए0 (आनर्स) की उपाधि ग्रहण की फिर इतिहास में दिल्ली विश्वविद्यालय से एम0ए0 की उपाधि ग्रहण की और वहीं से एल–एल0बी0 की डिग्री प्राप्त की। आप दिल्ली के उच्चतम न्यायालय में वकालत करती हैं और मानवाधिकारों की प्रबल समर्थक हैं। आपने नागालैण्ड के आदिवासियों पर कई पुस्तकें लिखी हैं। आजकल आप गोवा में आवास क्रय करके वहां रह रही हैं और अपना समय पठन और लेखन में व्यतीत कर रही हैं।

पंडित परमेश्वर नारायण हाक्सर एक महान चिंतक, विचारक तथा प्रखर वक्ता थे और हर विषय पर धारा प्रवाह बोलते थे। आपने अनेक पुस्तकें लिखीं। आपने अपनी आत्मकथा तीन खण्डों में लिखी है। धर्म और भारतीय दर्शन के आप विशेष ज्ञाता थे। आपको हर विषय की पुस्तक पढ़ने का शौक था और अधिक पढ़ने के कारण अपने जीवन के उत्तरार्ध में आपकी आंखों की रोशनी चली गयी थी। जिससे आपको कभी कभी बड़ा कष्ट अनुभव होता था। आप एक बहुमुखी प्रतिभा के धनी व्यक्ति थे जो अपने समय में सबसे अधिक चर्चित और शक्तिशाली प्रशासक तथा

कूटनीतिज्ञ रहे जिनकी सूझ–बूझ और कार्यकुशलता का बड़े–बड़े पदों पर आसीन अधिकारी भी लोहा मानते थे। आप जीवन भर अनेक राष्ट्रीय स्तर की सामाजिक सांस्कृतिक तथा साहित्यक संस्थाओं से सक्रिय रूप से जुड़े रहे। आप अनेक शोध संस्थानों के सदस्य रहे और उनका सही मार्ग निर्देशन करते रहे। आपकी 28 नवम्बर सन् 1998 को दिल्ली में अपने आवास 4/9, शान्ति निकेतन में लगभग 85 वर्ष की आयु में मृत्यु हो गयी और यह युग पुरूष इस मायावी संसार से सदा के लिये विदा हो गया। जीवन मरण का यह अटूट चक्र इसी प्रकार चलता रहता है जो आज है वह कल नहीं पर मनुष्य द्वारा किये गये कार्य उसकी स्मृति को संजोये रखने में बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। जिनसे उसके व्यक्तित्व का सही मूल्यांकन होता है। और वह व्यक्ति एक इतिहास पुरूष बन जाता है। इसी मनोस्थिति को हिन्दी के प्रखर कवि धर्मेन्द्र गुमनाम ने कुछ इस प्रकार परिभाषित किया है।

जो भी कहना है कहो विश्वास से
तोड़ दो तारे भी फिर आकाश से
बिन हमारे कुछ नहीं हस्ती तेरी
बढ़ कर आज कह दो यह मधुमास से।।



भारत की विदेश नीति के निर्माता

पंडित त्रिलोकी नाथ कौल



विश्व की एक महान शक्ति सोवियत संघ के कई छोटे-छोटे गणराज्यों में विघटन होने के पश्चात संसार में केवल सैन्य दृष्टि से अमरीका ही सर्वशक्तिमान राष्ट्र रह गया जो अपनी इस असीमित मारक शक्ति का लाभ उठाते हुए विश्व के अन्य देशों को दिशा निर्देश देने लगा और उनकी नीतियों का निर्धारण करने लगा क्योंकि कसी भी देश की उससे टक्कर लेने की या उसके विरूद्ध किसी प्रकार का निर्णय लेने की क्षमता नहीं रही। वह एक प्रकार से सम्पूर्ण विश्व पर अपनी दरोग़ाई करने लगा और अपनी सैन्य शक्ति के बल पर हर देश से अपनी नीतियों का पालन करवाने लगा। पर लगभग 50 वर्ष पूर्व जब भारत एक स्वतंत्र राष्ट्र बना तब ऐसी स्थिति नहीं थी। उस समय विश्व के दो महान देश अमरीका और सोवियत संघ ने वह मारक शक्ति नहीं प्राप्त की थी जो बाद में इन दोनों देशों ने परमाणु अस्त्रों को विकसित कर प्राप्त की। फ्रांस उस समय अपने परमाणु अस्त्रों का निर्माण करने की प्रोद्योगिकी के विकास की प्रक्रिया में संलग्न था और उसी के अन्तर्गत परमाणु अस्त्रों के परीक्षण कर रहा था। वहीं दूसरी ओर ब्रिटेन परमाणु अस्त्रों के निर्माण करने की दिशा में अमरीका द्वारा निर्धारित की गयी नीति का पालन करने की रूप रेखा तैयार कर रहा था। उस समय भारत को अपने आस पास के क्षेत्र में परमाणु युद्ध भड़कने का कोई भय नहीं था जैसा कि अब अपने पड़ोसी देशों से हो गया है जिन्होंने अन्य विकसित देशों से यह विध्वंस करने की शक्ति रखने वाले नरसंहार के

परमाणु अस्त्र प्राप्त कर लिये हैं और अपनी परमाणु प्रोद्योगिकी का काफ़ी विकास कर लिया है।

जब चीन ने भारत पर अपने सन 1962 के आक्रमण के पश्चात अपनी सैन्य शक्ति को और अधिक बलशाली बनाने के उद्देश्य से सन् 1964 के अक्टूबर माह में लौर नौर नामक स्थान पर अपना प्रथम परमाणु विस्फ़ोट का सफ़ल परीक्षण किया तो सुरक्षा की दृष्टि से इस परमाणु अस्त्रों की होड़ में भारत को भी अपनी नीतियों में परिवर्तन करने को बाध्य होना पड़ा यद्यपि भारत ने सन् 1963 में मास्को में आंशिक परमाणु अप्रसार सन्धि पर हस्ताक्षर किये थे। और अपने को इस परमाणु अस्त्रों की दौड़ से अलग रखने का संकल्प लिया था। पर फ्रांस और चीन ने इस सन्धि पर अपने हस्ताक्षर नहीं किये और यह दोनों देश अपने नियमित रूप से परमाणु परीक्षण करते रहे। विश्व के इस तीव्रगति से बदल रहे वातावरण में भारत को भी सुरक्षा की दृष्टि से अपनी विदेश नीति में अमूल चूक परिवर्तन करने की आवश्यकता अनुभव हुई ताकि वह इस क्षेत्र में अलग–थलग न पड़ जाये। ऐसी विषम परिस्थितियों में और असमंजस के वातावरण में जिस व्यक्ति ने भारत की नयी विदेश नीति की बड़ी सूझ–बूझ के साथ कुशलतापूर्वक एक ठोस, आधारशिला रखी वह थे पंडित त्रिलोकी नाथ कौल जो अपने चमत्कारी व्यक्तित्व के कारण सम्पूर्ण विश्व में टिक्की भाई के नाम से प्रख्यात थे और सब के प्रिय थे। आप एक विद्वान, चिंतक, विचारक तथा प्रखर वक्ता थे जिसने अपने सेवा काल में न केवल भारत की विदेश नीति की रूप रेखा तैयार की अपितु उसको कूटनीति के स्तर पर एक नयी दिशा दी और भारत को सम्पूर्ण विश्व में उचित मान–सम्मान दिलाया जिसके कारण उसकी गणना एक प्रमुख एवं महत्वपूर्ण देश के रूप में होने लगी।

प्रसिद्ध इतिहासकार मुहम्मद फ़ौक जिसने कश्मीरी कुलनामों पर वृहद शोध कार्य किया है के अनुसार पंडित त्रिलोकी नाथ कौल के पूर्वज किसी समय कश्मीर के जलाली शिया मुसलमानों के यहां लिपिक के पद पर कार्य करते थे इस नाते वह अपना कुलनाम कौल जलाली लिखने

लगे। आपके पूर्वज मूल रूप से कश्मीर घाटी के श्रीनगर जनपद के रैनावारी मुहल्ले के निवासी थे जहां उनके तीन आवास हुआ करते थे। पंडित त्रिलोकी नाथ कौल के पिता पंडित तोता कौल जलाली रियासत में माहराजा प्रताप सिंह (1885–1925) के शासन काल में शिक्षा विभाग में एक राजपत्रित अधिकारी हो गये थे। जिनका विवाह श्रीनगर के निवासी पंडित लस्सा धर की सुपुत्री गुनवती के साथ सम्पन्न हुआ था पंडित तोता कौल जलाली के चार पुत्र क्रमशः राधे नाथ, त्रिलोकी नाथ, प्रेम नाथ और हृदय नाथ तथा तीन पुत्रियां कमला, इन्दिरा और कान्ता थीं।

पंडित तोता कौल जलाली के ज्येष्ठ पुत्र पंडित राधे नाथ कौल का विवाह सुश्री सुभद्रा जुत्शी के साथ सम्पन्न हुआ था आपके तीसरे पुत्र पंडित प्रेम नाथ कौल का विवाह सुश्री गौरीशुरी रैना के साथ सम्पन्न हुआ था। आपके चौथे पुत्र पंडित हृदय नाथ कौल अपनी शिक्षा समाप्त कर लेने के पश्चात भारतीय सेना में भर्ती हो गये थे और ले0 जनरल के पद से सेवा निवृत्त हुऐ। आपका विवाह मंजु मेहता के साथ सम्पन्न हुआ है। आप आज कल दिल्ली में निवास करते हैं।

पंडित तोता कौल जलाली की सबसे बड़ी पुत्री कमला का विवाह पंडित सतलाल कौल किलम के साथ सम्पन्न हुआ था जो विभिन्न देशों में भारत के राजदूत रहे। आपकी दूसरी पुत्री इन्दिरा का विवाह पंडित सोम नाथ धर के साथ तथा तीसरी पुत्री कान्ता का विवाह पंडित अनुपम धर के साथ सम्पन्न हुआ था।

पंडित तोता कौल जलाली के दूसरे पुत्र पंडित त्रिलोकी नाथ कौल का जन्म 8 फरवरी सन् 1913 को कश्मीर घाटी के बारामुला ज़िले में हुआ था जहां उस समय आपके पिता नियुक्त थे। पंडित त्रिलोकी नाथ कौल की प्रारम्भिक शिक्षा वहीं बारामुला के एक स्कूल में सम्पन्न हुई। आपने फिर सन् 1925 के आस पास श्रीनगर के स्टेट हाई स्कूल में प्रवेश लिया और वहां से सन् 1928 में अपनी मैट्रिकुलेशन की परीक्षा पूरी रियासत में प्रथम स्थान पाकर उत्तीर्ण की। आपने उसके पश्चात श्री प्रताप कालेज में प्रवेश लिया और पुनः इन्टरमीडिएट की परीक्षा में सन् 1930 में पूरी

रियासत में सबसे अधिक अंक लेकर प्रथम स्थान प्राप्त किया। आप फिर उच्च शिक्षा प्राप्त करने के उद्देश्य से श्रीनगर से जम्मू चले गये और वहां के प्रतिष्ठित प्रिंस ऑफ़ वेल्स कालेज में प्रवेश ले लिया जहां से आपने सन् 1932 में बी0ए0 (आनर्स) की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की।

पंडित त्रिलोकी नाथ कौल सन् 1932 के जुलाई माह में कानून की शिक्षा गृहण करने के उद्देश्य से कश्मीर घाटी से निकल कर इलाहाबाद आ गये और आपने इलाहाबाद विश्वविद्यालय में प्रवेश ले लिया जहां से आपने एल–एल0बी0 की परीक्षा सन् 1934 में प्रथम श्रेणी में बहुत अच्छे अंक प्राप्त कर उत्तीर्ण की। आप उसके पश्चात कानून की और अधिक उच्च शिक्षा ग्रहण करने के उद्देश्य से इंग्लैण्ड चले गये जहां आपने लन्दन के किंग्स कालेज में प्रवेश ले लिया और लन्दन विश्वविद्यालय से आपने सन् 1936 में एल–एल0एम0 की परीक्षा उत्तीर्ण की। आप साथ ही साथ वहां भारत की प्रशासनिक सेवाओं के लिये संचालित होने वाली आई0सी0एस0 की परीक्षा में भी बैठे और उसमें चयनित कर लिये गये। आप कश्मीर घाटी के प्रथम कश्मीरी पंडित थे जो उस समय अंग्रेज़ों द्वारा भारत की प्रशासनिक सेवा में इस प्रकार चयनित किये गये थे।

पंडित त्रिलोकी नाथ कौल सन् 1936 में लन्दन से भारत आने के पश्चात अंग्रेज़ों द्वारा तत्कालीन यूनाईटेड प्रोविन्सेस (उत्तर प्रदेश) के सीतापुर जनपद में एक ज्वाईन्ट मजिस्ट्रेट के रूप में नियुक्त कर दिये गये। आपने लगभग 11 वर्ष उत्तर प्रदेश के विभिन्न जनपदों में विभिन्न पदों पर बड़ी ही निष्ठापूर्वक पूरी ईमानदारी के साथ कार्य किया और आम जनता का विश्वास जीता अपने इस अन्तराल में मुख्यतः ग्रामीण विकास अधिकारी तथा ज़िला मजिस्ट्रेट के रूप में प्रदेश के विभिन्न जनपदों में कार्य किया। आप अपने लखनऊ में प्रवास के दौरान कुछ समय के लिये कटरा विजन बेग में स्थित पंडित कैलास नारायण बक्शी की भव्य हवेली में भी रहे जब आप किसी रोग का झवांई टोला मुहल्ले में रहने वाले एक प्रख्यात हकीम अब्दुल अज़ीज़ से अपना यूनानी इलाज करवा रहे थे।

पंडित त्रिलोकी नाथ कौल को अंग्रेज़ों ने उनकी कार्य कुशलता से

प्रसन्न होकर सन् 1946 में प्रोन्नति कर के भारत सरकार की कृषि अनुसन्धान परिषद् का सचिव बना दिया। आप इस पद पर देश के सन् 1947 में स्वतंत्र होने तक कार्य करते रहे। आपको ब्रिटिश शासन काल में सेवा करते हुए कई बार बहुत ही संकटमय तथा विषम परिस्थितियों का भी सामना करना पड़ा। आपकी तीनों बहने कमला, इन्दिरा और कान्ता महात्मा गांधी की विचारधारा की कट्टर समर्थक थीं और अंग्रेज़ों के विरूद्ध कांग्रेस पार्टी की गतिविधियों में खूब जम कर भाग लेती थीं। एक बार अंग्रेज़ों ने आपकी तीनों बहनों और एक भाई को अवज्ञा आन्दोलन में भाग लेने के जुर्म में गिरफ़्तार कर लिया जिसके कारण आपके सामने एक बहुत ही विकट तथा गम्भीर समस्या उत्पन्न हुई और आपने अंग्रेज़ों के हाथों की कठपुतली बनने के स्थान पर अपनी सेवा से त्याग पत्र देने का मन बनाया ताकि आप स्वतंत्र रूप से अपनी अन्तर आत्मा के अनुरूप कार्य कर सके पर संयोग से कुछ ऐसी घटना घटी कि आपको फिर इतना कठोर निर्णय लेने को बाध्य नहीं होना पड़ा और किसी महान हस्ती के हस्तक्षेप से किसी प्रकार वह संकट की घड़ी टल गयी।

आपने एक बार अपने सेवा काल में कानून की महत्ता को बनाये रखने के उद्देश्य से एक रियासत के राजकुमार को नाप कर उसको उचित दण्ड दिलाने के लिये न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत कर दिया जो अपनी रियासत में आम जनता का जीना हलकान किये हुऐ था और ग़रीबों का शोषण कर ग़दर काट रहा था ताकि वहां की असहाय और लाचार जनता को उच्चित न्याय मिल सके और वह अपना जीवन सुख और शान्तिमय वातावरण में बिना किसी आतंक और भय के व्यतीत कर सकें।

जब 15 अगस्त सन् 1947 को अंग्रेज़ों की एक लम्बी दासता से मुक्त होकर भारत एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में विश्व के मानचित्र पर उदय हुआ और पंडित जवाहर लाल नेहरू उसके प्रथम प्रधानमंत्री बने तो स्वाभाविक रूप से इतने विशाल देश का शासन तंत्र चलाने के लिये उनको योग्य तथा कुशल प्रशासकों की आवश्यकता अनुभव हुई जो अंग्रेज़ों द्वारा छोड़े गये उच्च स्थानों की उचित पूर्ती कर सकें।

जिस प्रकार मुग़ल सम्राट अकबर ने अपने शासन को कुशलता पूर्वक चलाने के लिये नौ रत्नों का चयन किया था उसी प्रकार पंडित नेहरू ने भी एक स्वतंत्र देश की नयी दिशा निर्धारित करने के उद्देश्य से योग्य, विद्वान, अनुभवी, कर्मठ, निष्ठावान, ईमानदार तथा कुशल प्रशासकों की खोज प्रारम्भ की जो इस दायित्व का उचित प्रकार से निर्वाह करने की क्षमता रखते हों और जो देश के भावी कर्णधार बन कर उसको प्रगति के पथ पर अग्रसर कर सकें, इसी क्रम में पंडित नेहरू ने पंडित त्रिलोकी नाथ कौल का चयन किया और उनसे भारत की विदेश सेवा में आने का आग्रह किया ताकि देश को उनकी योग्यता का उचित लाभ मिल सके।

पंडित नेहरू ने सोवियत संघ जैसे महाशक्तिशाली देश में अपनी छोटी बहन श्रीमती विजय लक्ष्मी पंडित को भारत का प्रथम राजदूत बना कर भेजा जिनको वहां के मास्को नगर में भारत का दूतावास स्थापित करने का कार्यभार सौंपा गया तथा उनको इस कठिन कूटनीतिक कार्य में सहायता करने के लिये पंडित नेहरू ने पंडित त्रिलोकी नाथ कौल को उनका प्रथम सचिव बना कर मास्को भेजा जो उस समय लोहे की दीवार के नाम से प्रसिद्ध था जिसको बेध पाना हर व्यक्ति के लिये सम्भव नहीं था। वहां के शासक स्टैलिन की अपनी मान्यताऐं थीं और वह भारत को ब्रिटेन तथा अन्य विकसित पश्चिमी राष्ट्रों का पिछलग्गू समझता था इस नाते सोवियत संघ से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करना इस प्रकार के संदेहात्मक वातावरण में टेढ़ी खीर थी। यद्यपि पंडित त्रिलोकी नाथ कौल अपने प्रयासों और कूटनीति के स्तर पर अपने कठोर परिश्रम के बाद भी स्टालिन की भारत के प्रति इस प्रकार की विचारधारा को परिवर्तित करने में उस समय बहुत अधिक सफ़ल नहीं हो पाये परन्तु फिर भी वह रूसी भाषा का ज्ञान प्राप्त कर और वहां की सभ्यता और संस्कृति के बारे में ठोस जानकारी प्राप्त करने के पश्चात भारत और सोवियत संघ के मध्य भावी मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों की एक ठोस आधारशिला रखने में अवश्य सफ़ल हुऐ जिससे काफ़ी सीमा तक सोवियत संघ के भारत के प्रति व्यवहार में अन्तर पड़ा और दोनों देशों के मध्य एक नवीन वातावरण का निर्माण हुआ

जिसके तहत आपस में विभिन्न क्षेत्रों में इन दोनों देशों के बीच विभिन्न द्विपक्षीय समझौतों की नींव पड़ी। आपने लगभग दो वर्ष यह कार्य बड़ी ही कुशलता के साथ निष्ठापूर्वक मास्कों में किया।

पंडित नेहरू ने सन् 1949 में श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित को विश्व के दूसरे महान शक्तिशाली देश अमरीका में भारत का राजदूत बना कर भेजा और पुनः पंडित त्रिलोकी नाथ कौल को उनकी सहायता के लिये उनका प्रथम सचिव बना कर वाशिंगटन डी0सी0 भेजा पंडित त्रिलोकी नाथ कौल ने बड़ी समझ बूझ के साथ एक नये स्वतंत्र देश की भावी विदेश नीति का उस समय विश्व में तीव्र गति के साथ बदल रहे राजनीतिक समीकरणों के मध्य सूत्रपात्र किया और उसको अपने कठोर परिश्रम द्वारा एक स्पष्ट दिशा दी।

पंडित नेहरू ने फिर सन् 1950 में पंडित त्रिलोकी नाथ कौल को चीन में पेचिंग (बीजिंग) में स्थित भारतीय दूतावास में अपना विशेष दूत बना कर भेजा और उनको एक केन्द्रीय मंत्री के समकक्ष पद दिया गया। वहां आपका कार्य अपने कूटनीतिक प्रयासों द्वारा भारत और चीन के मध्य सम्बन्धों को सुधार कर दोनों देशों के मध्य प्रभावशाली मैत्री पूर्ण सम्बन्ध स्थापित करना था। चूंकि आप पंडित नेहरू की समाजवादी विचारधारा से प्रभावित थे अतः देश की विदेश नीति को अन्य देशों के प्रति निर्धारित करते समय पंडित नेहरू की सोंच और उनके आदर्शों पर अधिक ध्यान देते थे। आपने पंडित नेहरू के अनुरोध पर ही भारत और चीन के मध्य ऐतिहासिक पंचशील समझौते की रूपरेखा तैयार की क्योंकि पंडित नेहरू चीन के साथ भारत के सम्बन्धों को एक नयी दिशा देने के लिये बहुत अधिक उत्सुक थे। पंडित त्रिलोकी नाथ कौल के प्रयासों से इस ऐतिहासिक समझौते पर दोनों देशों के प्रतिनिधियों ने सन् 1954 में हस्ताक्षर किये और ऐशिया की दो प्रमुख शक्तियों के मध्य एक नये अध्याय का सूत्र पात्र हुआ। और इस समझौते की उस सयम विश्व के अनेक देशों ने सराहना की। पर जब चीन ने सन् 1962 में भारत पर अकस्मात भयंकर आक्रमण कर दिया और भारत की लाखों वर्ग किलोमीटर भूमि पर

अपना अवैध कब्ज़ा कर लिया तो इस पंचशील समझौते की एक दम पोल खुल गयी और इसकी धज्जियां उड़ गयी पंडित नेहरू जिसको अपना बहुत बड़ा घनिष्ठ मित्र समझ रहे थे उसी ने उनकी पीठ में छुरा घोंप दिया। इस दुःखद घटना से पंडित नेहरू को इतना तगड़ा झटका लगा जिसकी कभी उन्होंने स्वप्न में भी कल्पना नहीं की थी। उनको जनता के दबाव में विवश होकर अपने तत्कालीन रक्षा मंत्री वी0के0 कृष्णा मेनन को मंत्री मण्डल से निष्कासित करना पड़ा जिनकी क्षमता और दक्षता पर उन्हें बहुत अधिक विश्वास था और जिनके कार्यकाल में देश के आयुद्ध कारखाने सेना के जवानों के लिये अस्त्र–शस्त्र निर्माण करने के स्थान पर काफ़ी परकोलेटर तथा जूते चप्पलें बनाने में संलग्न थे जिसके कारण युद्धभूमि में भारत को बहुत अधिक अपमानजनक पराजय का सामना करना पड़ा।

पंडित त्रिलोकी नाथ कौल को सन् 1954 में चीन से पंचशील समझौता कराने के पश्चात विदेश मंत्रालय में ज्वाईन्ट सेक्रेट्री के पद पर नियुक्त कर दिया गया। आपको सन् 1956 में एक अन्तर्राष्ट्रीय आयोग का अध्यक्ष बना कर वेयतनाम भेजा गया। जिसका कार्य वहां जनेवा सन्धि की शर्तों का भलि भांति अनुपालन कराना था और साथ ही साथ यह सुनिश्चित करना था कि वहां मानवाधिकारों का किसी प्रकार से हनन न हो। आपने यह महत्वपूर्ण कार्य बहुत ही निष्ठापूर्वक बड़ी कुशलता के साथ सम्पादित किया। आप लगभग 2 वर्ष इस कार्य को पूर्ण करने के लिये वेयतनाम में रहे और वहां की संस्कृति तथा कार्य प्रणाली को भलि भांति समझा।

पंडित त्रिलोकी नाथ कौल को सन् 1958 में भारत का राजदूत बना कर ईरान भेजा गया। चूंकि आप फ़ारसी भाषा में परान्गत थे इस नाते आपको अपने तेहरान में प्रवास के दौरान किसी भी व्यक्ति से वार्तालाप करने में कभी भी कोई विशेष कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ा और आपने अपनी इस नियुक्ति का भरपूर आनन्द लिया। आपने वहां के शासक आर्यमेहर रज़ा शाह पहलवी और उनकी धर्मपत्नी मलका सुरैय्या

से व्यक्तिगत स्तर पर बहुत अधिक मधुर सम्बन्ध स्थापित किये। एक बार आपको वहां एक बहुत ही विस्फ़ोटक स्थिति का सामना करना पड़ा जब किसी अंग्रेज़ अधिकारी ने जानबूझ कर आपकी स्थिति को कूटनीति के स्तर पर ख़राब करने की नियत से आपकी और उस समय तेहरान में पधारे लार्ड माउंटबैटन के मध्य हुई गुपचुप वार्तालाप को ईरान के समाचार पत्रों में लीक कर दिया ताकि आपकी छवि वहां के शाह की नज़र में बिगड़ जाये जिस वार्तालाप में आपने शाह की नीतियों के विरूद्ध ईरान से निष्कासित धार्मिक गुरू अयातुल्लाह खुमैनी के विद्रोह को एक जन आन्दोलन का रूप लेते हुऐ देख कर यह बात कही थी कि अब ऐसा प्रतीत होता है कि शाह के शासन के दिन समाप्त होने वाले हैं। क्योंकि उसका राज सिंहासन अब हिलता नज़र आ रहा है। यद्यपि इस लीक का माउंटबैटन ने ठीकरा आपके सर पर फोड़ा पर आपको पूरा विश्वास था कि या तो यह वार्तालाप करने वाले कक्ष में किसी तकनीकी विधि द्वारा आपकी बात को रिकार्ड किया गया जिसे बगिंग कहते हैं या फिर यह वहां पर उपस्थित किसी अंग्रेज़ अधिकारी की कारस्तानी थी जो शाह से आपके मधुर सम्बन्धों को हज़म नहीं कर पा रहा था। और उनमें ख़टास उत्पन्न करना चाह रहा था। ताकि कूटनीति के स्तर पर आप बहुत अधिक अपनी कार्यवाही में सफ़ल न हो सकें।

पंडित त्रिलोकी नाथ कौल को सन् 1959 में ब्रिटेन में भारत का डिप्टी हाई कमिश्नर बना कर भेजा गया जहां आपको पुनः श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित की सहायता करनी थी जो उस समय लन्दन में भारत की हाई कमिश्नर नियुक्त थी। जब श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित को सन् 1961 में रोग ग्रस्त हो जाने के कारण उसका उपचार कराने के लिये भारत वापस आना पड़ा तो उनके स्थान पर पंडित त्रिलोकी नाथ कौल को वहां भारत का कार्यकारी हाई कमिश्नर बना दिया गया। आपको वहां अपनी कूटनीति द्वारा भारत के आक्रमण द्वारा पुर्तगाल के कब्ज़े से गोवा, डामन और डयू को मुक्त करा कर देश में विलय कराने के कदम को उचित, न्यायपूर्ण तथा तर्कसंगत बताना था। आपको इस कार्य को करने

में कोई विशेष कठिनाई नहीं हुई क्योंकि आपकी अन्तर आत्मा में यह बात बिलकुल स्पष्ट थी कि एक प्रजातांत्रिक व्यवस्था में उपनिवेशवाद के लिये कोई स्थान नहीं हैं और वहां की जनता को ही अपनी सरकार का चुनाव करने का पूर्ण अधिकार होना चाहिये इसमें किसी बाहरी शक्ति के हस्तक्षेप की कोई आवश्यकता नहीं है।

आपको पुनः सन् 1962 में भारत का राजदूत बना कर सोवियत संघ भेजा गया जहां आप मास्को में इस पद पर सन् 1966 तक रहे। यह विश्व की कूटनीति के स्तर पर बहुत ही कठिन समय था क्योंकि इस अन्तराल में भारत को दो युद्धों का सामना करना पड़ा पहला सन् 1962 में चीन का आकस्मिक आक्रमण दूसरा सन् 1965 में पाकिस्तान द्वारा भारत पर थोपा गया युद्ध। यह पंडित त्रिलोकी नाथ कौल के सम्पूर्ण कूटनीतिक जीवन में सबसे अधिक परीक्षा की घड़ी थी जिसके लिये आपको काफ़ी संघर्ष करना पड़ा और कठिनाईयां झेलनी पड़ी। यद्यपि प्रारम्भ में आपके सोवियत संघ के तत्कालीन कर्ताधर्ता निकिता क्रुश्चेव से बहुत अधिक घनिष्ठ सम्बन्ध नहीं थे पर बाद में आप अपने कठोर परिश्रम तथा प्रयासों द्वारा भारत के प्रति उनकी सोंच में परिवर्तन लाने में सफ़ल हुऐ और दोनों देशों के मध्य एक नये मैत्रीपूर्ण अध्याय का शुभारम्भ सम्भव हो सका। आपने सोवियत संघ की सर्वोच्च कार्यकारिणी को विश्वास में लेकर यह स्पष्ट किया कि चीन की आक्रामक गतिविधियों से दोनों देशों को एक समान ख़तरा है अतः इस क्षेत्र में एक साथ मिलकर कार्य करना अधिक उचित उपयुक्त और दोनों राष्ट्रों के हित में होगा और हमारी सामूहिक शक्ति का विस्तार होगा। आपकी कूटनीतिक प्रयासों का ही फल था कि सन् 1965 के भारत–पाक युद्ध के पश्चात सन् 1966 में इन दोनों देशों के मध्य ताशकंद में एक समझौता सम्भव हो सका जिस पर पाकिस्तान की ओर से वहां के तत्कालीन राष्ट्रपति जनरल अयूब ख़ां तथा भारत की ओर से तत्कालीन प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री ने अपने हस्ताक्षर किये पर दुर्भाग्यवश इस ऐतिहासिक सन्धि पर हस्ताक्षर करने के पश्चात वह भारत जीवित नहीं लौट सके और उनकी वहीं ताशकंद में सन्दिग्ध परिस्थितियों

में मृत्यु हो गयी और दूसरे दिन उनके शव को उनके कक्ष के दरवाजे के मध्य पड़ा पाया गया जिस होटल में उनको ठहराया गया था।

लाल बहादुर शास्त्री की ताशकन्द में इस अकस्मात मृत्यु के पश्चात श्रीमती इन्दिरा गांधी भारत की प्रथम बार 19 जनवरी सन् 1966 को प्रधान मंत्री बनीं। उन्होंने पंडित त्रिलोकी नाथ कौल को उनकी योग्यता के आधार पर भारत का विदेश सचिव नियुक्त कर दिया। आपने विदेश मंत्रालय के मुखिया के रूप में श्रीमती इन्दिरा गांधी के साथ लगभग 5 वर्ष कार्य किया जो भारत के राजनीतिक इतिहास में बहुत ही महत्वपूर्ण समय था क्योंकि आपके ही कार्य काल में सन् 1971 के भारत–पाक युद्ध के पश्चात बंग्लादेश का एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में विश्व के मानचित्र पर उदय हुआ। जिसके कारण अमरीका के भारत के प्रति व्यवहार में अमूलचूक परिवर्तन आया। आपके ही कूटनीतिक प्रयासों से अमरीका की नौ सेना का सातवां बेड़ा हिन्द महासागर में पहुंचने में सफ़ल नहीं हो सका वरन कदाचित परिस्थिति कुछ और हो जाती और वह सब सम्भव नहीं हो पाता जो अन्यथा सम्भव हो सका। आप निष्पक्ष विचारधारा के पालन में काफ़ी सीमा तक सफ़ल रहे जिसकी आधारशिला भारत के पंडित जवाहर लाल नेहरू, मिस्र के जमाल अब्दुल नासर तथा तत्कालीन योगोस्लाविया के मार्शल टीटो ने मिल कर रखी थी।

पंडित त्रिलोकी नाथ कौल ने सन् 1971 में भारत और सोवियत संघ के मध्य मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों को स्थापित करने के लिये की गयी सन्धि को मूर्ति रूप देने में एक अहम भूमिका निभायी। आपने सन् 1971 के भारत पाक के युद्ध के पश्चात शिमला में सन् 1972 में दोनों देशों के मध्य हुऐ समझौते के लिये उचित वातावरण बनाया। आपने विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर भारत का प्रतिनिधित्व किया और विभिन्न देशों के विदेश सचिवों के सम्मेलनों में भारत की ओर से समय समय पर भाग लिया तथा राष्ट्रकुल देशों के अधिवेशनों में भारत की विदेश नीति की विस्तृत व्याख्या की और इस सम्बन्ध में विश्व के अनेक देशों की यात्रा की।

पंडित त्रिलोकी नाथ कौल को पुनः सन् 1973 में भारत का राजदूत

बना कर अमरीका भेजा गया और साथ ही साथ आपको बहामास का हाई कमिश्नर भी बनाया गया यह कार्य भार आपको विदेश सचिव के पद से सन् 1973 में 60 वर्ष की आयु पूर्ण हो जाने पर सेवा से निवृत्त हो जाने पर सौंपा गया यह वाशिंगटन डी0सी0 में आपकी कूटनीति की परीक्षा की घड़ी थी। आप वहां हेनरी किंसजर जैसे अनुभवी और चतुर कूटनीतिज्ञ से मधुर सम्बन्ध स्थापित करने में सफ़ल हुऐ जो उस समय अमरीका के सेक्रेट्री ऑफ स्टेट्स थे। आपका पारदर्शी व्यक्तित्व तथा सीधा स्वभाव हर व्यक्ति को अपनी ओर आकर्षित करता था। एक बार एक पत्रकार ने व्यंग्य में आपसे प्रश्न किया कि यदि निवस्त्र होकर दौड़ना एक महामारी का रूप लेले तो क्या होगा? आपका उसको विनम्र उत्तर था कि महाशय आप भारत आने का कष्ट करें हम इस महामारी को पिछले 3000 वर्षों से झेल रहे हैं। आपने भारत और अमरीका के सम्बन्धों को और अधिक प्रगाढ़ बनाने के उद्देश्य से सन् 1974 में भारत और अमरीका के मध्य एक द्विपक्षीय आयोग की स्थापना की ताकि इन दोनों देशों के मध्य विभिन्न समस्याओं का निराकरण द्विपक्षीय वार्तालाप से सम्भव हो सके।

जब श्रीमती इन्दिरा गांधी ने जय प्रकाश नारायण द्वारा देश में चलाये जा रहे छात्र आन्दोलन को कुचलने के लिये सन् 1975 में देश में आपातकाल की घोषणा की और एक प्रजातांत्रिक व्यवस्था में एक तानाशाह की भांति कार्य करना प्रारम्भ किया तो प्रारम्भ में पंडित त्रिलोकी नाथ कौल ने उनका पक्ष लेते हुए उनके इस कार्य की अमरीका में जम कर वकालत की पर बाद में जब उन्होंने आपातकाल का पूर्ण लाभ उठाते हुए उनके सुपुत्र संजय गांधी को अपनी मनमानी करते हुऐ देखा तो उनकी अन्तर आत्मा उनको धिक्कारने लगी। आपने तुरन्त श्रीमती इन्दिरा गांधी से इस पद पर और अधिक कार्य करने में अपनी अस्मर्थता जतायी और उनसे आपको इस भार से मुक्त करने का आग्रह किया। आपके भारत वापस आने के पश्चात श्रीमती इन्दिरा गांधी ने देश में चुनाव कराने की घोषणा कर दी जिसमें उनकी कांग्रेस पार्टी को बहुत ही अपमानजनक पराजय का मुंह देखना पड़ा।

पंडित त्रिलोकी नाथ कौल को सन् 1976 में भारतीय सांस्कृतिक सम्बद्ध परिषद का अध्यक्ष मनोनीत किया गया और उनको एक केन्द्रीय मंत्री का पद दिया गया। आपने इस पद पर लगभग एक वर्ष सन् 1977 तक कार्य किया। आपको फिर सन् 1980 में यूनेस्को के कार्यकारी मण्डल में एक सदस्य के रूप में चुन लिया गया आपने इस पद पर सन् 1984 तक कार्य किया।

श्रीमती इन्दिरा गांधी की नृशंस हत्या के पश्चात जब उनके ज्येष्ठ पुत्र राजीव गांधी सन् 1984 में भारत के प्रधानमंत्री बने तो उन्होंने पुनः पंडित त्रिलोकी नाथ कौल को सन् 1986 में सोवियत संघ में भारत का राजदूत नियुक्त कर दिया। आपने मास्को में लगभग तीन वर्ष सन् 1989 तक इस पद पर कार्य किया और आपको एक केन्द्रीय मंत्री का दर्जा दिया गया। उस समय वहां मिखायल गोर्वाचोब अपनी पैरेसत्रोयका तथा ग्लासनाष्ट का राग अलाप रहे थे और उसको मूर्ति रूप देने की भूमिका बनाने में जुटे हुए थे। वह भारत की तुलना में अमरीका से अपने मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करने को अधिक महत्त्व दे रहे थे क्योंकि भारत के साथ सम्बन्धों के प्रति कुछ उनकी अपनी भ्रान्तियां थीं और उनकी सोंच उस समय वास्तव में राग द्वेष से पूर्ण रूप से मुक्त नहीं थी जिसके कारण पंडित त्रिलोकी नाथ कौल अपने इस कार्य काल में अपने अथक प्रयासों के पश्चात भी कूटनीति के स्तर पर बहुत अधिक सफ़ल नहीं हो पाये और विशाल सोवियत संघ का अनेक छोटे–छोटे गणराज्यों में विघटन हो गया।

पंडित त्रिलोकी नाथ कौल ने कुछ वर्ष कश्मीर विश्वविद्यालय में प्रोफ़ेसर के पद पर भी बिना वेतन लिये कार्य किया। आप वर्ल्ड अफ़ेयर्स फाउडेशन के संस्थापक अध्यक्ष तथा वर्ल्ड अफ़ेयर्स पत्रिका के सम्पादक रहे। आप मध्य ऐशिया के हिमालियन कल्चर सेन्टर के अध्यक्ष रहे। आप भारत और चीन के मध्य सांस्कृतिक आदान प्रदान के लिये स्थापित केन्द्र के अध्यक्ष रहे। आप देश की तकनीकी तथा राष्ट्रीय विकास के लिये गठित समिति के अध्यक्ष रहें। आप चन्दीगढ़ में स्थापित ग्रामीण

अनुसन्धान तथा औद्योगिक विकास केन्द्र के उपाध्यक्ष रहे।

पंडित त्रिलोकी नाथ कौल का विवाह सन् 1931 में श्रीनगर में पंडित सर्वानन्द रैना शायर की सुपुत्री सुश्री सती रैना के साथ सम्पन्न हुआ था जो कश्मीर के एक प्रतिष्ठित कवि थे। आपके एक पुत्र प्रदीप और एक पुत्री प्रीति है। आपके पुत्र प्रदीप कौल आजकल 7, पूर्वी मार्ग, वसन्त विहार नई दिल्ली–110057 में रहते हैं। श्रीमती सती रैना का स्वर्गवास सन् 1993 में नई दिल्ली में हुआ था।

पंडित त्रिलोकी नाथ कौल भारत के कुछ उन गिने चुने प्रशासकों में से एक थे जिन्होंने सत्ता के हस्तांन्तरण को बहुत निकट से देखा था। आप एक बहुत ही कुशल, अनुभवी और विद्वान प्रशासक थे जिनको अंग्रेज़ी, संस्कृत, फ़ारसी, उर्दू, हिन्दी, कश्मीरी, रूसी तथा स्पेन की भाषा पर समान रूप से अधिकार था आपने विश्व के अनेक देशों की यात्रा की तथा अधिकतर पठन पाठन को अपने जीवन में महत्व दिया।

आप पाइप तथा सिगार पीने के बहुत अधिक शौकीन थे तथा बेहतरीन पनामा में निर्मित हवायन सिगार पीते थे। आपको मदिरा पान से भी कोई विशेष परहेज नहीं था और पार्टियों में एक–दो पेग ले लेना आपकी कमज़ोरी थी। आप अपने शरीर को स्वस्थ और स्फूर्तिवान रखने के उद्देश्य से नियमित रूप से प्रतिदिन योगाभ्यास करते थे। प्रातः काल एक लम्बी पदयात्रा करना भी आपके जीवन का एक नियम बन गया था। आप बहुत ही खुश मिज़ाज व्यक्ति थे और जो भी व्यक्ति आपसे मिलने आता था वह आपके मधुर स्वभाव के कारण प्रसन्नचित मुद्रा में हो जाता था तथा अपने को बहुत अधिक आत्मीय और सुखद वातावरण में पाता था। और स्वयं को अपने घर के समान स्थिति में होने का अनुभव करता था। आपका शिष्टाचार एवं कुशल व्यवहार वास्तव में अद्वितीय था जो हर व्यक्ति पर आपकी एक अमिट छाप छोड़ता था और जो आपसे भेंट करने के पश्चात आपका एक प्रकार से भक्त बन जाता था। आप एक हर दिल अज़ीज़, और प्रतिभावान व्यक्ति थे जो कुछ अपने इन्हीं विशेष गुणों के कारण सबके प्रिय थे।

पंडित त्रिलोकी नाथ कौल ने अनेक पुस्तकें लिखीं तथा आपके लेख राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की विभिन्न पत्रिकाओं और समाचार पत्रों में प्रकाशित हुऐ। आपके द्वारा लिखी हुई कुछ मुख्य पुस्तकें हैं "Diplomacy in Peace and War" (1979); "India, China and Indo China" (1980); "Indo US Relations" (1981); "Reminiscences"; "Life in a Himalayan Hamlet"; "Ambassadors Need not Lie" (1989); "Stalin to Gorbachev and Beyond" (1990); "Future of Commonwealth's Independent States" (1991); "Diplomat's Diary" (1999-2000); तथा "India and the New World Order" (1999-2000).

पंडित त्रिलोकी नाथ कौल ने अपने जीवन के अन्तिम वर्षों में अपने निवास के लिये हिमाचल प्रदेश में एक एकान्त तथा रमणीक स्थल नोरो कोटी गांव में चुना जो नगर की गहमागहमी से दूर प्राकृतिक सौन्दर्य की दृष्टि से अनुपम था। आपने वहां अपने रहने के लिये एक Cottage का निर्माण कराया जिसका नाम आपने "तपोवन" रखा। आपने अपनी कुटिया के चारों ओर विभिन्न फूलों और फलों के वृक्ष लगाकर उसको वास्तव में एक सुन्दर वन का रूप दे दिया। आपने अपने प्रयासों द्वारा हिमाचल प्रदेश में वाई0एस0 परमार हार्टिकल्चर विश्वविद्यालय की स्थापना करायी जो सम्पूर्ण ऐशिया महाद्वीप में अपने प्रकार का एक अनोखा विश्वविद्यालय है।

पंडित त्रिलोकी नाथ कौल ने उस अविकसित ग्रामीण क्षेत्र में बच्चों की उचित शिक्षा की व्यवस्था की जिसके लिये टीन की छत डाल कर एक प्राईमरी स्कूल की स्थापना की गयी। आपने वहां की ग्रामीण महिलाओं को सिलाई–बुनाई तथा विभिन्न फलों के अचार, मुरब्बे, जाम, जेली इत्यादि बनाने का प्रशिक्षण देने की व्यवस्था की ताकि ग्रामीण महिलाऐं आर्थिक दृष्टि से आत्म निर्भर बन सकें और उनके जीवन स्तर में व्यापक सुधार लाया जा सके। आपने इन महिलाओं को उचित रोज़गार दिलाने के लिये वहां एक सेन्टर की स्थापना भी की।

आपने इन ग्रामीण कुटीर उद्योग के उत्पादों को बाज़ार में विक्रय

करने का भी उचित प्रबन्ध किया। आप कई बार इन उत्पादों को स्वयं अपनी गाड़ी द्वारा दिल्ली ले जाते थे और वहां अपने मित्रों में उनको वितरित करते थे। एक बार इस प्रकार की यात्रा में आपका साथ प्रसिद्ध लेखिका तथा पत्रकार अनीस जंग ने भी दिया था। आपने अपने जीवन की अन्तिम सांस तक अपने को व्यस्त रखा और अपने इस सीमित संसार में सदा प्रसन्नचित रहे। आपका यही कुछ दिन रोग ग्रस्त रहने के पश्चात 16 जनवरी 2000 को लगभग 87 वर्ष की आयु में निधन हो गया। आपकी मृत्यु का समाचार पाकर सारा देश स्तब्ध रह गया। भारत के तत्कालीन राष्ट्रपति के0आर0 नारायणन जिन्होंने अमरीका में अपने सेवा काल में आपके आधीन कार्य किया था, ने अपने व्यक्तिगत शोक संदेश में आपको अपने समय का एक महान कूटनीतिज्ञ बताया जिसकी राष्ट्र के प्रति की गयी सेवा को सदैव स्मरण किया जायेगा। भारत के तत्कालीन प्रधान मंत्री अटल बिहारी वाजपेई ने कहा कि भारत ने एक कर्मठ प्रशासक खो दिया जिसने विश्व की दो महान शक्तियों से भारत के मधुर सम्बन्ध स्थापित करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। देश के जिन अन्य प्रतिष्ठित नेताओं ने आपकी मृत्यु पर अपनी संवेदनाऐं प्रकट की वह थीं प्रतिपक्ष की नेता श्रीमती सोनिया गांधी, के0 नटवर सिंह, अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षण संस्थान के भूतपूर्व संकायाध्यक्ष के0पी0 मिश्र, तथा वरिष्ठ पत्रकार इन्दर मल्होत्रा और श्याम लाल।

पंडित त्रिलोकी नाथ कौल ने अपने संघर्षमय जीवन में कठोर परिश्रम के बल पर जो मापदण्ड स्थापित किये वह सदा बिरादरी के नवयुवकों के लिये प्रेरणा का स्रोत रहेंगे। ऐसे गुणी तथा प्रतिभावान व्यक्ति यदा कदा ही जन्म लेते हैं। जो अपने कार्य कलापों द्वारा सम्पूर्ण समाज को एक नयी दिशा दे कर उसको प्रगति के पथ पर अग्रसर करते हैं और राष्ट्र का गौरव बन जाते हैं। ऐसे ही कुछ विशिष्ट व्यक्तियों के लिये हिन्दी के प्रख्यात कवि चन्द्रसेन विराट ने अपने भावों को कुछ इस प्रकार प्रकट किया है।

"तेरी मौजूदगी अब हर जगह मालूम होती है।

मुझे हर शाम जीवन की सुबह मालूम होती है।
तेरी देखी है जब से शक्ल मैंने दिल की आंखों से
मुझे हर शक्ल तेरी ही तरह मालूम होती है।"



एक कुशल एवं प्रतिभावान शैल्य चिकित्सक

डॉ० आनन्द नारायण राज़दान



भारत के शीर्षस्थ राज्य कश्मीर की नैसर्गिक सुन्दरता तथा वैभव आदिकाल से समस्त विश्व के लिये एक कौतूहल तथा प्रमुख आकर्षण का केन्द्र रहा है। आध्यात्मिकता के वातावरण में धार्मिक चेतना एवं सांस्कृतिक क्रियाकलापों का जो परिष्कृत एवं परिमार्जित स्वरूप यहां पर प्रतीत होता है वह निश्चित रूप से हमारी भारत माता के मस्तिष्क को महिमा मंडित कर गौरवान्वित करता है।

कश्मीर आदिकाल से अपने प्रमुख शारदा तीर्थ के कारण अपनी प्रशस्त संस्कृत विद्वान परम्परा के लिये भी प्रसिद्ध रहा जिसको उच्च शिक्षा का एक महत्वपूर्ण केन्द्र माना जाता था यहां देश विदेश के शास्त्रकारों तथा मूर्धन्य विद्वानों की परीक्षा मां भगवती सरस्वती के सम्मुख होती थी और यहां आकर शास्त्रार्थ करने के पश्चात ही उन्हें विद्या–जगत में मान्यता प्राप्त होती थी कश्मीर के ही महाकवि क्षेमेन्द्र के शब्दों में

"अस्ति स्वस्तिमतायग्यं मण्डितं बुधमण्डलैः
खण्डिताखण्डलावासदर्प कश्मीर मण्डलम्।।

अर्थात अपनी विद्वन्मण्डली से विभूषित कश्मीर देवताओं के निवास से गौरवान्वित स्वर्ग का भी तिरस्कार करता रहा है। यह वह पावन भूमि है जहां कभी वैदिक ऋषि कवियों को ऋतम्भरा प्रज्ञा को प्रकाश प्राप्त हुआ था। यही वह धरती है जो आर्य सभ्यता के अविर्भाव की साक्षी रहीं

है।

कश्मीर के विद्वानों तथा मनीषियों ने समय समय पर नवीन प्रेरणाओं, धारणाओं तथा विचार धाराओं का स्वागत करते हुऐ उनको अपने समाज में सदैव एक सुयोग्य स्थान दिया ताकि उसकी प्रगति में किसी प्रकार का कोई अवरोध न उत्पन्न हो और वह बिना किसी बाधा के उन्नति के शिखर की ओर अग्रसर हो। इस प्रक्रिया में पूरे समाज की संरचना में निश्चित रूप से एक क्रान्तिकारी परिवर्तन आया और व्यक्तियों की मान्यताऐं उसी के अनुरूप बदली। पर इस तीव्र गति से बदल रहे वातावरण में भी कश्मीर के मूल निवासी कश्मीरी पंडितों ने सदैव अपने जीवन में उच्च शिक्षा को प्राथमिकता दी और उसके लिये संघर्ष किया। उन्होंने प्रतिकूल परिस्थितियों में भी समाज के अनेक क्षेत्रों में ऐसे प्रतिभाशाली विद्वान उत्पन्न किये जिन्होंने अपने ज्ञान से समस्त विश्व को विस्मृत कर दिया। कश्मीर के विद्वान चरक ने विभिन्न असाध्य रोगों के उपचार के लिये "चरक संहिता" नामक शोधग्रन्थ को लिख कर शैल्य चिकित्सा द्वारा रोगों की उपचार करने की विधि का सर्व प्रथम सूत्रपात किया जिससे अनेक रोगियों को एक नया जीवन दान मिला और चिकित्सा के क्षेत्र में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन आया। कश्मीरी पंडित समाज में अनेक ऐसे कुशल शैल्य चिकित्सक उत्पन्न हुऐ हैं जिन्होंने अपनी असाधारण प्रतिभा का परिचय देकर सम्पूर्ण विश्व में अपने लिये एक प्रतिष्ठित स्थान बनाया और वृहद समाज में मान सम्मान पाया। वह अपने कुशल व्यवहार और मानवीय मूल्यों के कारण सबके प्रिय बने और उन्होंने सबका विश्वास जीता। ऐसे ही एक अनूठे तथा सर्वप्रिय शैल्य चिकित्सक हैं डॉ0 आनन्द नारायण राज़दान जो अपने जीवन के नवें दशक में भी सक्रिय हैं और अनेक व्यक्तियों के लिये एक प्रेरणा का स्रोत हैं।

डॉ0 आनन्द नारायण राज़दान के पूर्वज मूल रूप से कश्मीर घाटी के श्रीनगर जनपद के रैनावारी मुहल्ले के निवासी थे। कुछ विद्वानों मुख्य रूपसे डॉ0 स्टीन के मतानुसार कुलनाम राज़दान वास्तव में संस्कृत भाषा के "राजानक" शब्द का बिगड़ा हुआ स्वरूप है। जिसका प्रयोग कश्मीर

में प्राचीन समय में वहां के राजा के मुख्य सलाहकार के लिये होता था जो राजा को हर कार्य में सहायता करता था। सम्भव है कि आपके पूर्वज किसी समय इस पद पर नियुक्त रहे हों जिसके कारण वह अपना कुलनाम राजदान लिखने लगे। आपके पूर्वज 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में कश्मीर घाटी से निकल कर मुग़ल मार्ग द्वारा दिल्ली आ गये थे जहां उस समय मुग़ल सम्राट बहादुर शाह जफ़र (1837–1857) का शासन काल था और वह वहां बाज़ार सीताराम मुहल्ले में एक आवास किराये पर लेकर अपने परिजनों के साथ रहने लगे। कालान्तर में डॉ0 आनन्द नारायण राज़दान के पितामह पंडित बिशन नारायण राज़दान ब्रिटिश शासन काल में अंग्रेज़ों द्वारा सुपरिन्टेन्डेन्ट बना दिये गये थे। कुछ वर्ष दिल्ली में नौकरी करने के पश्चात अंग्रेज़ों ने पंडित बिशन नारायण राज़दान को सन् 1890 में दिल्ली से अमृतसर स्थानान्तरित कर दिया जहां आप फ़रीद चौक के निकट कूचाऐं कश्मीरी पंडितान में एक आवास किराये पर लेकर अपने परिजनों के साथ निवास करने लगे जो उस समय अमृतसर में कश्मीरी पंडितों का एक प्रमुख केन्द्र हुआ करता था। आप अमृतसर म्यूनिसपिलिटी के सुपरिन्टेन्डेन्ट के पद से सेवा निवृत्त हुऐ।

जब सन् 1887 में लखनऊ की कश्मीरी पंडित बिरादरी ने पंडित बिशन नारायण दर को लन्दन से कश्मीरी मोहल्ले में वापस लौटने पर प्रायश्चित न करने के कारण बिरादरी से निष्कासित किया तो पंडित बिशन नारायण राजदान जो कि एक प्रगतिशील विचारधारा वाले व्यक्ति थे को बिरादरी का यह कृत्य बहुत बुरा लगा और उन्होंने उसके विरूद्ध पंडित बिशन नारायण दर को समर्थन देने के उद्देश्य से अपने प्रभाव का पूर्ण प्रयोग करते हुऐ अमृतसर में रहने वाले कश्मीरी पंडितों की एक साधारण सभा आहूत की जो आपकी विचारधारा से सहमत थे। आपने उस सभा में पंडित बिशन नारायण दर के पक्ष में एक प्रस्ताव भी पारित कराया जिसमें उनके इस कृत्य को उचित ठहराया गया। इस प्रस्ताव के समर्थन में जिन अन्य प्रगतिशील कश्मीरी पंडितों ने आपका साथ दिया उनमें प्रमुख थे पंडित ब्रिज मोहन लाल तिक्कू तथा पंडित अर्जुन नाथ मुट्टू।

पंडित बिशन नारायण राजदान ने समाज में व्याप्त कुरीतियों को समाप्त करने तथा जन मानस के सामाजिक स्तर में व्यापक सुधार लाने के उद्देश्य से सन् 1890 में जो कार्य प्रारम्भ किया था उसको और अधिक गति प्रदान करने के लिये आप Temperance Society के एक सक्रिय सदस्य बन गये और अमृतसर में आपने उसकी एक इकाई का विधिवत गठन किया जिसका आपको संस्थापक सचिव बना दिया गया। इस संगठन के उस समय अन्य महत्वपूर्ण सदस्य थे आपके पुत्र पंडित स्वरूप नारायण राजदान, उर्दू के प्रतिष्ठित शायर पंडित ब्रिज मोहन दत्तात्रेय "कैफ़ी", पंडित नन्द लाल और राजा नरेन्द्र नाथ रैना (छिजबल्ली)।

पंडित बिशन नारायण राज़दान के चार पुत्र क्रमशः धर्म नारायण, स्वरूप नारायण, शिव नारायण तथा चांद नारायण और दो पुत्रियां कामताशुरी तथा बिशन थीं जिनमें कामताशुरी का विवाह कश्मीर के श्रीनगर जनपद के निवासी पंडित धर्म नारायण दर के साथ तथा बिशन का विवाह आगरा के निवासी पंडित अर्जुन नाथ तकरू के साथ सम्पन्न हुआ था।

पंडित बिशन नारायण राज़दान के ज्येष्ठ पुत्र पंडित धर्म नारायण राज़दान अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात चमड़ा उद्योग का प्रशिक्षण लेकर एक चमड़ा विशेषज्ञ बन गये थे। आपको अंग्रेज़ों ने राय बहादुर की पदवी से सम्मानित किया था। आप अमृतसर से पलायन करके उत्तर प्रदेश की उद्योग नगरी कानपुर में आकर अपने परिवार सहित बस गये थे जहां आप राजकीय लेदर स्कूल के प्राचार्य हो गये थे। आपने दो विवाह किये थे। आपकी पहली पत्नी भरतपुर रियासत के दीवान पंडित जियालाल वातल की सुपुत्री थी। आपकी दूसरी पत्नी कानपुर के निवासी पंडित कुँवर प्रसाद मुशरान की बहन थीं। आपके दो पुत्र ब्रिजेन्द्र नारायण और विजेन्द्र नारायण तथा एक पुत्री रूप कुमारी थीं जिनका विवाह पंडित चांद बहादुर कौल के साथ सम्पन्न हुआ था।

पंडित ब्रिजेन्द्र नारायण राज़दान अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात कानपुर के सहकारी बैंक की शाखा के प्रबंधक हो गये थे। आपका

विवाह वाराणसी के निवासी पंडित रघुनन्दन लाल दर की सुपुत्री कमला के साथ सम्पन्न हुआ था। आपके दो पुत्र कपिल और विवेक तथा एक पुत्री डॉ० मीरा हैं जिसका विवाह कानपुर के निवासी पंडित सोमेश्वर नाथ दर के सुपुत्र अशोक दर के साथ सम्पन्न हुआ है।

पंडित बिशन नारायण राज़दान के दूसरे पुत्र पंडित स्वरूप नारायण राज़दान का जन्म सन् 1878 में दिल्ली की बाज़ार सीताराम में हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा दिल्ली में ही देहली कालेज में सम्पन्न हुई। आपने फिर लाहौर के पंजाब विश्वविद्यालय से स्नातक की परीक्षा उत्तीर्ण की। आपने अपनी शिक्षा समाप्त कर लेने के पश्चात जीवकोपार्जन के लिये अमृतसर में व्यवसाय प्रारम्भ किया क्योंकि कांग्रेस पार्टी के एक सक्रिय कार्यकर्ता होने के नाते ब्रिटिश शासन काल में आपके लिये सरकारी नौकरी पाना प्रायः असम्भव था। आपने सन् 1911 में लन्दन में आयोजित World Temperance Congress के अधिवेशन में एक सदस्य के रूप में भाग लिया। आप कांग्रेस पार्टी द्वारा जलियांवाला बाग़ काण्ड के पश्चात सन् 1919 में चलाये गये अवज्ञा आन्दोलन में खुलकर भाग लेने के कारण अंग्रेज़ों द्वारा जेल में नज़रबन्द कर दिये गये। आप महात्मा गांधी के व्यक्तित्व से बहुत अधिक प्रभावित थे और उन्हीं के आह्वान पर आपने कांग्रेस पार्टी की सदस्यता ग्रहण की थी। आपका विवाह ग्वालियर रियासत के निवासी पंडित हर नारायण हाक्सर की सुपुत्री के साथ सम्पन्न हुआ था। जिनका नाम ससुराल में स्वरूप रानी रखा गया। इस दम्पति के एक पुत्र माहराज नारायण तथा एक पुत्री कामिनी थी।

पंडित माहराज नारायण राज़दान की प्रारम्भिक शिक्षा अमृतसर में सम्पन्न हुई उसके पश्चात एक कुशल चिकित्सक बनने के उद्देश्य से आपने लाहौर जाकर वहां के किंग एडवर्ड मेडिकल कालेज में प्रवेश लिया और अपनी डाक्टरी की पढ़ाई समाप्त करने के पश्चात एक चिकित्सक बने। आप फिर पंजाब प्रान्त के स्वास्थ्य विभाग में एक मेडिकल आफ़िसर के रूप में अंग्रेज़ों द्वारा नियुक्त किये गये। आप एक कुशल डाक्टर हो जाने के पश्चात अपना पैतृक आवास छोड़ कर अमृतसर में रागोब्रिज के

निकट रहने लगे। आपका विवाह जयपुर रियासत के निवासी पंडित अर्जुन नाथ अटल की सुपुत्री खिमारानी के साथ सम्पन्न हुआ था।

पंडित बिशन नारायण राज़दान के तीसरे पुत्र डॉ0 शिव नारायण राज़दान का जन्म सन् 1887 में दिल्ली की बाज़ार सीताराम में हुआ था। आप लाहौर के किंग एडवर्ड मेडिकल कालेज से अपनी डॉक्टरी की पढ़ाई समाप्त करने के पश्चात पंजाब सरकार द्वारा अपने स्वास्थ्य विभाग में एक मेडिकल आफ़िसर के पद पर नियुक्त कर दिये गये थे। जब कश्मीरी पंडितों की नेशनल कान्फ्रेन्स का राष्ट्रीय स्तर पर द्वितीय सम्मेलन लाहौर में आयोजित किया गया तो आपको उसका अध्यक्ष मनोनीत किया गया इस सम्मेलन में आपकी अध्यक्षता में कश्मीरी पंडित समाज में व्यापक सुधार लाने के उद्देश्य से कई महत्वपूर्ण प्रस्ताव पारित हुऐ पर यह दुःख का विषय है कि उनका पालन किन्हीं कारणों से निष्ठापूर्वक आज तक न सम्भव हो सका जिसके कारण राष्ट्रीय स्तर पर कश्मीरी पंडितों का कोई एक शक्तिशाली संगठन न बन सका जो उनके अधिकारों की समुचित रक्षा करने में सक्षम होता और उनको एक सूत्र में बांधे रखता। डॉ0 शिव नारायण राज़दान का विवाह कुंवरपती के साथ सम्पन्न हुआ था जो पंडित कामेश्वर नाथ कौल की पुत्री तथा राय बहादुर पंडित बिशम्भर नाथ कौल की पौत्री थीं। आपके दो पुत्र प्रताप नारायण और इक्बाल नारायण तथा एक पुत्री गिरिराज कुमारी थी।

पंडित बिशन नारायण राज़दान के चौथे और अन्तिम पुत्र पंडित चांद नारायण राजदान का जन्म सन् 1890 के आसपास दिल्ली में हुआ था। आप अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात दिल्ली के निकट की रियासत ग्वालियर में एक अच्छी नौकरी पाने के उद्देश्य से पलायन कर गये जहां के शासक माहराजा माधोराव सिंधिया प्रथम (1886–1925) ने आपको रियासत के कस्टम तथा एकसाईज विभाग में एक अधिकारी बना दिया। आप सेवानिवृत्त हो जाने के पश्चात मध्य प्रदेश के उज्जैन नगर में आवास क्रय करके निवास करने लगे। आपका विवाह कुंवर किशोरी के साथ सम्पन्न हुआ था जो ब्रिटिश शासन काल में इलाहाबाद के निवासी

पंडित कैलास प्रसाद किचलू की सुपुत्री थीं जो स्वयं एक शिक्षाविद् थे और उस समय उत्तर प्रदेश के शिक्षा निदेशक के पद पर आसीन थे।

पंडित चांद नारायण राज़दान के दो पुत्र क्रमशः सूरज नारायण और आनन्द नारायण थे। आपके ज्येष्ठ पुत्र पंडित सूरज नारायण राज़दान अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात इंग्लैण्ड चले गये और वहां से एक कुशल इन्जीनियर बन कर वापस लौटे और फिर विद्युत उत्पादन के क्षेत्र में और अधिक उच्च प्रशिक्षण लेने के उद्देश्य से जर्मनी चले गये और अपना यह प्रशिक्षण समाप्त करने के पश्चात एक उच्च कोटि के विद्युत अभियन्ता बने। आप एक लम्बे सेवाकाल के पश्चात मध्य प्रदेश के इलेक्ट्रीसिटी बोर्ड के सदस्य के पद से सेवानिवृत्त हुऐ। आप आज कल उज्जैन में अपने पिता के आवास में अपने परिजनों के साथ निवास कर रहे हैं।

पंडित चांद नारायण राज़दान के दूसरे पुत्र डॉ0 आनन्द नारायण राज़दान का जन्म 22 जनवरी सन् 1912 को इलाहाबाद के जार्ज टाऊन क्षेत्र में 15 हेमिल्टन रोड पर स्थित अपने नाना पंडित कामताप्रसाद किचलू के आवास में हुआ जो उस समय वहां प्रदेश के शिक्षा निदेशक के पद पर नियुक्त थे। आपकी माता की प्रसव के पश्चात मृत्यु हो जाने के कारण आपका लालन पालन आपकी नानी श्रीमती शोमपती किचलू द्वारा किया गया जो स्वयं पंडित इन्द्र नारायण गुर्टू की सुपुत्री थीं और जिनके पिता डिप्टी कलक्टर थे।

डॉ0 आनन्द नारायण राज़दान की प्रारम्भिक शिक्षा स्वाभाविक रूप से इलाहाबाद में ही सम्पन्न हुई। आपने इलाहाब्राद के राजकीय विद्यालय से अपनी मैट्रिकुलेशन तथा इन्टरमीडिएट की परीक्षायें क्रमशः सन् 1929 तथा सन् 1931 में बहुत अच्छे अंक प्राप्त कर प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। चूंकि आपकी एक कुशल चिकित्सक बनने की प्रबल इच्छा थी अतः डाक्टरी की पढ़ाई के उद्देश्य से आप सन् 1931 में इलाहाबाद से लखनऊ आ गये और किंग जार्ज मेडिकल कालेज द्वारा उसमें प्रवेश के लिये संचालित लिखित परीक्षा में सम्मिलित हुऐ जिसे प्रीमेडिकल टेस्ट

(पी0एम0टी0) कहते हैं। आपने इस परीक्षा में सबसे अधिक अंक प्राप्त करके प्रथम स्थान पाया और इस प्रकार लखनऊ के प्रतिष्ठित किंग जार्ज मेडिकल कालेज में आपका प्रवेश निश्चित हो गया।

प्रदेश की राजधानी लखनऊ के इस प्रतिष्ठित किंग जार्ज मेडिकल कालेज का एक अपना रोमांचक इतिहास रहा है। जिस स्थान पर आजकल मेडिकल कालेज स्थित है वहां सन् 1857 के ग़दर से पूर्व एक हलब्बी किला हुआ करता था। जिसको "मच्छी भवन" के नाम से जाना जाता था। और जो नवाबी शासन काल में उनकी सैन्यशक्ति का एक प्रमुख गढ़ था। इस किले का निर्माण शेखों ने गोमती नदी के दक्षिणी तट पर एक सामरिक महत्व के ऊंचे टीले पर करवाया था जिसको शेखों से एक युद्ध के द्वारा नवाब सआदत खां बुरहानुल मुल्क (1722—1739) नें अपने कब्ज़े में लेकर अवध में नवाबी शासन का सूत्र पात्र किया था। इस किले के चारों ओर नवाबों और रईसों के भव्य महल और कोठियां थीं और इस पूरे क्षेत्र की छठा निराली हुआ करती थी।

सन् 1857 में अंग्रेज़ों की फौजों और नवाबी सेना की दुकड़ियों के मध्य लखनऊ नगर के कई महत्वपूर्ण स्थानों पर भयंकर युद्ध और गोलाबारी हुई जिनमें सुरक्षा की दृष्टि से अति महत्वपूर्ण इस किले को अंग्रेज़ों की फौज ने तोपों द्वारा ध्वस्त कर दिया क्योंकि उनको सबसे अधिक इस किले से ख़तरा था।

माहराजा विजयानगरम नें सर्वप्रथम सन् 1870 में ब्रिटिश सरकार को यह सुझाव दिया कि इस स्थान पर रोगियों के उपचार के लिये एक मेडिकल कालेज की स्थापना की जाये। जिसके लिये उन्होंने 3 लाख रूपये दान देने का प्रस्ताव भी रखा पर उस समय प्रदेश की सरकार के पास मेडिकल कालेज की स्थापना के लिये उचित सन—साधन उपलब्ध कराने पर आने वाले व्यय के लिये धनराशि जुटाने का कोई साधन उपलब्ध नहीं हो सका। जिसके कारण यह प्रस्ताव एक मूर्ति रूप नहीं ले सका।

सन् 1905 में पुनः जहांगीराबाद रियासत के राजा तथा हरदोई

जनपद के रईस सर तसद्दुक रसूल ने तत्कालीन यूनाईटेड प्रोविन्सेस (उत्तर प्रदेश) के ले0 गर्वनर सर जेम्स डगलस लाटूश से अनुरोध किया कि वह भारत सरकार से भारत में प्रिसं ऑफ वेल्स के आगमन की स्मृति को संजोय रखने के उद्देश्य से लखनऊ में मेडिकल कालेज की स्थापना का निवेदन करें। जिसके फलस्वरूप 26 दिसम्बर सन् 1906 को प्रिंस ऑफ़ वेल्स ने लखनऊ आकर ऐतिहासिक ''मच्छी भवन'' के स्थल पर इस प्रस्तावित मेडिकल कालेज की आधारशिला रखी। जहां सन् 1857 से पूर्व वह किला स्थित था।

इस मेडिकल कालेज का विधिवत उदघाटन इंग्लैण्ड के सम्राट किंग जार्ज पंचम ने सन् 1911 में किया जिनकी ताजपोशी प्रथम बार लन्दन से बाहर दिल्ली में हुई थी। उनको चारबाग़ रेलवे स्टेशन से पांडेगंज तथा कैनिंग स्ट्रीट (सुभाष मार्ग) होते हुऐ एक भव्य जुलूस में मेडिकल कालेज के प्रांगण में लाया गया। जिसकी व्यवस्था उस समय बहुत बड़े पैमाने पर की गयी थी क्योंकि वह ब्रिटेन के प्रथम सम्राट थे जो अपनी पत्नी माहरानी मेरी के साथ लखनऊ पधारे थे। इस समारोह की अध्यक्षता यू0पी0 के तत्कालीन ले0 गर्वनर सर जॉन प्रेस्काट हीवेट ने की जिन्होंने मुख्य अतिथि किंग जार्ज पंचम के सम्मान में इसका नाम किंग जार्ज मेडिकल कालेज रख दिया।

इस मेडिकल कालेज का प्रथम प्रिन्सपल कर्नल डब्ल्यू0 सेलवी को नियुक्त किया गया जो इसके शैल्य विभाग के प्रथम प्रोफ़ेसर भी थे। ले0 कर्नल ऐ स्प्रासन को इस मेडिकल कालेज के मेडिसिन विभाग का प्रोफ़ेसर नियुक्त किया गया। इस मेडिकल कालेज का पाठ्यक्रम ब्रिटेन की जनरल मेडिकल कौंसिल द्वारा निर्धारित किया गया और इसको इलाहाबाद विश्वविद्यालय से सम्बद्ध किया गया जिसकी स्थापना सन् 1888 में हुई थी। सर स्वीन्टन जैकब जैसे प्रसिद्ध वास्तुविद ने कई योरप के मेडिकल कालेजों का भ्रमण करने के पश्चात इस मेडिकल कालेज के भवन की रूपरेखा तैयार की थी जो अवध शैली से पूर्णतया: तारतम्य स्थापित कर सके। इस मेडिकल कालेज को सन् 1921 में लखनऊ विश्वविद्यालय के

गठन के पश्चात उससे सम्बद्ध कर दिया गया।

डॉ0 आनन्द नारायण राज़दान ने लखनऊ के इस प्रतिष्ठित किंग जार्ज मेडिकल कालेज से अपनी एम0बी0बी0एस0 की परीक्षा सन् 1936 में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की और तीन विषयों में विशेष योग्यता प्राप्त की। आप अपने अध्यापकों के एक बहुत प्रिय छात्र रहे। जैसे शैल्य चिकित्सक संकटा प्रसाद माथुर, कैप्टन के0एस0 निगम। मेडिकल कालेज के तत्कालीन अंग्रेज़ प्रोफ़ेसर भी आपकी योग्यता की सराहना करते थे जैसे मेडिसिन विभाग के कर्नल बर्क और कर्नल स्टौफ़। आपने फिर इसी मेडिकल कालेज से शैल्य चिकित्सा विषय लेकर सन् 1938 में अनुभवी तथा कुशल अंग्रेज़ चिकित्सकों के संरक्षण में एम0एस0 की उपाधि प्राप्त की। आप फिर शैल्य चिकित्सा के क्षेत्र में और अधिक उच्च शिक्षा प्राप्त करने तथा इस विधा में आधुनिक प्रशिक्षण ग्रहण करने के उद्देश्य से इंग्लैण्ड चले गये जहां आपने लन्दन के रायल कालेज ऑफ सर्जनस से एफ0आर0सी0एस0 की उपाधि ग्रहण की। आप उसके पश्चात इंग्लैण्ड से स्काटलैण्ड प्रस्थान कर गये। जहां आपने ऐडिनबर्ग के रायल मेडिकल कालेज से पुनः एफ0आर0सी0एस0 की उपाधि ग्रहण की।

डॉ0 आनन्द नारायण राज़दान उस समय इंग्लैण्ड में शैल्य चिकित्सा के क्षेत्र में अपनायी जा रही विभिन्न विधियों का समुचित ज्ञान प्राप्त करने के पश्चात सन् 1939 के अन्त में भारत वापस लौट आये और आपने लखनऊ के किंग जार्ज मेडिकल कालेज में एक रेज़िडेन्ट सर्जन के रूप में अपना कार्य करना प्रारम्भ किया। आपने इस पद पर लगभग 2 वर्ष बड़ी निष्ठापूर्वक कार्य किया।

प्रदेश सरकार ने सन् 1941 में आगरा में एक नया राजकीय मेडिकल कालेज स्थापित किया। जिसका नाम देश के सन् 1947 में स्वतंत्र होने के पश्चात बदल कर प्रदेश की प्रथम महिला राज्यपाल श्रीमती सरोजिनी नायडू के नाम पर सरोजिनी नायडू मेडिकल कालेज रख दिया गया। इस नये मेडिकल कालेज को सुचारू रूप से चलाने के लिये अध्यापकों के नये पद सृजित किये गये। डॉ0 आनन्द नारायण राज़दान

ने भी उसके सर्जरी विभाग में अध्यापन के लिये अपना आवेदन पत्र भरा और आपका उस पद पर प्रदेश के लोक सेवा आयोग द्वारा साक्षात्कार में चयन कर लिया गया और आप लखनऊ से अपना पदभार ग्रहण करने के लिये आगरा प्रस्थान कर गये।

आपने आगरा के राजकीय मेडिकल कालेज के सर्जरी विभाग में लगभग 10 वर्ष एक प्राध्यापक के रूप में कार्य किया और फिर आपको प्रोन्नति करके विभाग में सन् 1951 में अस्सिटेन्ट प्रोफ़ेसर बना दिया गया। लगभग 5 वर्ष इस पद पर कार्य करने के पश्चात सन् 1956 में आपको पदोन्नति करके सर्जरी विभाग में एक प्रोफ़ेसर बना दिया गया तथा फिर सन् 1962 में आपको इसी विभाग का विभागाध्यक्ष बना दिया गया। आप इस पद से अपनी 60 वर्ष की आयु पूर्ण हो जाने के पश्चात 22 जनवरी सन् 1972 को सेवा निवृत्त हुऐ। आप अपनी विशेष योग्यता के कारण सेवा निवृत्त होने के पश्चात इसी विभाग में एक एमिरिटस प्रोफ़ेसर के रूप में नियुक्त कर दिये गये।

आपने अपने लम्बे सेवाकाल में अनेक कठिन आपरेशन करके रोगियों को स्वास्थ्य लाभ कराया तथा अपने छात्रों को शैल्य चिकित्सा के क्षेत्र में विकसित हो रही नयी नयी विधियों से अवगत कराया। आपने शैल्य चिकित्सा के विभिन्न आयामों पर बहुत ही उच्च श्रेणी का शोध कार्य किया और असाध्य रोगों के उपचार के लिये आपरेशन करने की नयी नयी तकनीकों का शुभारम्भ किया जिसको बाद में अनेक शैल्य चिकित्सकों ने अपनी चिकित्सा पद्धति में अपनाया।

आपने इस क्षेत्र में नयी नयी विधियों के प्रारूप की रूपरेखा विकसित की और इस प्रकार एक बिलकुल नयी उपचार की पद्धति को जन्म दिया जिसके लिये आप आज भी स्मरण किये जाते हैं। आपने राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के अनेक मेडिकल जनरलस में अपने उच्च कोटि के शोध पत्र प्रकाशित किये। आपके द्वारा प्रशिक्षित छात्र देश–विदेश के अनेक महत्वपूर्ण मेडिकल कालेजों में अध्यापन का कार्य कर रहे हैं। और अनेक महत्वपूर्ण पदों पर विराजमान हैं। आपने स्वयं देश के कई

प्रदेशों के मेडिकल कालेजों में एक परिक्षक के रूप में कई वर्षों तक कार्य किया है जैसे मध्य प्रदेश, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, तामिल नाडू और माहराष्ट्र। आपने सदैव अपने सहयोगियों तथा छात्रों से प्रचुर मात्रा में आदर और सम्मान पाया आप अपने समय के एक प्रख्यात शैल्य चिकित्सक रहे जिन पर रोगियों को पूर्ण विश्वास था और वह सदा आपसे ही अपना उपचार कराने के लिये उत्सुक रहते थे। क्योंकि आपको इस क्षेत्र में बहुत अधिक जानकारी थी और आप सदा अपने को विश्व में शैल्य चिकित्सा के लिये विकसित हो रही नयी नयी विधियों से पूर्ण रूप से अवगत रखते थे और बहुत ही कुशलता पूर्वक अपने कार्य को सम्पादित करते थे जिससे रोगी उपचार के पश्चात एकदम मदमस्त होकर आपका गुणगान करने लगता था और आपको एक देवता समझने लगता था।

एक बार आपके जीवन में एक विचित्र घटना घटी जिसने आपके रोंगटे खड़े कर दिये। रात्रि का लगभग 1:30 का समय था। पानी टिप–टिप बरस रहा था और आकाश में बिजली रह–रह कर चमक रही थी। इतने में किसी ने आपके दरवाज़े पर दस्तक दी। आप थोड़ा चिंतित हुऐ कि इतनी रात्रि में कौन हो सकता है। फिर आपने सोंचा कि शायद कोई मरीज़ होगा जो किसी परेशानी की वजह से अपने रोग के निदान के लिये आया है। आपने जो अपना दरवाज़ा खोला तो थोड़ी देर के लिये आप एकदम स्तब्ध रह गये। बाहर चार नकाबपोश हथियारों से लैस अपने चेहरे पर ढांटा बांधे खड़े थे और उनके साथ एक व्यक्ति खून से लथ पथ दर्द से कराह रहा था। आपको यह समझने में तनिक भी देर नहीं लगी कि यह डाकू हैं और चम्बल के कुख्यात सरग़ना डाकू मान सिंह के गिरोह के सदस्य हैं जो कदाचित किसी पुलिस मुठभेड़ में घायल होने के पश्चात उपचार कराने इस रात्रि के अंधेरे में आये हैं। उनमें से एक डाकू ने आपसे कहा कि डॉक्टर साहब हमारे साथी को गर्दन में एक गोली लगी है इसको निकाल दीजिये। आपने उसको यह समझाने की बहुत कोशिश की कि यह एक जोखिम भरा काम है जिससे मरीज़ की जान को ख़तरा हो सकता है और इस आपरेशन के लिये इसको अस्पताल में भर्ती करना

पड़ेगा पर डाकुओं ने आपकी बात मानने से इन्कार कर दिया और इसी बात पर अड़े रहे कि इसकी गोली यहीं अपने घर पर निकाल दीजिये आपको अन्त में विवश होकर अपने घर पर ही रात्रि में सीमित साधनों में मरीज़ को बिना बेहोश किये उसकी गर्दन में फंसी गोली को बहुत ही सूझ–बूझ के साथ निकालना पड़ा और उन डाकुओं के घर से जाने के बाद आपने राहत की सांस ली।

डॉ0 आनन्द नारायण राज़दान को अपनी युवावस्था से ही भारतीय शास्त्रीय संगीत सुनने का बेहद शौक़ है। आपको प्रतिष्ठित गायकों द्वारा गायी गयी ग़ज़लों को सुनने में विशेष आनन्द आता है। आपके पुराने प्रिय गायकों में बड़े गुलाम अली खां, मेंहदी हसन, गुलाम अली, राजेन्द्र मेहता, तलत महमूद, मन्नाडे, महेन्द्र कपूर, कुंदन लाल सेहगल, मुहम्मद रफ़ी, लता मंगगेश्कर, सी0एच0 आत्मा, इत्यादि का नाम प्रमुख है। आपको इसके अतिरिक्त बाग़वानी का भी बेहद शौक़ है। आप 92 वर्ष की आयु में भी सक्रिय रूप से अपने घर में लगे हुऐ पौधों की देखभाल करते हैं और आपने एक बहुत ही सुन्दर बग़ीचा अपने घर में विकसित कर रखा है जिसका हर पौधा आपको अपने प्राणों से भी अधिक प्रिय है और जिनकी आप स्वयं एक सन्तान के समान प्रतिदिन देखभाल बड़े नियम के साथ करते हैं। आपको फूलों में गुलाब मुख्य रूप से प्रिय है और आपने नाना प्रकार के गुलाब स्वयं अपने घर में विकसित किये हैं और अनेक फूलों की प्रतियोगितायें जीती हैं।

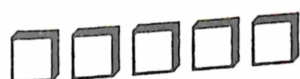
आपको पान खाने का भी लखनऊवा शौक़ है। आप बड़े चाव से दोनों समय भोजन करने के पश्चात बेहतरीन खुशबूदार तम्बाकू से युक्त पान की गिलौरी अवश्य खाते हैं और उसका भरपूर आनन्द लेते हैं। आपका कहना है कि पान न खाने से भोजन करने का पूरा मज़ा नहीं आता और मुंह कुछ सूखा सूखा सा लगता है कुछ ऐसा प्रतीत होता है जैसे किसी चीज़ की कुछ कमी रह गयी है।

डॉ0 आनन्द नारायण राज़दान का विवाह सन् 1942 के आस पास पंडित राम नारायण मल्ला की सुपुत्री ब्रिज कुमारी के साथ सम्पन्न हुआ

जो ब्रिटिश शासन काल में इन्दौर रियासत में अंग्रेज़ों द्वारा असिस्टेन्ट पोलिटिकल एजेन्ट के पद पर नियुक्त किये गये थे। डॉ0 राजदान की एक मात्र पुत्री नन्दिनी का विवाह जयपुर के राजा जय कुमार अटल जो भारत के विभिन्न देशों में राजदूत रहे के सुपुत्र अजय अटल के साथ सम्पन्न हुआ है।

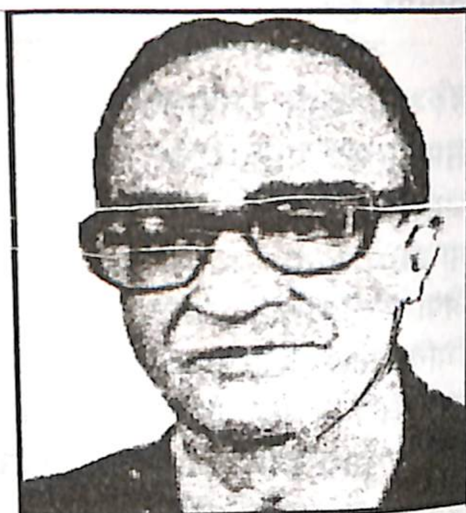
डॉ0 आनन्द नारायण राज़दान एक बहुत ही सौम्य प्रकृति के व्यक्ति हैं। आप बहुत ही सभ्य एवं सुसंस्कृत व्यक्ति हैं जिनके आगरा के कश्मीरी समाज के प्रति किये गये महत्वपूर्ण योगदान को सदा स्मरण किया जायेगा। आपने अपने जीवन में उच्च आदर्शों को महत्व दिया तथा मानवीय मूल्यों को अंगीकार किया। जिसके कारण आपने हर व्यक्ति से अपार स्नेह और आदर पाया। आप एक अद्वितीय प्रतिभा के एक कुशल चिकित्सक रहे और अनेक रोगियों को आपने जीवन दान दिया। आप वास्तव में हमारे समाज का एक अनमोल रत्न हैं जिन पर हम सबको गर्व का अनुभव होना चाहिये। ईश्वर उनको दीर्घायु करे ताकि भविष्य में भी वह हमारा एक पथप्रदर्शक के रूप में मार्ग दर्शन करते रहें। हिन्दी के प्रतिष्ठित कवि नीरज ने इस सम्बन्ध में अपने उदगार कुछ इस प्रकार प्रकट किये हैं।

"क्या करेगा प्यार वह भगवान को
क्या करेगा प्यार वह इन्सान को
जन्म ले के गोद में इन्सान की
प्यार कर न पाया जो इन्सान को"



एक विश्व प्रख्यात वैज्ञानिक

डा० मोती लाल धर



भारत के प्रथम, प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू न केवल एक महान, द्रष्टा थे अपितु वह एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण रखने वाले व्यक्ति भी थे जो मनुष्य के जीवन में विज्ञान के महत्व को भलि भाँति समझते थे। उनकी स्पष्ट धारणा थी कि आज के युग में विश्व का कोई भी देश बिना विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में प्रगति किये हुए अपने स्वतंत्र अस्तित्व को अधिक समय तक सुरक्षित नहीं रख सकता है। अतः देश को तीव्र गति से प्रगति के पथ पर ले जाने के लिये और उसे हर क्षेत्र में आत्म निर्भर बनाने के लिये यह परम आवश्यक है कि देश में एक वैज्ञानिक सोंच उत्पन्न की जाये और एक वृहद आधुनिक प्रौद्योगिकी से परिपूर्ण एक ढांचा तैयार किया जाय जो राष्ट्र को एक नयी दिशा दे सकें और उसको विश्व के अन्य विकसित देशों के समकक्ष लाने में समर्थ हो। इन्हीं सब बातों पर गम्भीरता से विचार करने के पश्चात पंडित नेहरू ने देश में विज्ञान तथा औद्योगिक अनुसन्ध ाान परिषद नाम से एक संस्था का गठन किया और उसके तत्वावधान में देश के अनेक महानगरों में राष्ट्रीय स्तर की अनेक प्रयोगशालायें स्थापित कीं। जिनके माध्यम से वैज्ञानिक ज्ञान और कुशल वैज्ञानिकों की देश के हित में विभिन्न क्षेत्रों में भरपायी की जा सकें और हमें विदेशों की सहायता पर अधिक निर्भर न होना पड़े। पंडित नेहरू ने इन प्रयोगशालाओं को देश के आधुनिक मन्दिर बताया और जिन प्रयोगशालाओं ने कालान्तर में अनेक

ऐसे अनोखे वैज्ञानिक उत्पन्न किये जिन्होने अपने उच्च कोटि के शोध पत्रों द्वारा सम्पूर्ण विश्व में ख्याति अर्जित की और भारत का गौरव बढ़ाया। इसी प्रकार के एक अनूठे वैज्ञानिक डा0 मोती लाल धर थे। जिनके उच्च श्रेणी के शोध पत्रों को आज भी अनेक शोधार्थी अपने शोध ग्रन्थों में उदघृत करते हैं। आपने विशेष रूप से जड़ी–बूटियों से श्रवण विधि द्वारा निर्मित औषधियों के निर्माण करने की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण शोध कार्य किया जिसका उपयोग बाद में अनेक रोगियों के उपचार के लिये औषधियों के निर्माण में सम्भव हो सका।

डा0 मोती लाल धर का जन्म 22 अक्टूबर सन् 1914 को कश्मीर घाटी के श्रीनगर जनपद के गुन्दनधर मुहल्ले के एक मध्यमवर्गीय कश्मीरी पंडित परिवार में हुआ था। आपके पिता पंडित दीना नाथ धर रियासत में माहराजा प्रताप सिंह (1885–1925) के शासन काल में पोस्ट मास्टर के पद पर नियुक्त थे। पंडित दीना नाथ धर का विवाह श्रीनगर के निवासी पंडित शिव नाथ नेहरू की सुपुत्री पोशकुजी (पुष्पलता) के साथ सम्पन्न हुआ था। इस दम्पति के तीन पुत्र क्रमशः प्रान नाथ, गिरधारी लाल और मोती लाल तथा तीन पुत्रियां सब्बतें, परमेश्वरी तथा सबीयं थीं जिनमें सन्बतें का विवाह पंडित मान नाथ खजान्ची के साथ, परमेश्वरी का विवाह पंडित दीना नाथ पारिमू के साथ, तथा सबई का विवाह वहीं के एक धर परिवार में सम्पन्न हुआ था। जो बाद में अपने पति के साथ अमरीका चली गयीं और उन्होंने भारत आने की अपेक्षा अमरीका की नागरिकता लेकर वहीं बस जाना अधिक उचित समझा।

डा0 मोती लाल धर का बचपन परिवार में आर्थिक तंगी के कारण अनन्तनाग जिले के चतुरगुर गाँव में व्यतीत हुआ जहां उनके चाचा पंडित रघुनाथ धर रहते थे और वहीं एक प्राईमरी स्कूल में अध्यापक थे। डा0 मोती लाल धर ने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा इसी प्राईमरी स्कूल में अपने चाचा के संरक्षण में प्राप्त की। आप अपनी चतुरगुर गाँव में शिक्षा समाप्त करने के पश्चात उच्च शिक्षा प्राप्त करने के उद्देश्य से पुनः श्रीनगर अपने पैतृक आवास में लौट आये और आपने वहां के प्रतिष्ठित श्री प्रताप कालेज में

प्रवेश ले लिया। आपने इसी कालेज से अपनी मैट्रिकुलेशन की परीक्षा सन् 1931 में तथा एफ़0 एस–सी0 की परीक्षा सन् 1933 में बहुत अच्छे अंक प्राप्त कर प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण कीं जिसके लिये आपको प्रदेश सरकार से छात्रवृत्ति भी प्राप्त हुई।

चूंकि उस समय तक जम्मू–कश्मीर राज्य में विश्वविद्यालय स्तर की शिक्षा प्रदान करने की कोई व्यवस्था नहीं थी और अधिकतर वहां के छात्रों को इसके लिये रियासत से बाहर जाकर अन्य प्रदेशों के विश्वविद्यालयों में प्रवेश लेना पड़ता था इस नाते डॉ0 मोती लाल धर भी कश्मीर घाटी से निकल कर लाहौर चले गये और आपने वहां के प्रतिष्ठित फ़ोरमैन क्रिश्चियन कालेज में प्रवेश ले लिया जो पंजाब विश्वविद्यालय से संबद्ध था। आपने इस विश्वविद्यालय से अपनी बी0 एस–सी0 (आनर्स) की परीक्षा सन् 1935 में उत्तीर्ण कीं और सबसे अधिक अंक प्राप्त कर सम्पूर्ण विश्वविद्यालय में प्रथम स्थान पाया। आपने फिर पंजाब विश्वविद्यालय से कार्बनिक रसायन विज्ञान विषय में एम0 एस–सी0 की परीक्षा पुनः पूरे विश्वविद्यालय में प्रथम स्थान पाकर उत्तीर्ण कीं।

डा0 मोती लाल धर पंजाब विश्वविद्यालय से कार्बनिक रसायन विज्ञान में एम0 एस–सी0 की उपाधि प्राप्त करने के पश्चात सन् 1938 में कश्मीर से इंग्लैंड चले गये और वहां आपने शोध कार्य करने के लिये लन्दन विश्वविद्यालय में प्रवेश ले लिया। आपने वहां बहुत कठिन परिश्रम करके केवल 15 माह में लन्दन विश्वविद्यालय से रसायन विज्ञान विषय में पी0 एच डी की उपाधि प्राप्त कीं जो स्वंय एक अदभुत उपलब्धि थी। और वह भी उस आसाधारण और असमान्य वातावरण में जब सन् 1939 में द्वितीय विश्व युद्ध भड़क चुका था और नाज़ी जर्मनी की वायु सेना के लड़ाकू विमान लन्दन पर बम बारी यदा कदा करते थे जिससे वहां भय और आतंक का वातावरण व्याप्त रहता था तथा लन्दन वासी अपने प्राणों की रक्षा के लिये वहां के भूमिगत रेलवे स्टेशनों में शरण लेते थे। इस प्रकार के अशान्त वातावरण में एकाग्रचित होकर शोध कार्य करना कितना कठिन रहा होगा। इसका अनुमान बहुत ही सहजतापूर्वक लगाया जा

सकता है। डा0 मोती लाल धर कश्मीर घाटी के प्रथम कश्मीरी पंडित थे जिन्होंने लन्दन विश्वविद्यालय से रसायन विज्ञान विषय में पी0 एच–डी0 की उपाधि प्राप्त की थी। आप सन् 1940 में लन्दन से भारत वापस लौट आये।

आपको भारत आने के पश्चात जम्मू में कर्नल आर0 एन0 चोपड़ा द्वारा स्थापित औषधि अनुसन्धान प्रयोगशाला में चीफ केमिस्ट के पद पर नियुक्त किया गया तथा साथ ही साथ आपको उस प्रयोगशाला के प्रबंधक का कार्यभार भी सौंपा गया। यह प्रयोगशाला मुख्यतः उस क्षेत्र में पायी जाने वाली जड़ी बूटियों पर शोध कार्य करके उनसे औषधियों का निर्माण करने के उद्देश्य से स्थापित की गयी थी। डा0 मोती लाल धर कुछ उन गिने चुने प्रथम वैज्ञानिकों के दल के एक सदस्य थे जिनकी इस प्रयोगशाला के स्थापित होने पर नियुक्ति हुई थी।

आपको जम्मू–कश्मीर सरकार ने फिर एक वर्ष के लिये प्रतिनियुक्ति पर कलकत्ते (कोलकाता) भेज दिया जहां आपको स्कूल आफ ट्रोपिकल मेडिसिन में औषधियों के निर्माण के सम्बन्ध में प्रशिक्षण लेना था। ताकि आप इस क्षेत्र में अपनायी जा रही विभिन्न आधुनिक विधियों से भलि भांति परिचित हो सकें और औषधि निर्माण की आधुनिक तकनीक में दक्षता प्राप्त कर सकें। आप कलकत्ता में अपना यह एक वर्ष का प्रशिक्षण कार्यक्रम समाप्त हो जाने के पश्चात पुनः जम्मू वापस चले गये और वहां की औषधि अनुसन्धान प्रयोगशाला में बहुत ही निष्ठापूर्वक कार्य करने लगे। आपने इस प्रयोगशाला में एक चीफ केमिस्ट के रूप में लगभग 10 वर्ष सन् 1950 तक कार्य किया।

भारत के सन् 1947 में स्वतंत्र होने के पश्चात राष्ट्र के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू ने देश में एक व्यापक वैज्ञानिक वातावरण उत्पन्न करने के उद्देश्य से एक समिति का गठन किया जो इस सम्बन्ध में एक व्यापक कार्य योजना को मूर्ति रूप देने में सक्षम हो। जिससे देश में विज्ञान के क्षेत्र में तीव्र गति के साथ प्रगति सम्भव हो सकें। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये सन् 1947 में भारत सरकार ने एक

कार्यकारी दल का गठन किया और उसका सचिव डा0 दर्शन लाल श्रीवास्तव को मनोनीत किया गया। उनको यह कार्य भार सौंपा गया कि वह केन्द्रीय औषधि अनुसन्धान संस्थान को स्थापित करने के लिये किसी उचित स्थान का चयन करें। डा0 दर्शन लाल श्रीवास्तव ने काफी दौड़ भाग और विभिन्न स्थलों का मौका मुआयना करने के पश्चात लखनऊ की ऐतिहासिक "छतर मंजिल" का इस प्रस्तावित संस्थान के लिये चयन किया।

लखनऊ के इस विशाल शाही महल का अपना एक अलग इतिहास है। इस भव्य भवन को गोमती नदी के तट पर सर्वप्रथम एक फ्रान्सीसी सैन्य अधिकारी तथा वास्तुविद मेजर जनरल क्लाड मार्टिन ने अपने आवास के लिये पाश्चात्य शैली में निर्माण कराया था जो अवध में नवाब आसफउद्दौला (1775–1797) के शासन काल में उनकी फौज को प्रशिक्षण देने के लिये पांडुचेरी से लखनऊ आया था। यह भवन इतना आकर्षक और सुन्दर था कि इसको नवाब सआदत अली खां (1798 – 1814) ने मेजर जनरल क्लाड मार्टिन से अपना शाही महल बनाने के लिये क्रय कर लिया और इसमें उपयुक्त परिवर्तन कराकर इसका नाम अपनी हिन्दू राजपूत रानी छतर कुंवर के नाम पर "छतर मंजिल" रख दिया। सन् 1857 के गदर के पश्चात अंग्रेजों ने इस भव्य शाही महल को अपने कब्जें में ले लिया और इसमें योरोपियन अफसरों के मनोरंजन के लिये यूनाईटेंड सर्विसेस क्लब की स्थापना कर दीं जहां उस समय भारतीयो एंव कुत्तों का प्रवेश वर्जित हुआ करता था।

इस ऐतिहासिक छतर मंजिल के भवन में 3 मार्च सन् 1949 को केन्द्रीय औषधि अनुसन्धान संस्थान ने कार्य करना प्रारम्भ किया जिसका संस्थापक निदेशक डा0 दर्शन लाल श्रीवास्तव को नियुक्त किया गया। डा0 मोती लाल धर ने सन् 1950 में जम्मू से लखनऊ आकर इस संस्थान के मेडिसिनल केमिस्ट्री विभाग के अध्यक्ष का पदभार ग्रहण किया और अपने कुशल नेतृत्व में शोध कार्य के लिये आधुनिक तकनीकों से परिपूर्ण एक नयी प्रयोगशाला स्थापित की। पंडित जवाहर लाल नेहरू ने 17

फरवरी सन् 1951 को इस संस्थान का विधिवत उदघाटन किया। डा0 मोती लाल धर ने अपने अथक प्रयासों द्वारा औषधियों के निर्माण के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान देकर इस संस्थान को विश्व में मान्यता दिलायी और औषधि निर्माण करने की तकनीक का चौमुखी विकास किया।

आपने अपने परिजनों के निवास के लिये न्यू हैदराबाद मुहल्ले में एक आवास का निर्माण भी कराया। जिसे बाद में लखनऊ से दिल्ली पलायन करने के पश्चात आपने एक सज्जन पुरूष को विक्रय कर दिया जो अब आपका गुणगान करतें है और आपकी योग्यता की सराहना करतें हैं।

डा0 मोती लाल धर को प्रोन्नति करके सन् 1963 में केन्द्रीय औषधि अनुसन्धान संस्थान का निदेशक बना दिया गया। आपने इस पद पर लगभग 11 वर्ष कार्य किया। आप 60 वर्ष की आयु पूर्ण हो जाने पर इस पद से सन् 1974 में सेवा निवृत्त हुए। आपको उसके पश्चात सन् 1975 में कानपुर के प्रतिष्ठित भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान के प्रबंधक मण्डल का एक सम्मानित सदस्य मनोनीत कर दिया गया आप इस गरिमामय पद पर सन् 1977 तक बहुत ही निष्ठापूर्वक कार्य करते रहे और आपने इस अन्तराल में इस संस्थान के विकास के लिये अनेक महत्वपूर्ण कदम उठाये। ताकि इस राष्ट्रीय स्तर के तकनीकी संस्थान की प्रतिष्ठा विश्व स्तर के इस प्रकार के अन्य संस्थानों की तुलना में किसी भी प्रकार से कम न हो। आपने इस संस्थान के पाठ्यक्रम में भी व्यापक परिवर्तन किया ताकि वह देश की विज्ञान के क्षेत्र में अपेक्षाओं के अनुरूप विद्यार्थियों को प्रशिक्षण देकर उनकों एक योग्य और कुशल अभियन्ता बना सके जो देश के प्रति हर प्रकार से अपनी समुचित भागीदारी निभाने में पूर्णतयः दक्ष हों।

डा0 मोती लाल धर को तद्पश्चात 2 फरवरी सन् 1977 को बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय का कुलपति बना दिया गया। आपने इस पद पर 15 दिसम्बर 1977 तक कार्य किया उसके पश्चात विश्वविद्यालय की राजनीति और छात्रों के विभिन्न सगंठनों की आपसी गुट बन्दी और उठा–पटक से

व्यथित होकर—आपने अपने पद से त्याग पत्र दे दिया क्योंकि मानसिक रूप से एक प्रतिभावान वैज्ञानिक होने के नाते आप इस प्रकार की अखाड़े बाजी में अभ्यस्त नहीं थे।

आप फिर वाराणसी से पलायन करके दिल्ली चले गये और वहां ग्रेटर कैलाश फेस—1 के पम्पोश एनक्लेव में बी—1 फ्लैट को क्रय करके उसमें निवास करने लगे।

डा0 मोती लाल धर का विवाह सन् 1932 के आसपास श्रीनगर के सुत्थू बरबर शाह के निवासी पंडित सना कौल की सुपुत्री मोहिनी के साथ सम्पन्न हुआ था जो वहां के एक हाई स्कूल के हेड मास्टर थे। आपके दो पुत्र डा0 जवाहर लाल धर और डा0 नवीन धर हैं। डा0 मोती लाल धर के दोंनो पुत्रों की शिक्षा लखनऊ क्रिश्चियन कालेज में सम्पन्न हुई। आपके ज्येष्ठ पुत्र डॉ0 जवाहर लाल धर अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात एक कुशल वैज्ञानिक बने। डा0 जवाहर लाल धर ने दो विवाह किये हैं। आपकी पहली पत्नी जम्मू—कश्मीर रियासत के भूतपूर्व प्रधानमंत्री पंडित राम चन्द्र काक की सुपुत्री लीला हैं। जिन्होंने आपसे अपना वैवाहिक सम्बन्ध विच्छेद करके अपने को पूर्ण रूप से स्वतंत्र कर लिया क्योंकि कदाचित वह आपके उनके प्रति व्यवहार से संतुष्ट नहीं थीं। सम्भवतः आपके प्रयोगशालाओं में अधिक समय व्यतीत करने को वह अपनी उपेक्षा समझती थीं। और उसके कारण अधिकतर तनाव ग्रस्त रहती थीं। आपने फिर विवश होकर अपने वंश को आगे चलाने के उद्देश्य से अपना दूसरा विवाह हिमाचल प्रदेश की एक सुयोग्य और सुन्दर युवती रेनु साहिनी से किया जो एक आई0 ए0 एस0 अधिकारी हैं और आजकल दिल्ली में हिमाचल प्रदेश सरकार की रेजीडेन्ट कमिश्नर हैं पर आपको अपनी दूसरी पत्नी से भी बहुत अधिक समय तक वैवाहिक सुख किन्हीं कारणों से नही प्राप्त हो सका और पुनः आप प्रभु की इच्छा से एकान्तमय जीवन व्यतीत कर रहें हैं और पठन पाठन को अधिक महत्व दे रहें है। आपकी दोनो भूतपूर्व पत्नियां दिल्ली में अब स्वतंत्र रूप से अलग रहती हैं और उनका आपसे कोई लेना देना नहीं है।

डॉ0 मोती लाल धर के दूसरे पुत्र डॉ0 नवीन धर लखनऊ के प्रतिष्ठित किंग जार्ज मेडिकल कालेज से एम0बी0बी0एस0 की उपाधि ग्रहण करने के पश्चात एक कुशल चिकित्सक बने आप एक हृदय रोग विशेषज्ञ हैं। आपका विवाह सन् 1972 में कश्मीर के निवासी पंडित सालिंग राम कौल की सुपुत्री रेखा के साथ सम्पन्न हुआ है। आप आजकल अपने परिवार सहित अमरीका के केलिफ़ोर्निया नगर में रहते हैं।

डॉ0 मोती लाल धर अपने सम्पूर्ण शैक्षिक जीवन में एक मेधावी छात्र रहे जिनकी स्मरण शक्ति सदैव एक कम्प्यूटर के समान तीक्ष्ण रही। आपने अपने लन्दन में प्रवास के दौरान अपने शोध ग्रन्थ के लिये कुछ इतने उच्च कोटि के शोधपत्र प्रकाशित किये जिनका अन्य शोधार्थी अपने शोध ग्रन्थों में एक मूल स्रोत के रूप में उपयोग करते हैं।

डॉ0 मोती लाल धर दिल्ली की विज्ञान अकादमी के सन् 1974 से 1975 तक सदस्य रहे। आप इलाहाबाद की इन्डियन ऐकेडमी ऑफ साइन्सेस तथा नेशनल एकेडमी ऑफ साईन्स के एक सम्मानित सदस्य सन् 1971 से सन् 1972 के मध्य रहे। आपने देश की अन्य महत्वपूर्ण विज्ञान के क्षेत्र से सम्बन्धित समितियों तथा संगठनों में सक्रिय रूप से भाग लिया तथा उनका मार्ग दर्शन किया जिनको समय–समय पर भारत सरकार ने देश को प्रगति के पथ पर अग्रसर करने के लिये गठित किया ताकि देश की एक समुचित वैज्ञानिक नीति का निर्धारण सम्भव हो सके।

डॉ0 मोती लाल धर ने अपने लम्बे सेवा काल में अनेक सम्मान और पुरूस्कार प्राप्त किये। आप लन्दन के रायल इन्सटीच्यूट ऑफ कैमिस्ट्री के एक सम्मानित सदस्य थे। आप लखनऊ विश्वविद्यालय की कार्यकारिणी परिषद के सदस्य रहे, आप कानपुर के आई0आई0टी0 की सिनेट के एक सदस्य रहे, आप इलाहाबाद के मोती लाल नेहरू इन्जीनियरिंग कालेज के प्रबन्धक मण्डल के सदस्य रहे, आप हिन्दुस्तान ऐन्टीबेआटिक लि0 के निदेशक मण्डल के एक सदस्य रहे तथा इन्डियन ड्रग्ज़ एण्ड फ़ारमासिटिकल लिमिटेड के एक सम्मानित सदस्य रहे।

डॉ0 मोती लाल धर सन् 1978 से सन् 1984 तक दिल्ली के अखिल

भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान की विद्वत परिषद के अध्यक्ष रहे। आपकी अध्यक्षता में केन्द्र सरकार ने ''धर समिति'' गठित की जिसको चंदीगढ़ के पोस्ट ग्रेजुएट इन्सटीच्यूट ऑफ मेडिकल साईन्सेस तथा दिल्ली के अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान में कार्यरत चिकित्सकों की सेवाओं की नियमावली तथा उनमें व्याप्त विषमताओं का व्यापक अध्ययन करने के पश्चात अपनी रिपोर्ट सरकार को प्रस्तुत करनी थी ताकि चिकित्सकों की सेवा शर्तों में व्यापक सुधार किया जा सके। आपने बहुत परिश्रम के साथ इस कठिन कार्य को सम्पादित किया और केन्द्र सरकार को इन दोनों संस्थानों में कार्यरत चिकित्सकों की सेवा नियमावली तथा संस्थानों की कार्यप्रणाली में व्यापक सुधार के लिये अपने महत्वपूर्ण सुझाव केन्द्र सरकार को प्रस्तुत किये और उनके क्रियान्वयन की आवश्यकता पर बल दिया ताकि उनकी छवि को विश्व स्तर के संस्थानों के अनुरूप बनाया जा सके।

डॉ0 मोती लाल धर एक बहुमुखी प्रतिभा के धनी व्यक्ति थे जो एक अदा के साथ साथ विलक्षण बुद्धि के स्वामी थे। आपने सदैव अपने सहयोगियों, आधीन अधिकारियों तथा अपने से वरिष्ठ अधिकारियों का आदर और सम्मान पाया क्योंकि आपका स्वभाव सदा छल कपट से मुक्त रहा और आपने अपने जीवन में सत्यं, शिवं, सुन्दरमं के मूल मंत्र को आदर्श माना, आप एक महान द्रष्टा और विचारक थे इस नाते अपना हर कार्य बड़ी सूझ–बूझ के साथ करते थे जिसमें सूक्ष्म से सूक्ष्म वस्तु स्थिति का भी पूरा ध्यान रखा जाता था। यदि कोई आपको संतुष्ट कर देता था कि अमुक कार्य सही है तो फिर उसको मूर्ति रूप देने में आप कोई कोर कसर नहीं छोड़ते थे और उसको पूर्ण कराने में किसी भी स्थिति का डट कर सामना करने के लिये सदैव तत्पर रहते थे। आप मानव गरिमा को सबसे अधिक मूल्यवान वस्तु समझते थे। आप एक निराश्रित व्यक्ति के उचित कार्य को उसी तत्परता के साथ उसको महत्वपूर्ण समझते हुए करते थे जितनी तन्मयता के साथ आप एक नोबेल पुरस्कार विजेता से वार्तालाप करते थे। आपकी योग्यता और ज्ञान से रसायन शास्त्र के दोबार नोबेल

पुरस्कार विजेता लीनस पोलिंग इतने अधिक प्रभावित हुऐ कि उन्होंने सन् 1956 में आपको अमरीका आकर वहां केलिफोर्निया में स्थित इन्सटीच्यूट ऑफ टेक्नोलाजी में व्याख्यान माला प्रस्तुत करने का निमंत्रण दिया।

डॉ0 मोती लाल धर ने अपना शोधकार्य अधिकतर कार्बनिक रसायन विज्ञान, भौतिकी कार्बनिक रसायन विज्ञान, प्राकृतिक संम्पदा की केमिस्ट्री या फिर किमियोथेरपी पर केन्द्रित रखा जिसके लिये आप सम्पूर्ण विश्व में प्रख्यात हुऐ। आपने लगभग 150 उच्च कोटि के शोध पत्र विभिन्न प्रतिष्ठित राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय विज्ञान की पत्रिकाओं में प्रकाशित कराये। आपने विश्व के लगभग सभी प्रमुख राष्ट्रों का व्यापक भ्रमण किया तथा वहां के प्रतिष्ठित विज्ञान के संस्थानों में अपने व्याख्यान प्रस्तुत किये तथा विश्व स्तर की अनेक विज्ञान से सम्बंधित गोष्ठियों में भाग लिया। आपने अनेक देशों में भारत के वैज्ञानिकों के प्रतिनिधि मण्डल का नेतृत्व किया।

डॉ0 मोती लाल धर को विभिन्न विषयों की पुस्तकें पढ़ने का बेहद शौक़ था। आप एक प्रकार से ज्ञान का एक चलता फिरता भण्डार थे जिनके पास हर विषय की असीमित सूचना रहती थी। जिन प्रमुख विषयों में आपको अधिक रूचि थी वह थे साहित्य, दर्शनशास्त्र, चित्रकला, आध्यात्म तथा धर्म, आपको भारतीय शास्त्रीय संगीत से भी काफ़ी लगाव था और कभी कभी अपने रिक्त पलों में आप उसका भरपूर आनन्द लेते थे और आत्म विभोर हो जाते थे। अपने जीवन के उत्तरार्ध में आपका झुकाव आध्यात्मिक ज्ञान के प्रति कुछ अधिक हो गया था। आपको कश्मीर की सूफ़ी परम्परा से बहुत अधिक प्रेम था और आप इस कारण सन् 1980 तक हर वर्ष नियमित रूप से कश्मीर जाते रहे पर वहां बाद में आतंकवाद के कारण आपने जाना समाप्त कर दिया।

डॉ0 मोती लाल धर अपने घनिष्ठ मित्रों तथा परिजनों में ''तथिया जी'' के नाम से जाने जाते थे। आप उनके लिये एक पूज्यनीय व्यक्ति थे जिनका हृदय बहुत विशाल था। यद्यपि आप एक तुनक मिजाज़ व्यक्ति थे और कभी–कभी एक छोटी सी बात पर भी बहुत अधिक क्रोध करते थे

पर आपके इस कठोर व्यवहार का कोई बुरा नहीं मानता था क्योंकि आप सबसे बहुत अधिक प्रेम करते थे और किसी भी बात को अपने हृदय में नहीं रखते थे। आप वास्तव में एक युग पुरूष थे जिसने अपने लम्बे संघर्षमय जीवन में जीने की कला में निपुणता प्राप्त की थी कि किस प्रकार विकट तथा विषम परिस्थितियों में भी अपने जीवन को सुखमय बनाया जा सकता है। आप एक सच्चे साधक और कर्मयोगी थे जिसने वास्तव में जीवन के मूल्यों को अपने भीतर आत्मसात किया था।

डॉ0 मोती लाल धर को उनके औषधि निर्माण के क्षेत्र में किये गये उच्च श्रेणी के अनूठे शोध कार्य के लिये सन 1971 में भारत के तत्कालीन राष्ट्रपति माननीय वी0वी0 गिरी ने राष्ट्रपति भवन में उनको पद्म श्री की उपाधि देकर सम्मानित किया आपका काफ़ी लम्बे समय तक रोग ग्रस्त रहने के पश्चात 20 जनवरी सन् 2002 को दिल्ली में अपने आवास बी–1, पम्पोश एनक्लेव में लगभग 88 वर्ष की आयु में निधन हो गया। विज्ञान जगत में आपके निधन से हुई क्षति को पूर्ण कर पाना अब सम्भव नहीं प्रतीत होता है। आपके प्रति 31 जनवरी सन् 2002 को पम्पोश एनक्लेव में स्थित शिव मन्दिर के प्रांगण में संवेदनायें प्रकट करने के लिये एक प्रार्थना सभा का आयोजन किया गया जिसमें अनेक गणमान्य व्यक्तियों ने आपके व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डाला और अपने श्रद्धासुमन अर्पित किये। ऐसी महान आत्माऐं इस संसार में यदा कदा ही जन्म लेती हैं जो अपने ज्ञान के प्रकाश से सबको सम्मोहित कर उनका पथपर्दशक बन कर उनको प्रगति के मार्ग पर चलने के लिये प्रेरित करती हैं। ऐसे प्रतिभाशाली तथा सर्वगुण सम्पन्न व्यक्तियों के कार्य कलाप सदैव स्वर्ण अक्षरों में अंकित किये जाते हैं। हिन्दी के प्रखर कवि जय नारायण ''अरूण'' के शब्द इस सन्दर्भ में काफ़ी प्रासंगिक प्रतीत होते है।

"चलते कदमों में रवानी डालो
रूकने वालों में जवानी डालो
आग नफ़रत की बुझाने के लिये
मेरे दोस्तों प्यार का पानी डालो।"

एक महान कश्मीरी संत

पंडित शिव प्रसाद चौधरी – खटखटे बाबा



भारतीय दर्शन का गूढ़, अध्ययन करने से कुछ ऐसा प्रतीत होता है कि कश्मीर का शैव मत भारत के अन्य अंचलो के शैव सम्प्रदायों की तुलना में अधिक तर्कसंगत तथा मानवीय है। चूंकि इस मत का विकास मुख्य रूप से कश्मीर में विद्वान कश्मीरी पंडितों द्वारा किया गया, अतः स्वाभाविक रूप से इसको कश्मीरी शैव–सम्प्रदाय की संज्ञा दी गयी। इस कश्मीरी शैव दर्शन को कुछ अन्य उपनामों से भी जाना जाता है जैसे प्रत्याभि दर्शन, त्रिकदर्शन, या फिर माहेश्वर दर्शन। इस दर्शन के मुख्य प्रवर्तक वसुगुप्त थे। जिनका समय आंकलन के अनुसार नौवीं शताब्दी (825 ई0) को माना जाता है। इनकी प्रमुख कृतियां शिव सूत्र तथा स्पन्दकाटिका हैं। जिनके माध्यम से इस महान द्रष्टा ने अपनी विचारधारा का प्रसार और प्रचार किया।

यहां पर सुधी पाठकों के लिये यह उल्लेख करना परम आवश्यक है कि इस कश्मीर शैव मत के दो विभिन्न सम्प्रदाय स्पन्द और प्रतिभिज्ञा विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। जहां एक ओर स्पन्द शास्त्र में मोक्ष प्राप्त करने के लिये हीन उपायों का विस्तार से वर्णन हैं जिनके लिये योगाभ्यास करना आवश्यक हैं वही दूसरी ओर प्रतिभिज्ञा शास्त्र में अपनी अन्तर

आत्मा को पहचानने पर अधिक बल दिया गया है। शैव मत के इस ज्ञान मार्ग में योगाभ्यास की आवश्यकता को अधिक महत्व नहीं दिया गया है।

मध्यकालीन युग में कश्मीर में शैव धर्म का जो स्वरूप प्रचलित था। वह बहुत ही उदान्त था क्योंकि उसमें शैव तंत्र–मंत्र एंव सिद्धियों को अधिक महत्व न देकर उसके स्थान पर जप, प्राणायाम, ध्यान तथा समाधि पर साधक अधिक बल देते थे। इस प्रकार मनीषियों ने कश्मीरी शैव दर्शन के कुल 36 तत्व परिभाषित किये हैं। इनमें शिव तत्व को सबसे अधिक महत्वपूर्ण एंव उच्चतम कोटि का माना गया है। इसके अनुसार प्रत्येक प्राणी में वास करने वाला, आत्म तत्व ही वास्तव में शिव तत्व है। यही चैतन्य रूप है। और इसी को कश्मीरी शैव दर्शन में परमेश्वर, शिव, अथवा परम शिव कहा गया है।

इस दर्शन में "चिन्मय सामरस्य की अवस्था ऐसी होती है जहां पहुंच कर एक जिज्ञासु साधक अपने अस्तित्व को परम शिव में लीन कर एक अदभुत परमानन्द की स्थिति को प्राप्त कर लेता है। परन्तु इस अवस्था में भी उसका कोई भी तत्व अपने को नष्ट नहीं करता यही इस दर्शन की विशेषता है। अर्थात कश्मीरी शैव दर्शन का एक सच्चा साधक परम तत्व का आभास करता हुआ सूक्ष्म जगत की ओर अग्रसर होता है और अन्तोगत्वा परमशिव में विलीन होकर एकाकार हो जाता है।

कश्मीरी पंडितों में ऐसे संतो और साधकों की एक लम्बी परम्परा रही है जिन्होंने जप, तप, और वृत के द्वारा अपने को इस परम शिव तत्व में विलीन करके असाधारण आध्यात्मिक शक्ति को प्राप्त किया और अपने आश्चर्यचकित कर देने वाले कार्य कलापों द्वारा व्यापक समाज में अपने लिये एक प्रतिष्ठित स्थान बना कर सबके लिये पूज्यनीय हो गये। ऐसे ही गरिमावान एक अनूठे संत पंडित शिव प्रसाद चौधरी थे जो बाद में सम्पूर्ण इटावा नगर में अपने कुछ अद्‌भुत कारनामों के कारण खटखटे बाबा के नाम से प्रख्यात हो गये।

आपके पूर्वज मूल रूप से कश्मीर घाटी के श्रीनगर जनपद के रैनावारी मुहल्ले के निवासी थे जो पहले अपना कुलनाम राज़दान लिखते

थे। पर बाद में चूंकि आपके पूर्वज वहां चौधरी बाग के निकट रहने लगे और रूपयों के लेन देन का व्यवसाय करने लगे इस नाते लोग आपके पूर्वजों को चौधरी कहने लगे और वह अपना कुलनाम राजदान के स्थान पर चौधरी लिखने लगे। इस चौधरी परिवार के एक सदस्य पंडित बद्री नाथ चौधरी मुगल सम्राट औरंगज़ेब (1658–1707) के शासन काल में कश्मीर के सूबेदार इफ़्तिख़ार खां की बर्बरता से व्यथित होकर मुगल मार्ग द्वारा लाहौर तथा दिल्ली होते हुए पलायन कर बरेली आ गये जो उस समय रोहिलों की राजधानी थी और वहीं बस गये। आप की अगली तीन पीढ़ियां बरेली में ही रह कर मौज मस्ती करती रहीं। आपके पुत्र का नाम पंडित शंकर नाथ चौधरी तथा पौत्र का नाम पंडित ऊंचानाथ चौधरी था जिनके दो पुत्र शिव प्रसाद और दुर्गा प्रसाद थे।

इस चौधरी परिवार के वंशज फिर बरेली से दिल्ली चले गये और वहां बाज़ार सीता राम की गली प्रेम नारायण में निवास करने लगे। कालान्तर में पंडित दुर्गा प्रसाद चौधरी के पुत्र पंडित रामेश्वर नाथ चौधरी जिनका जन्म सन् 1875 में दिल्ली में हुआ था दिल्ली से राजपूताना की एक छोटी सी रियासत खेतरी चले गये और वहां कोतवाल बना दिये गये। आपका विवाह पंडित कामेश्वर नाथ कौल की सुपुत्री सुश्री प्राणकिशोरी के साथ सम्पन्न हुआ था, इस दम्पति के दो पुत्र चन्द्र मोहन तथा श्याम मोहन और पांच पुत्रियां चन्द्र मोहिनी, कृष्ण कुमारी, बिशन कुमारी, आनन्द कुमारी, तथा राज कुमारी थीं।

इसी चौधरी परिवार के एक वंशज डॉ0 जीवन लाल चौधरी जो एक होम्योपैथिक डाक्टर थे मथुरा में बस गये थे। आपका विवाह लखनऊ के तोप दरवाजा मुहल्ले के निवासी पंडित शिव नारायण उपाध्याय की पुत्री, विमल कुमारी के साथ सम्पन्न हुआ था। डॉ0 जीवन लाल चौधरी के भाई पंडित राजा लाल चौधरी की आगरा के राजा मण्डी मुहल्ले में एक ड्राई क्लीनर्स की दुकान थी जो जल कर बाद में भस्म हो गयी। आपका विवाह भी लखनऊ में चन्द्र मोहिनी के साथ सम्पन्न हुआ था जो कश्मीरी मुहल्ले के निवासी पंडित राज नारायण सराफ की पुत्री थीं।

विभिन्न सूत्रों से प्राप्त की गयी सूचना के आधार पर पंडित शिव प्रसाद चौधरी का जन्म सन् 1859 के आस पास दिल्ली की बाज़ार सीता राम में हुआ था। आपकी उर्दू तथा फारसी भाषा की शिक्षा समाप्त होने के पश्चात आपकी एक शरिस्तेदार के रूप में नियुक्ति एक अंग्रेज डिप्टी कमिश्नर के कार्यालय में हो गयी थी। आपका विवाह सन् 1875 के आसपास लखनऊ नगर के कश्मीरी मुहल्ले के निवासी पंडित भोला नाथ कौल 'नाला'. की सुपुत्री सुश्री शारिकाशुरी के साथ सम्पन्न हुआ था जो देखने में बहुत अधिक सुन्दर तथा आकर्षक थीं। आप अपनी पत्नी से इस नाते बहुत अधिक प्रेम करते थे और उनकी हर इच्छा को पूर्ण करने का भरसक प्रयास करते थे। आपकी पत्नी की केवल 18 वर्ष की आयु में प्रसव के कारण दुःखद मृत्यु हो गयी क्योंकि तब तक उचित उपचार के सन साधन विकसित नहीं हो पाये थे और बहुत बड़ी संख्यां में स्त्रियों की मृत्यु प्रसव के कारण हो जाया करती थी।

पंडित शिव प्रसाद चौधरी को अपनी पत्नी की इस अकस्मात मृत्यु से बहुत गहरा आघात लगा और उनको इस मायावी संसार से एकदम विरक्ति हो गयी। आपने अपनी सेवा से त्यागपत्र देकर वैराग धारण कर लिया और अपने कश्मीरी मुहल्ले के आवास का परित्याग करके जहां आप अपने विवाह के पश्चात रहने लगे थे बिना किसी निकट सम्बन्धी को सूचित किये हुए किसी अज्ञात स्थान को चले गये।

आपने अपना घर परित्याग कर किस साधु–सन्त से आध्यात्मिक ज्ञान की शिक्षा–दीक्षा ली, आप इस अन्तराल में कहां कहां रहे, आपने किस प्रकार जप, तप तथा वृत द्वारा कठोर साधना करके परमशिव तत्व को प्राप्त किया इसके सम्बन्ध में कोई उचित जानकारी इस समय किसी भी व्यक्ति के पास उपलब्ध नहीं है। कुछ उनके निकट के परिजन भी केवल कुछ मौखिक तथ्यों से अवगत हैं पर उनके पास भी पंडित शिव प्रसाद चौधरी के आध्यात्मिक जीवन की कोई प्रमाणिक सूचना नहीं है केवल कुछ सुनी सुनाई बातें हैं जिनसे कुछ निषकर्ष निकाल पाना बहुत ही दुश्कर कार्य है।

इस विषय पर काफी शोध कार्य करने के पश्चात जो भी सामग्री आपके परिजनों से प्राप्त करने में सफलता मिल सकी उसके अनुसार आप रिद्धियां तथा सिद्धियां प्राप्त करने के पश्चात एक संत के रूप में उत्तर प्रदेश के इटावा जनपद में लगभग 10 वर्ष बाद सन् 1886 के आस पास प्रकट हुऐ जहां उस समय हैजे का प्रकोप एक महामारी के रूप में फैल चुका था और अनेक व्यक्ति इस रोग के शिकार होकर प्रतिदिन मृत्यु को प्राप्त हो रहे थे। आपने अपने चमत्कारी प्रभाव से न केवल रोगियों को जीवन दान दियां, अपितु पूरे नगर को इस महामारी के प्रकोप से मुक्त किया जिससे प्रत्येक व्यक्ति आपका भक्त बनकर आपकी दैविक शक्ति का गुणगान करने लगा। चूंकि आप एक डन्डा बजाते हुए भ्रमण करते थे अतः आप नगर में बाबा खटखटा के नाम से बहुत शीघ्र प्रसिद्ध हो गये और आपकी महिमा तीव्र गति से हर दिशा में फैलने लगी। आप वहां यमुना नदी के तट पर एक कुटिया बना कर रहने लगे।

आपकी आध्यात्मिक शक्ति के बारे में अनेक कहानियां और किवंदन्तियां प्रचलित हैं। कहते हैं कि एक बार इटावा नगर यमुना नदी में भंयकर बाढ़ आ जाने के कारण डूबने लगा। बाढ़ का पानी आपकी कुटिया के भीतर भी प्रवेश करने लगा तब आपने हज़रत मूसा की तर्ज पर अपने डन्डे को कसकर बाढ़ के पानी पर पटक दिया और कुछ ही क्षणों में बाढ़ का पानी उतर गया। जिससे सब आश्चर्य चकित होकर आपके सम्मुख नतमस्तक होकर आपकी जय जय कार करने लगे।

यह भी कहा जाता है कि आप जब प्राणायाम् करने के लिये पद्मासन लगाते थे तो पृथ्वी से दो फिट ऊपर उठकर हवा में स्थिर होकर यह क्रिया करते थे। आप एक बार इटावा की एक गली में जा रहे थे। आपने देखा कि एक स्थान पर काफी भीड़ एकत्रित है। आपने पास जाकर देखा कि एक नवयुवक का शव रखा हुआ है जिसके निकट उसकी पत्नी अपनी चूड़ियां तोड़कर घनघोर विलाप कर रहीं है। आपने वहीं ज़मीन पर बड़े ज़ोर से अपना डन्डा पटका और कहा यह क्या हो रहा है यह युवक तो जीवित है। फिर यह विलाप क्यों ? सबने देखा कि वह नवयुवक उठ

कर बैठ गया और उसकी पत्नी के हाथों में टूटी हूई चूड़ियां फिर से साबूत होकर शोभा बढ़ा रही हैं। उन्होंने खटखटे बाबा की दया के प्रति अपनी कृतज्ञता अपना शीष नवाते हुए की और आत्मविभोर होकर उनके चरण पकड़ लिये।

खटखटे बाबा के आशिर्वाद से यमुना नदी के तट पर सन् 1903 में संस्कृत विद्यापीठ की स्थापना उनके परम भक्त ब्रह्म नाथ ने की जो डिप्टी कमिश्नर का पद त्याग कर उनके शिष्य बन गये थे। इस विद्यापीठ के संग्रहालय में हज़ारों दुर्लभ पाण्डुलिपियां प्राचीन साहित्य के कई–कई संस्करण, भोज पत्र पर हस्त लिखित ग्रन्थ तथा कई अन्य तरह की सामग्री संग्रहित की गयी है ताकि भारतीय नागरिक अपने वाड्मय को देख तथा पढ़ सकें।

सन् 1911 में इस विद्यापीठ में बहुत बड़े पैमान पर एक यज्ञ का आयोजन किया गया। जिसमें प्रसाद के वितरण के समय घी की कमी पड़ गयी। खटखटे बाबा ने समस्या के समाधान के लिये कहा जितना घी कम है उतना कढ़ाई में यमुना का जल डाल दो। ऐसा करने पर जल घी में परिवर्तित हो गया। खटखटे बाबा नित्य प्रातः काल यमुना नदी के उस पार स्नान करने के लिये अपनी खडाऊं पहन कर उस पर इस प्रकार चल कर जाते थे जैसे कोई समतल सड़क पर चलता है।

आप जब भी इटावा से अपनी ससुराल लखनऊ आते थे तो कश्मीरी मुहल्ले में स्थित शर्गा वालों की ऐतिहासकि हवेली के निकट के मकान में ठहरते थे जिसके आंगन में एक हलब नीम का पेड़ लगा हुआ था। इसी मकान में कभी उर्दू के प्रसिद्ध शायर रतन नाथ दर "सरशार" रहते थे। खटखटे बाबा नित्य पूजा–अर्चना तथा योगाभ्यास बड़े एकाग्र मन के साथ करते थे। कभी–कभी आप यौगिक क्रिया द्वारा अपने शरीर को इतना स्थूल कर लेते थे कि आप एक रबड़ की गेंद की तरह नीम के पेड़ की ऊचांई तक उछल जाते थे। आपने लगभग 66 वर्ष के आयु में सन् 1925 के आसपास बुद्ध पूर्णिमा के पावन पर्व पर निर्वाण प्राप्त किया आपके ससुराल के मुखिया पंडित लक्ष्मी नारायण कौल नाला ने आपके सम्मान

मैं अपने आवास में ऊपर छत पर एक कमरा आपकी पूजा का स्थल बना दिया था जहां आपके चित्र की पूजा की जाती थी और आपके निर्वाण दिवस को बुद्ध पूर्णिमा के दिन बड़ी श्रद्धापूर्वक मनाया जाता था जिसमें उनके व्यक्तित्व और कृतित्व पर निम्नलिखित कहानी के रूप में प्रकाश डाला जाता था। उस उर्दू में कहे गये कसीदे के बोल कुछ इस प्रकार हैं।

जो भक्त हैं और मोतक़िद हैं बेशुमार
दुनिया में खुशनसीब हैं उफ़ताद में दस्तगार
कालिब में सबके हैं और सबके तन में जान
इस रक्स को समझते हैं बस उनके कद्रदान
दुनिया में उनके भक्त हैं मसरूर शाद हाल
उनका जो डर ख्वाब में नहीं तो क्या मजाल
फले फूले है सब चमने दहर में कमाल
जो उनके दास हैं वह सदा रहेंगे निहाल
शाकिर जो उनके ध्यान में और उनकी याद में
क्या क्या गुल खिले हैं मेरे बागे मुराद में
प्रसिद्ध नाथ जो उनके थे जो मुरशीद थे बेपनाह
उनका भी ज़िक्र करना है मुझ को यहां रवां
फेरी लगाई इटावे में जा बजा
उस वक्त वहां लोग थे हैजे से मुब्तला
सारा शहर इटावा मग़ज़ने रंज के ग़म में था
बीमार सबके सब अच्छा न कोई था
फेरी लगायी तब उन्होंने और दी यह सदा
सुन ले कि खटखटा है और चेत अब ज़रा
दो तीन रोज़ बाद उनकी टली यह बला
तब लोग उनको कहने लगे बाबा खटखटा
सबके सब मोतक़िद थे उनके बहरे कज़द में
आली वह खानदान के वह हर दिल कुर्बान थे
पंडित थे आप मजमुये आल सुखनवरी

शरिस्तेदार दफ़तरे डिप्टी कमिश्नरी
पहना लिबास फ़कीर का दी छोड़ नौकरी
सब पर थे मेहरबां ज़रे बन्दा परवरी
खलक अमीम आपका मशहूर आम था
बिलखते और फैज़ उनको दिलो अज़ीज़ था
एक मरतबे का ज़िक्र है बहरे जमन बढ़ा
और बढ़ते बढ़ते उनकी कुटिया के पास आ गया
तब अपना डन्डा उन्होंने उसको दिखा दिया
फौरन उतर गया वह गोया कभी चढ़ा न था
पानी गढ़ो में रह गया अक्सर मुकाम पर
ज़ाहिर यह उनका मौज़्ज़ा है रस्मों आम पर
भक्तों को ख्वाब में नज़र आते थे गाह बगाह
यह बात सच है इसका है अब परमात्मा गवाह
कह जाते थे जो ख्वाब में होता था सच ज़रूर
होता था उनके मौज़्ज़ों का ग़ैन से जदूर
जर्रों को आफताब दुरखशां बना दिया
पानी की बूदं को पुर गुलतां बना दिया
ली कंकड़ी जो हाथ में तो बन गई वह लाल
यह फैज़ यह दया यह करामात यह मलाल
सन पास धर्म आप हैं वह साहिबे विकाल
कुल उनके मौज़्जो का ज़िक्र है यही निहाल

इटावा में यमुना घाट पर जिस स्थान पर खटखटे बाबा ने अपना शरीर त्याग कर निर्वाण प्राप्त किया वहां उनके भक्तों ने उनकी पावन स्मृति में उनकी समाधी का निर्माण कराया जहां प्रतिवर्ष बुद्ध पूर्णिमा के दिन एक बहुत बड़ा मेला लगता है। जिसमें लाखों की संख्या में उनके भक्त अपने श्रद्धासुमन उनको अर्पित करने आते हैं। इस स्थल की उचित देख भाल के लिये एक ट्रस्ट की स्थापना की गयी हैं। जिसके पंडित कृष्ण मोहन नाथ रैना एक लम्बे समय तक अध्यक्ष रहे। उसके एक सदस्य कुछ

वर्ष पूर्व तक पंडित श्याम प्रसाद चौधरी थे पर वह अधिक आयु हो जाने पर तथा कुछ अपने स्वास्थ्य के कारण अब कानपुर के किदवई नगर में रहते हैं। अब इस ट्रस्ट की देख भाल अन्य समुदायों के व्यक्ति करतें हैं, जिनमें कुंवर हरिहर सिंह राजावत प्रमुख हैं।

कश्मीरी पंडित समाज में अनेक सिद्ध पुरूष, योगी, संत और महात्मा हुए हैं जिन्होंने अपने आध्यात्मिक ज्ञान द्वारा अनेक कल्याणकारी कार्य किये और सम्पूर्ण मानवता को प्रेम और भाई चारे का संदेश दिया। उन्होंने निस्वार्थ भाव से पीड़ितो के दुःखों का निवारण किया और उनको जीवन का महत्व समझाया। ऐसी महान आत्माएें इस संसार में यदा कदा ही अवतरित होती हैं जो समाज की धर्म के प्रति आस्था को जागृत कर उसको एक सुदृढ़ रूप प्रदान करती हैं और जिनके दर्शन मात्र से ही हर व्यक्ति अपने को सौभाग्यशाली समझने लगता है और उसे परमानन्द की अनुभूति होती है। ऐसे अलौकिक तथा प्रतिभावान दिव्य महापुरुषों के लिये हिन्दी के प्रखर कवि बलबीर सिंह "रंग" ने कुछ इस प्रकार अपने भाव प्रकट किये हैं।

ढ़ंग अपना जुदा हो गया है
क्योंकि बन्दा खुदा हो गया है
बात करता है इन्सानियत की
रंग को जाने क्या हो गया है



कश्मीर की एक अनुभवी लेखिका, कवयित्री संगीतज्ञ तथा राजनीतिज्ञ

श्रीमती क्षेमलता वखलू



ईस्ट इण्डिया कम्पनी की फौजों द्वारा पंजाब राज्य की विराट सिख सेना को युद्धभूमि में परास्त करन के पश्चात उसके एक प्रमुख सेना नायक जम्मू के राजा गुलाब सिंह और अंग्रेजों के मध्य 16 मार्च सन् 1846 को अमृतसर में एक सन्धि पर हस्ताक्षर हुऐ जिसके अनुपालन में जम्मू के राजा गुलाब सिंह ने अंग्रेजों को एक प्रकार से युद्ध के मुआवज़े के रूप में 75 लाख रूपये देकर उनसे कश्मीर ले लिया और अपने को जम्मू तथा कश्मीर का महाराजा घोषित कर दिया। इस प्रकार कश्मीर घाटी पर डोगरा शासन प्रारम्भ हुआ जो लगभग 100 वर्ष सन् 1947 तक चला। इस अन्तराल में विभिन्न डोगरा शासकों ने कश्मीर पर किस प्रकार का शासन किया जो वहां की जनता को उनके विरूद्ध जन आन्दोलन करने को बाध्य होना पड़ा और सन् 1931 में वहां बड़े पैमाने पर साम्प्रदायिक दंगे भड़के जिनमें मुख्यतः वहां के मूल निवासियों कश्मीरी पंडितो को निशाना बनाया गया, के निष्पक्ष विश्लेषण की आवश्यक्ता है। कश्मीर के अन्तिम डोगरा शासक महाराजा हरि सिंह (1925–1947) को उनके प्रधानमंत्री पंडित राम चन्द्र काक कश्मीर को पूर्व का स्वीटज़रलैण्ड बनाने का दिवास्वप्न दिखाते रहे वहीं उनके राज ज्योतिषी उनको पूरे पंजाब प्रान्त का महाराजा बनने की भविष्यवाणी करते

रहे जिसके कारण दुविधा में पडकर भारत के सन् 1947 में एक स्वतंत्र राष्ट्र बन जाने के पश्चात भी महाराजा हरि सिंह ने वह सब नहीं किया जो वास्तव में उन्हें करना चाहिये था जिसका दुःखद परिणाम आज हमारे सामने हैं।

22 अक्टूबर सन् 1947 को क़बाईलियों ने कश्मीर पर आक्रमण कर दिया और विवश होकर वहां के डोगरा शासक महाराजा हरि सिंह को वहां से पलायन करना पड़ा। परन्तु जब भारतीय वीर सेनायें विजय घोष का सिंहनाद करती हुई ब्रिगेडियर कन्हैया लाल अटल के नेतृत्व में इन पाकिस्तान समर्थित कबाईलियों को खदेड़ती हुई, जोज़िला दर्रे से आगे बढ़ रही थी तो अचानक भारत के तत्कालीन प्रधान मंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू ने कदाचित तत्कालीन वाईसराय और गर्वनर जनरल की पत्नी लेडी एडविना मांऊटबेटन के प्रभाव में आकर एक तरफ़ा युद्ध विराम की घोषणा कर दी और इस कश्मीर की समस्या के समाधान के लिये संयुक्त राष्ट्र संघ से जाकर गुहार की जिसने इस समस्या को एक अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप देकर और अधिक गम्भीर और जटिल बना दिया।

सोवियत संघ की सेनाओं के सन् 1977 में अफगानिस्तान में प्रवेश कर जाने के पश्चात अमरीका की गुप्तचर संस्था सी० आई० ए० ने उस क्षेत्र में सोवियत संघ के प्रभाव को कम करने के लिये वहां सैन्य सहायता और प्रचुर मात्रा में धन देकर वहां सोवियत संघ की उपस्थिति के विरूद्ध लड़ाके तैयार करने की प्रक्रिया आरम्भ की पर सन् 1987 के आसपास अफ़ग़ानिस्तान से सोवियत संघ की सेनाओं के हटने के पश्चात इन लड़ाकों ने आतंकवादियों के रूप में कश्मीर घाटी में अपनी घुसपैठ प्रारम्भ की और इस प्रकार वहां सन् 1989 से आतंकवाद ने एक भयंकर रूप ले लिया जिसमें बड़े ही सुनियोजित तरीके से चुन चुन कर कश्मीरी पंडितो की नृशंस हत्याऐं की जाने लगी। जिसके कारण 19/20 जनवरी सन् 1990 को लगभग 3 लाख कश्मीरी पंडित कश्मीर घाटी से देश के अन्य सुरक्षित स्थानों को पलायन कर गये। पर ऐसा भी नहीं है कि घाटी का हर कश्मीरी पंडित पलायन कर गया हो प्रमाणिक आंकड़ो के अनुसार

अभी भी लगभग 20,000 कश्मीरी पंडित घाटी के सुदूर अंचलो में निवास कर रहे हैं। इनमें से एक प्रमुख नाम श्रीमती क्षेमलता वखलू का है जो श्रीनगर में रह कर अपनी साहित्य साधना को एक मूर्ति रूप प्रदान करने में संलग्न हैं और जिनकी रचनायें अधिकतर कश्मीर के सन्दर्भ पर ही आधारित होती हैं। जिनमें अपनी मातृभूमि के प्रति उनके अटूट सम्बन्धों का चित्रण प्रतिबिम्बित होता है।

श्रीमती क्षेमलता वखलू का जन्म 13 फरवरी सन् 1937 को कश्मीर घाटी के श्रीनगर जनपद के एक सम्भ्रात कश्मीरी पंडित परिवार में हुआ था। आपके पिता पंडित निरन्जन नाथ धर एक आयकर अधिकारी थे। जिनका विवाह तारावती (सोनबतनी) कौल के साथ सम्पन्न हुआ था। श्रीमती क्षेमलता वखलू के पितामह पंडित रामचन्द्र धर घाटी के प्रथम कश्मीरी पंडित थे जिन्होंने स्नातक की परीक्षा उत्तीर्ण की और घाटी में शिक्षा का प्रचार और प्रसार किया।

पंडित निरंजन नाथ धर के तीन पुत्र राज नाथ, सुरेन्द्र नाथ तथा रवीन्द्र नाथ और तीन पुत्रियां क्षेमलता, सुभाषिनी और इन्दिरा हैं। आपके ज्येष्ठ पुत्र डा0 राज नाथ धर एक कुशल वैज्ञानिक हैं। जिनका विवाह पंडित जवाहर लाल खुशू को सुपुत्री जया के साथ सम्पन्न हुआ है। आपके दूसरे पुत्र डा0 सुरेन्द्र नाथ धर एक कुशल चिकित्सक हैं। जिनका विवाह पंडित त्रिलोकी नाथ मट्टू जज की सुपुत्री विमला के साथ सम्पन्न हुआ है। आपके तीसरे पुत्र रवीन्द्र नाथ धर हैं जिनका विवाह पंडित के0 एन0 काचरु की सुपुत्री कल्पना के साथ सम्पन्न हुआ है। पंडित निरंजन नाथ धर की पुत्रियों में सुभाषिनी का विवाह डा0 चमन लाल मुन्शी के साथ तथा इन्दिरा का विवाह डा0 मोती लाल पेशिन के साथ सम्पन्न हुआ है।

श्रीमती क्षेमलता वखलू की प्रारम्भिक शिक्षा श्रीनगर के वसंता गर्ल्स हाई स्कूल में सम्पन्न हुई जहां से आपने सन् 1950 में अपनी मैट्रिकुलेशन की परीक्षा उत्तीर्ण की। आपने फिर विश्व भारती माडल स्कूल में प्रवेश लिया जहां से आपने सन् 1952 में अपनी हायर सेकेन्ड्री की परीक्षा उत्तीर्ण की। आपका इसी वर्ष श्रीनगर के निवासी पंडित एम. एन. वखलू के सुपुत्र

डा0 ओंकार नाथ वखलू के साथ विवाह हो गया जो बाद में वहां के रीजनल इन्जीनियरिंग कालेज के प्राचार्य के पद से सेवा निवृत्त हुऐ।

श्रीमती क्षेमलता वखलू ने अपने विवाह के पश्चात अपनी शिक्षा को जारी रखा और आपने सन् 1954 में हिन्दी साहित्य विषय लेकर प्रभाकर की परीक्षा उत्तीर्ण की। आपने खालसा कालेज से फिर बी0ए0 की उपाधि ग्रहण की। आपको अपनी बाल्यवस्था से ही संगीत के प्रति विशेष रुचि रही। आपने भारतीय शास्त्रीय संगीत की शिक्षा ली और विधिवत एक कुशल संगीतज्ञ के संरक्षण में अपने घर पर सितार वादन का प्रशिक्षण लिया और उसमें दक्षता प्राप्त की।

श्रीमती क्षेमलता वखलू सन् 1960 में अपने पति डा0 ओंकार नाथ वखलू के साथ इंग्लैंड के बरमिंग्घम नगर गयीं आपने अपने इंग्लैंड में प्रवास का लाभ उठाते हुऐ सन् 1963 में लन्दन सिटी गिल्डस से होम साइन्स में डिप्लोमा प्राप्त किया। आपने वहां यंग वीमेन्स क्रिश्चियन एसोसिएशन की गतिविधियों में भी खूब खुल कर भाग लिया। आपने अपने पति के साथ सम्पूर्ण योरप का व्यापक भ्रमण किया और आपने सन् 1968 और सन् 1970 के मध्य जर्मनी में प्रवास के दौरान वहां के अनेक नगरों में अपने एकल सितार वादन का प्रर्दशन कर वहां के दर्शकों को मंत्रमुग्ध कर दिया आप भारत–जर्मनी मैत्री संघ की भी एक सक्रिय सदस्य रहीं और उसके तत्वावधान में आपने अनेक कार्यक्रमों का आयोजन किया। आप हिन्दी, कश्मीरी, उर्दू, अंग्रेज़ी तथा जर्मन भाषा में समान रूप से अधिकार रखती है।

श्रीमती क्षेमलता वखलू ने भारत वापस आने के पश्चात जम्मू–कश्मीर राज्य की राजनीति में सक्रिय रूप से भाग लेना प्रारम्भ कर दिया। आपने सन् 1972 के चुनाव में प्रथम बार अपना नामांकन पत्र भरा। आप जम्मू–कश्मीर की प्रथम महिला थीं जिसने एक स्वतंत्र उम्मीदवार के रूप में यह चुनाव लड़ा। पर आपको कुछ ऐसा प्रतीत हुआ कि बिना किसी राजनीतिक पार्टी की सदस्यता ग्रहण किये हुए इस समर को पार कर पाना कदाचित आपके लिये सम्भव नहीं क्योंकि स्वतंत्र रूप से चुनाव

लड़ने के लिये बहुत अधिक सन्–साधनों की आवश्यक्ता होती हैं और सदा निष्ठावान कार्यकर्ताओं का अभाव बना रहता है जो उचित प्रकार से आपके चुनाव की कमान सभालें। अतः अपने उद्देश्य की पूर्ती के लिये आपने शेख मोहम्मद अब्दुल्ला की नेशनल कान्फ्रेंस पार्टी की सदस्यता ग्रहण की। जिनको श्रीमती इन्दिरा गांधी ने अज्ञातवास से निकाल कर पुनः जम्मू–कश्मीर के राज सिंहासन पर एक समझौते के तहत सन् 1975 में स्थापित किया था। यहां पर सुधि पाठकों की सूचनार्थ ये बताना परमआवश्यक है कि शेख़ मोहम्मद अब्दुल्ला के पितामह पंडित रघु राम क़ौल अपनी दरिद्रता से व्यथित होकर तथा धन पाने के लोभ में अपना धर्म परिवर्तित कर मुसलमान बन गये थे। शेख़ मोहम्मद अब्दुल्ला माहराजा हरि सिंह से वित्तीय सहायता लेकर उच्च शिक्षा के लिये कश्मीर से अलीगढ़ गये जहां आपने अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय से एम0एस–सी0 की उपाधि प्राप्त करने के पश्चात आप श्रीनगर के स्टेट हाई स्कूल में एक विज्ञान के अध्यापक नियुक्त हुऐ। आपको सन् 1930 में नौकरी से भ्रष्ट आचरण के कारण निष्कासित कर दिया गया। जिससे क्रोधित होकर आपने महाराजा की नीतियों के विरूद्ध एक मोर्चा खोल दिया और सन् 1932 में मुस्लिम कौन्फ्रेंस नाम से एक पार्टी का गठन किया जिसका नाम सन् 1939 में आपने बदलकर नैशनल कौन्फ्रेंस कर दिया। आपने इसी पार्टी के माध्यम से कश्मीर घाटी में सन् 1946 में महाराजा हरि सिंह के शासन के विरूद्ध एक व्यापक जनआन्दोलन चलाया और रियासत के सन् 1947 में भारत के साथ विलय के पश्चात आप पंडित जवाहर लाल नेहरू की कृपा से उसके प्रधानमंत्री बने। उसके पश्चात 9 अगस्त सन् 1953 को आपके राष्ट्रद्रोही कारनामों के कारण आपको रियासत के प्रधानमंत्री पद से निष्कासित कर बन्दी बना लिया गया और जेल में नज़रबन्द कर दिया गया। इसके पूर्व पंडित नेहरू ने शेख़ साहब से कहा था कि अभी तक मैं तुमसे जवाहर लाल की तरह व्यवहार कर रहा था पर अब भारत के प्रधानमंत्री की तरह पेश आऊँगा। क्योंकि कुछ गुप्त दस्तावेज़ देखने के पश्चात पंडित नेहरू के होश उड़

ये थे। जिनको तत्कालीन गृहमंत्री डॉ0 कैलास नाथ काटजू और गुप्तचर सेवा के तत्कालीन निदेशक गोपी कृष्ण हुण्डू ने उनके समक्ष प्रस्तुत किया था। जब 7 अगस्त सन् 1982 को शेख मोहम्मद अब्दुल्ला की मृत्यु के पश्चात उनके पुत्र डा0 फारूक अब्दुल्ला प्रदेश के मुख्यमंत्री बने तो उन्होंने श्रीमती क्षेमलता वखलू को अपने मंत्री मण्डल का एक सदस्य बनाया पर इसी बीच नेशनल कान्फ्रेंस पार्टी में आन्तरिक राजनीतिक दांव पेच तथा पैंतरेबाज़ी में डा0 फारूक अब्दुल्ला के बहनोई गुलाम मोहम्मद शाह ने कुछ पारिवारिक मतभेदों के कारण अवामी नेशनल कान्फ्रेंस पार्टी नाम से एक नयी राजनीतिक पार्टी का गठन किया और कांग्रेंस पार्टी की सहायता लेकर प्रदेश के मुख्यमंत्री बन गये। श्रीमती क्षेमलता वखलू भी अपना पाला बदल कर उनके साथ हो गयी और गुलाम मोहम्मद शाह ने उनको अपने मंत्रिमण्डल में पर्यटन तथा नागरिक उड्डयन विभाग का सन् 1984 में मंत्री बना दिया।

श्रीमती क्षेमलता वखलू ने प्रदेश में अपने मंत्री पद के कार्यकाल में अनेक महत्वाकांक्षीं योजनाऐं लागू कीं। आपने प्रदेश में चल रहे विकास से सम्बंधित अनेक कार्यक्रमों की समीक्षा कर उनका चरण बद्ध तरीके से क्रियान्वयन कराया जब सन् 1986 में अनन्तनाग जिले मे साम्प्रदायिक दंगे भड़के तो आपने उस क्षेत्र का व्यापक दौरा कर वहां कानून–व्यवस्था को लागू कर शान्ति स्थापित करने का भरसक प्रयत्न किया और दंगा पीड़ितों को सरकार द्वारा प्रदान की जा रही सहायता की व्यापक समीक्षा की।

श्रीमती क्षेमलता वखलू ने जम्मू–कश्मीर में तीव्र गति से बढ़ रहे आतंकवाद तथा बदल रहे राजनीतिक समीकरणों की उपयोगिता का गम्भीर विश्लेषण करने के पश्चात गुलाम मोहम्मद शाह की अवामी नेशनल कान्फ्रेंस पार्टी से सन् 2001 में अपना त्यागपत्र देकर अपने को अलग कर लिया और फिर आपने श्रीमती सोनिया गांधी की कांग्रेस पार्टी की सदस्यता ग्रहण कर ली आजकल आप कांग्रेस पार्टी की एक सक्रिय कार्यकर्ता है और उसकी जम्मू–कश्मीर प्रदेश इकाई की उपाध्यक्ष हैं।

श्रीमती क्षेमलता वखलू को अपनी बाल्यवस्था से ही साहित्य सृजन

के प्रति एक विशेष रूचि रही। आप गद्य लेखन तथा पद्य लेखन दोंनो में पारन्गत हैं और साहित्य की इन दोनों विधाओं पर समान अधिकार रखती हैं जो वास्तव में किसी भी भाव शिल्पी के लिये बहुत कठिन कार्य होता है। आपके द्वारा रचित हिन्दी का प्रथम उपन्यास "**झील और कमल**" सन् 1966 में प्रकाशित हुआ। आपके दूसरे उपन्यास "**कश्मीर की धरती**" जो सन् 1968 में प्रकाशित हुआ को जम्मू–कश्मीर कल्चर और आर्ट एकाडमी द्वारा प्रथम पुरस्कार प्रदान किया गया। आपके दो अन्य उपन्यास "**दहकते अंगारे**" तथा "**खिला फूल मुरझाये**" भी साहित्य जगत में कांफी चर्चित रहे। आपने अपने पति के साथ अंग्रेजी में Kashmir Behind the White Curtain नाम से एक पुस्तक 1972 में लिखीं। आपके द्वारा रचित अनेक लघु कहानियां विभिन्न साहित्यिक पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं।

श्रीमती क्षेमलता वखलू ने एक उद्घोषिका के रूप में श्रीनगर के दूरदर्शन केन्द्र तथा आकाशवाणी केन्द्र में भी कार्य किया। आपका दूरदर्शन का नाटक "**लाल साहब**" दर्शकों द्वारा बहुत सराहा गया। आपके एक अन्य पारिवारिक नाटक "**कयामत**" जो भारतीय परिवार नियोजन ऐसोसिएशन के लिये विशेष रूप में लिखा गया था को अखिल भारतीय प्रतियोगिता में पुरस्कृत किया गया। आपने अनेक नाटक दूरदर्शन और आकाशवाणी के लिये लिखे हैं।

श्रीमती क्षेमलता वखलू की भाषा की पवित्रता उनके द्वारा अपने विचारों को प्रकट करने का तरीका तथा उनकी शैली का अनुमान निम्नलिखित कविता से लगाया जा सकता है। जिसको उन्होंने "**देवस्थान बोल उठे**" शीर्षक के अन्तर्गत रचा है जिसमें कश्मीरी पंडितों की कश्मीर से विस्थापन की पीड़ा साफ़ प्रतिबिम्बित होती है।

आश्चर्य दस वर्षों के बाद आई तुम्हें आज मेरी याद
यह न सोचा तेरे पीछे
मेरा क्या होगा हाल
इन वर्षों में वितस्ता का पानी, लाल हुआ रक्तपात से

दिन दहाड़े चीर हरण
धधक उठी ज्वाला भी
हाहाकार और चीत्कारों से, मेरा हृदय विदीर्ण हुआ
तब जब आतंकवादियों ने
मेरे भीतर प्रवेश किया
एक त्रिशूल की ढाल से अकेले मैने उस पर वार किया
सिसक कर देख रहा था मैं
जन संहार का तांडव नृत्य

आप अधिकतर अपने भावों को कविता के माध्यम द्वारा प्रकट करने के लिये परिमार्जित भाषा का ही उपयोग करती हैं जिसमें गम्भीरता के साथ–साथ कवयित्री की मार्मिक वेदना भी प्रकट होती है। शिल्प और कथ्य का अनूठा संगम इन कविताओं में देखने को मिलता है। उदाहरण के लिये उनकी कविता ''समय की पुकार'' की कुछ पंक्तियां प्रस्तुत हैं।

''झांक कर भीतर तेरे, पढ़ पाऊं उन भावो कों
बन कर दीवार खड़ा मुझे तुझ से पाट रहा पाशान
कैसा स्वभाव घृणा का बन गया मानव, मानव से दानव
वार न करता मन्द बुद्धि पशु भी अपने ही पशु भाई पर
बुद्धि भी दी ऐसी हमें जकड़ गये विवादों में
लेकर तर्कों को ऐसे छोटी सी बातें विराट हुई
युग बीते सदियां उलट पलट कितने रावण जन्में उखड़े
हर सदी में सीता हरण कल का सही आज ग़लत
क्यों मिटते, लड़ते मरते हम? जाति धर्म भेदभाव में
मधुर विष घोल पी जाता मानव, मानव संहार के लिये

श्रीमती क्षेमलता वखलू और उनके पति डा0 ओंकार नाथ वखलू को श्रीनगर के बुछवारा मुहल्ले में स्थित उनके आवास ''भिक्षु विहार'' से 4 सितम्बर सन् 1991 को आतंकवादियों ने अगवा कर लिया और लगभग 45 दिन विभिन्न आज्ञात स्थानों पर इस दम्पति को अपने कब्ज़े में नज़र बन्द रखा। इस अन्तराल में श्रीमती क्षेमलता वखलू और उनके पति को अनेक

रोमांचकारी और रोगटें खड़े कर देने वाले अनुभव हुए पर अन्तोगत्वा 18 अक्टूबर सन् 1991 को मानवता की दानवता पर विजयदशमी के पावन पर्व पर विजय हुई और यह दोनों पति–पत्नि आतंकवादियों के चंगुल से सकुशल छूट कर आने में सफल हुऐ। आपने इस हृदय विदारक घटना का वृतान्त एक पुस्तक के रूप में अंग्रेजी में "Kidnapped Forty five days With the Militants in Kashmir" शीर्षक के अन्तर्गत सन् 1993 में प्रकाशित कराया तथा फिर सन् 2001 में "A matter of Fact " नाम से एक पुस्तक अंग्रेज़ी में प्रकाशित की।

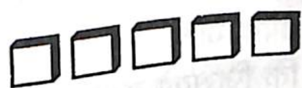
श्रीमती क्षेमलता वखलू अपनी साहित्य साधना के अतिरिक्त विभिन्न सामाजिक तथा सांस्कृतिक संस्थाओं से भी सक्रिय रूप से जुड़ी हुई हैं, और उनके कार्यकलापों में नियमित रूप से हिस्सा लेती हैं। आप Authors Guild of India की उसकी 1972 में स्थापना से एक सक्रिय सदस्या हैं। आप परिवार नियोजन संस्था की सदस्या है। आप अखिल भारतीय महिला कांफ्रेंस की एक प्रमुख सदस्या हैं तथा विभिन्न अर्न्तराष्ट्रीय तथा प्रादेशिक ग़ैर सरकारी संस्थाओं से सम्बद्ध हैं। आप महाराष्ट्र के पंचवटी क्षेत्र की एम0 आर0 ए0 की भारतीय इकाई तथा पुणे में प्रगति फाउंडेशन के कार्यकलापों में सन् 1992 से उनकी संस्थापक सदस्या के रूप में निरन्तर अपना योगदान कर रही हैं। आपने अपना सम्पूर्ण जीवन एक प्रकार से मानवता के उत्थान और विकास के प्रति समर्पित कर रखा है। आपको बागबानी, तैराकी और खाना पकाने का भी शौक है। आप विशेष कर पाश्चात्य व्यंजन बहुत ही चाव के साथ पकाती हैं जिनमें आप निपुण है।

श्रीमती क्षेमलता वखलू के दो पुत्र अरूण और भरत हैं। आपके ज्येष्ठ पुत्र अरूण वखलू का जन्म 8 अगस्त सन 1955 को श्रीनगर में हुआ है। आपका विवाह पंडित त्रिलोकी नाथ वैश्नवी की सुपुत्री सुश्री अनु के साथ सम्पन्न हुआ है। आप आजकल पुणे में रहते हैं और प्रगति लरनिंग सिस्टम के अध्यक्ष हैं। श्रीमती क्षेमलता वखलू के दूसरे पुत्र भरत वखलू का जन्म श्रीनगर में 3 अगस्त सन 1959 को हुआ है। आपका विवाह डा0

बी एम0 भान के सुपुत्री सुश्री सविता के साथ सम्पन्न हुआ है। आप आजकल जमशेदपुर में TISCO के जनरल मैनेजर हैं।

श्रीमती क्षेमलता वखलू के पति प्रो0 ओंकार नाथ वखलू सेवा निवृत्त हो जाने के पश्चात आजकल इन्जीनियरिंग और मैनेजमेन्ट कलसेन्टेन्ट के रूप में कार्यरत हैं। श्रीमती क्षेमलता वखलू ने अपने जीवन में अनेक उतार चढ़ाव देखें हैं पर आपने सदैव धैर्य के साथ साहसपूर्वक चुनौतियों का डट कर सामना किया और कभी भी अपने को निर्धारित लक्ष्य से विचलित नहीं होने दिया जिसके कारण आप अपने ध्येय को प्राप्त करने में सदा सफल रहीं आपने मानवीय मूल्यों को अपने जीवन में वरीयता दी और कभी भी अपने आदर्शों और सिद्धातों के साथ किसी प्रकार का कोई समझौता नहीं किया। आपने जीवन में आत्मविश्वास और संयम को अपने आचरण में प्राथमिकता दी तथा कुटिल और जड़ीले व्यक्तियों की संगत से अपने को दूर रखा। आप एक बहुमुखी प्रतिभा की धनी महिला हैं। जिनके विभिन्न क्षेत्रों में किये गये महत्वपूर्ण योगदान को सदैव स्मरण किया जायेगा। इसी संदर्भ में अपनी भावनाओं को उजागर करते हुए हिन्दी के एक प्रतिष्ठित कवि देवी प्रसाद **राही** ने कुछ इस प्रकार अपनी पंक्तियां रची हैं।

"नींद है नाराज़ आखिर क्या करूं
किस तरह मैं शाप सुधियों का हरूं
आदमी हूं ईट पत्थर तो नहीं
दर्द है यह दर्द कैसे चुप रहूं।"



धार्मिक प्रवृत्ति के एक प्रखर अधिवक्ता

पंडित आनन्द नारायण तंखा



जब सन 1775 में अवध के नवाब आसफउद्दौला (1775–1797) ने फैज़ाबाद के स्थान पर लखनऊ को अपनी राजधानी बनाया तब तक यह नगर गोमती तट पर बसा हुआ एक छोटा सा कस्बा था। जिसका कोई समुचित विकास नहीं हुआ था यद्यपि इस नगर की सभ्यता और संस्कृति को वैदिक काल से जोड़ा जाता है और ऐसी मान्यता है कि लक्ष्मण जी ने सीता को वन ले जाते समय कुछ पल इस नगर में व्यतीत किये थे। वह जिस स्थान पर ठहरे थे वह स्थल आज भी लक्षमण टीले के नाम से जाना जाता है। और इस नाते इस नगर के नाम को कुछ पुस्तकों में लक्षमण पुरी लिखा गया है।

नवाब आसफउददौला ने सर्वप्रथम इस नगर का चौमुखी विकास कराया और प्रत्येक व्यक्ति को रोज़गार के अवसर प्रदान किये। वह एक कृपालु और दयावान शासक थे जिनकी दरिया दिली से प्रभावित होकर देश के विभिन्न अंचलों से अनेक भाव शिल्पी लखनऊ की ओर आकर्षित हुए और इस नगर में बसने लगे। नवाब का यह दयालु स्वभाव इतना अधिक प्रसिद्ध हुआ कि आम जनता उनके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करने के लिये कहने लगी कि जिसको न दे मौला, उसको दे आसफउद्दौला ऐसा सुखद और शान्तिमय वातावरण जहां हर तरफ खुशहाली हों स्वाभाविक रूप से हर व्यक्ति को प्रभावित करेगा और वह निश्चित रूप से इस प्रकार के वातावरण में रहना अधिक उचित समझेगा जहां उसके

लिये अपनी प्रतिभा को दिखाने के हर प्रकार के सन साधन उपलब्ध हों और यही एक प्रमुख कारण था कि नवाब आसफउद्दौला के शासन काल में अनेक कश्मीरी पंडित कश्मीर से और देश के अन्य अंचलों से लखनऊ में आकर बसे और उन्होंने अपनी प्रतिभा तथा ज्ञान का परिचय देते हुए व्यापक समाज के अनेक क्षेत्रों में अपना महत्वपूर्ण योगदान देकर अपने लिये एक विशेष स्थान बनाया तथा समाज के अन्य वर्गो से आदर और सम्मान पाया। जो कश्मीरी पंडित नवाब आसफउद्दौला के शासन काल में कश्मीर घाटी से सीधे लखनऊ में आकर बसे उनमें से एक प्रमुख नाम पंडित जिन्दराम चौधरी का था जो बाद में नवाब के तंखा बाटने के महकमें के हाकिम बना दिये गये थे इस नाते वह अपना कुलनाम चौधरी तंखा लिखने लगे।

नवाब आसफउद्दौला के शासन काल में शाही सिक्के ढालने की टकसाल चौपटियां में सिन्दोहन देवी के मन्दिर के निकट स्थित थी। जिसके हाकिम पंडित गौरी शंकर कोचक थे। जिनको नवाब आसफउद्दौला ने मुशीर–ए–माल के पद पर नियुक्त कर दिया था। जो कश्मीर से उन्हीं के शासन काल में लखनऊ पधारे थे। आपके पिता पंडित भवानी शंकर कोचक तथा पितामह पंडित राम कोचक मूल रूप से कश्मीर घाटी के श्रीनगर जनपद के हब्बा कदल के निवासी थे। चूंकि आप चौपटियां में रहते थे अतः पंडित जिन्दराम चौधरी तंखा ने भी निकट के रानी कटरा मुहल्ले में अपने परिजनों के निवास के लिये एक हवेली का निर्माण कराया और उसी में अपने परिवार सहित निवास करने लगे।

अवध में सन् 1778 में भीषण आकाल पड़ा जिसमें व्यक्तियों को रोज़गार प्रदान करने के लिये नवाब ने बड़े इमामबाड़े की आधार शिला रखीं। इसी वर्ष नवाब ने अपने लिये एक अंगरखां (एक पहन्ने का वस्त्र) बनवाने की इच्छा प्रकट की। चूंकि अधिकतर लोग भूखे मृत्यु को प्राप्त हो रहे थे अतः नवाब ने डुग्गी पिटवायी की अवध में जितने भी सुनार हों वह नवाब के समक्ष प्रस्तुत हों। जनता को मुफ़्त में रोटी न उपलब्ध हों और न ही जनता को भीख मांगने की आदत पड़े अतः जितना मज़दूर वर्ग था

वह इमामबाड़े के निर्माण के कार्य में लगा दिया गया और जो कुशल शिल्पी वर्ग था उसको नवाब के अगंरखें को बनाने में लगा दिया गया।

उस समय कुल 1200 बेहतरीन कारीगर इस अंगरखें के निर्माण में लगाये गये थे। यह अंगरखां उस समय 80 लाख रूपये में बनकर तैयार हुआ था। इस शाही अंगरखें में सत्तर कैरट के 700 छोटे पन्ने, हीरे के 516 टुकड़े, माणिक के 1121 टुकड़े, मूंगें के 1100 टुकड़े, 700 बसरे के मोती, तथा 600 पुखराज के टुकड़ो को टांका गया था। इसका एक हीरा ऐसा था जो सात मीटर की परिधि में अपनी रोशनी बिखेरता था। गले के पास से नीचे तक सोने के तार से नक्काशी की गयी थीं इस अंगरखें की विशेषता यह थी कि यह गर्मी में शरीर को ठंडा तथा सर्दी में शरीर को गर्म रखता था। इस ऐतिहासिक अंगरखें को नवाब के वारिसों ने चुपके से सन् 1995 में पेरिस में नीलाम करके अमरीका के एक उद्योगपति को लाखों डालर में विक्रय कर दिया और हमारी यह अमूल्य धरोहर अब अमरीका के एक संग्राहलय की शोभा बढ़ा रही है।

जिस समय लखनऊ में यह सब शाही कार्य ज़ोरो पर चल रहा था और विभिन्न कारीगर अपनी कला का कौशल दिखाने में जुटे हुए थे। उस समय सन् 1778 में पंडित जिन्द राम चौधरी तंखा ने अपने सन–साधनो का उपयोग करते हुए रानी कटरा मुहल्ले में एक भव्य शिव मन्दिर की आधार शिला रखी जो बाद में कश्मीरियों का बड़ा शिवाला नाम से प्रसिद्ध हुआ। इस मन्दिर में सम्पूर्ण उत्तर भारत का सबसे अनूठा शिवलिंग स्थापित है जो केवल एक काले पत्थर को तराश कर बनाया गया है। इतना भव्य और विशाल शिवलिंग मन्दिर के गर्भ ग्रह में किस प्रकार स्थापित किया गया यह अब भी रहस्य बना हुआ है।

इसी लगभग 300 वर्ष पुराने ऐतिहासिक मन्दिर के प्रांगण में कश्मीरियों की इष्ट देवी मां राज्ञा भगवती की एक आदमकद भव्य मूर्ति है जिसको मान्यता के अनुसार अब भक्त गण संकटा देवी कहते हैं जिसमें अपने भक्तों के दुखों का निवारण करने की दैविक शक्ति है। यह परिसर इस नाते **"संकटा देवी का मन्दिर"** नाम से अधिक प्रसिद्ध हो गया है।

पंडित । इन्द्रराम चौधरी तंखा अपने समय के लखनऊ नगर के एक जाने माने रईस थे जिनकी ठाकुरगंज क्षेत्र में तथा हरदोई जनपद में बहुत बड़ी ज़मीनदारी थी। आपके तीन पुत्र क्रमशः कृष्ण नारायण, महताब राय, टीका राम, तथा एक पुत्री थीं। पंडित महताब राय तंखा के पांच पुत्र क्रमशः बद्री नाथ, सूरजभान, चन्द्रभान, दाताराम तथा पारस राम व एक पुत्री कौला बीबी थीं। जिनका विवाह रानी कटरा के निवासी बसीधर कौल शर्गा के साथ सम्पन्न हुआ था।

पंडित टीकाराम तंखा के तीन पुत्र क्रमशः जगत नारायण, बसंत राय। तथा शिव नारायण और एक पुत्री कुम्मी थीं। पंडित बसंत राय तंखा के पुत्र पंडित केदार नारायण तंखा ब्रिटिश शासन काल में अपनी उर्दू तथा फारसी भाषा की शिक्षा समाप्त करने के पश्चात तहसीलदार के पद पर नियुक्त हो गये थे। आप कदाचित देहरादून के बाद में तहसीलदार बना दिये गये थे जिसके कारण आपका परिवार लखनऊ से देहरादून 19 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में पलायन कर गया। आपके भ्राता, अमरनाथ थे।

ऐसी मान्यता है कि देहरादून नगर को महाभारत काल में महर्षि द्रोणाचार्य ने अपनी तपोभूमि के रूप में बसाया था और उन्ही के नाम पर इस स्थान का देहरादून नाम पड़ा। इतिहास के अनुसार देहरादून गढ़वाल के राजाओं के शासन क्षेत्र में आता था। मुगल सम्राट शाहजहां ने सर्वप्रथम सन् 1654 में अपने सेनापति खलील उल्ला खां को जिसने सरमूर रियासत के शासक राजा सुभक प्रकाश की सहायता से गढ़वाल के तत्कालीन शासक पीरथी शाह को परास्त कर उनको दिल्ली के मुगल दरबार का आधिपत्य स्वीकार करने को विवश किया।

मुगल सम्राट औरंगज़ेब ने सन् 1675 में गुरू राम राय के पिता गुरू हर राय को दिल्ली आने का आदेश निर्गत किया जिसका उन्होंने पालन नहीं किया। उनके पुत्र गुरू राम राय उनके स्थान पर उनका संदेश वाहक बन कर औरंगज़ेब के दरबार में दिल्ली में उपस्थित हुए अपने पिता की इच्छा के विरुद्ध उन्होंने दिल्ली में औरंगज़ेब को अपने चमत्कारी कारनामें दिखा कर मंत्र मुग्ध कर दिया जिससे क्रोधित होकर गुरू हर

राय ने गुरू राम राय के स्थान पर अपने छोटे पुत्र गुरू हर कृष्ण को अपना उत्तराधिकारी बना दिया। गुरू राम राय के औरंगज़ेब के दरबार में जाकर विनती करने पर मुग़ल सम्राट औरंगज़ेब ने उनको देहरादून में कुछ गांव जागीर के रूप में प्रदान किये जहां वह अपना शेष जीवन शान्तिपूर्वक व्यतीत कर सके। गुरू राम राय ने देहरादून आकर सन् 1699 में एक मकबरे की तर्ज़ पर एक भव्य मन्दिर का निर्माण कराया। इस ऐतिहासिक धार्मिक स्थल में उनकी समाधि बनी हुई है और अब यह झंडी बाबा के मठ के नाम से प्रसिद्ध है।

मुग़ल सम्राट औरंगज़ेब की सन् 1707 में मृत्यु के पश्चात भारत में मुग़ल साम्राज्य का तीव्र गति के साथ पतन प्रारम्भ हुआ और धीरे धीरे सम्पूर्ण देश में अंग्रेज़ों का वर्चस्व बढ़ने लगा और वह एक के बाद एक क्षेत्रों पर अपना क्रमवार प्रभुत्व स्थापित करने लगे। गढ़वाल के शासक राजा पीरथी शाह की मृत्यु के पश्चात उसका पुत्र मेदनी शाह राज सिंहासन पर विराजमान हुआ जिसकी मृत्यु के पश्चात उसका पुत्र फ़तेह शाह शासक बना जिसने देहरादून में राजपूतों और गूजरों को बसाना प्रारम्भ किया। फतेहशाह की सन् 1772 में मृत्यु के पश्चात उसका पुत्र ललाट शाह शासक बना जिसके पश्चात उसका पुत्र प्रद्युमन शाह गढ़वाल का राजा बना।

प्रद्युमन शाह के शासन काल में देहरादून की खुशहाली और विकास से आकर्षित होकर सन् 1757 में सहारनपुर के तत्कालीन पठान सूबेदार नजीब–उद–दौला ने रोहिलों से मिलकर देहरादून पर आक्रमण कर दिया तथा वहां जम कर लूट पाट की और अनेक व्यक्तियों को मौत के घाट उतार दिया जिससे सारे नगर में दहशत का माहौल हो गया और हर तरफ़ वीरानगी छा गयी।

सूबेदार नजीब उद दौला के पौत्र गुलाम क़ादिर ने सन् 1786 में देहरादून पर दूसरा भीषण आक्रमण किया और वहां जम कर उत्पात मचाया तथा वहां के नागरिकों को अमानवीय यातनायें दीं जिससे काफ़ी बड़ी संख्या में वहां के निवासी अन्य सुरक्षित क्षेत्रों में पलायन कर गये।

गुलाम क़ादिर से शासन की बागडोर उम्मेद सिंह ने संभाली पर वह प्रद्युमन शाह के आधीन ही कार्य करता था जिसके शासन काल में सन् 1801 में नैपाल के गोरखों ने आक्रमण करके देहरादून तथा सम्पूर्ण तरायी के इलाके को अपने कब्ज़े में ले लिया। ईस्ट इण्डिया कम्पनी के तत्कालीन गर्वनर जनरल लार्ड मिन्टो ने नेपाल नरेश को चेतावनी दी कि वह तुरन्त इस क्षेत्र को अपने क़ब्ज़े से मुक्त करें पर जब उनकी इस चेतावनी का कोई प्रभाव नहीं हुआ तो लार्ड हेस्टिंगस ने सन् 1814 में इस क्षेत्र को नैपाल से मुक्त कराने के लिये अंग्रेज़ी फौज भेजी। जनरल गिलिस्पी के नेतृत्व में अंग्रेज़ों की फौज ने 31 अक्टूबर सन् 1814 को इस सम्पूर्ण क्षेत्र को नैपाल के चंगुल से मुक्त कराया जिसमें स्वयं जनरल गिलिस्पी को अपने प्राणों का उत्सर्ग करना पड़ा। अंग्रेज़ों ने सन् 1815 में पुनः देहरादून, मसूरी, नैनीताल तथा आस पास के अन्य पहाड़ी क्षेत्रों पर अपना आधिपत्य जमा लिया।

पंडित केदार नारायण तंख़ा को ब्रिटिश शासन काल में सन् 1845 के आस पास देहरादून का तहसीलदार बनाया गया था। आपके चार पुत्र राम नारायण राज नारायण, आनन्द नारायण तथा सूरज नारायण थे। पंडित आनन्द नारायण तंख़ा का जन्म विश्वस्त सूत्रों से प्राप्त की गयी जानकारी के अनुसार सन् 1859 के आस पास लखनऊ की रानी कटरे में स्थित अपनी पैतृक हवेली में हुआ था। आपकी उर्दू तथा फ़ारसी की शिक्षा वहीं एक निकट के मकतब में कुशल तथा अनुभवी मौलवियों की देखरेख में सम्पन्न हुई आपने फिर उच्च शिक्षा के लिये लखनऊ के प्रतिष्ठित कैनिंग कालेज में प्रवेश लिया जहां से आपने एफ0ए0 की परीक्षा उत्तीर्ण की जो उस समय तक कलकत्ता विश्वविद्यालय से सम्बद्ध था आप फिर उच्च न्यायालय द्वारा संचालित वकालत करने की परीक्षा में बैठे जैसा उस समय तक प्राविधान था और उस परीक्षा को उत्तीर्ण करने के पश्चात वकील बन गये।

पंडित आनन्द नारायण तंखा ने उस समय की परिस्थितियों का आंकलन करने के पश्चात लखनऊ के स्थान पर देहरादून में वकालत

करना कुछ अधिक उचित समझा और आप लखनऊ से पलायन करके अपने परिवार सहित देहरादून चले गये जहां आपने अपने परिजनों के आवास के लिये वहां के मुख्य बाज़ार में एक हलब कोठी का निर्माण कराया। इस पूरे क्षेत्र का नाम बाद में आपके सम्मान में आनन्द चौक रख दिया गया।

पंडित आनन्द नारायण तंखा ने बहुत शीघ्र अपनी विलक्षण बुद्धि तथा कठोर परिश्रम द्वारा अपने को देहरादून के एक प्रतिष्ठित वकील के रूप में स्थापित कर लिया। आप नगर की सामाजिक तथा सांस्कृतिक गतिविधियों में भी खुल कर भाग लेने लगे जिसके कारण आपने सम्पूर्ण नगर में लोक प्रियता प्राप्त की और आम जनता से मान–सम्मान पाया। आप जब भी अपनी दो घोड़ों की बग्घी पर राजसी ठाट–बाट के साथ नगर का भ्रमण करने के लिये मुख्य बाज़ार से होकर निकलते थे तो सड़क के दोनों तरफ़ के दुकानदार खड़े होकर आपको नतमस्तक होकर प्रणाम करते थे और पुष्प वर्षा करके आपका अभिवादन करते थे जो स्वयं उनके आपके प्रति प्रेम और आदर को दर्शाता है।

यद्यपि पंडित आनन्द नारायण तंखा एक सरल स्वभाव के धर्म में अटूट आस्था रखने वाले व्यक्ति थे पर वेश भूषा के मामले में आप पाश्चात्य सभ्यता का एक प्रतीक थे आप सूट–बूट पहन कर कचहरी जाते थे और सदा अपने के चुस्त दुरूस्त रखने में विश्वास रखते थे। आप मानवता के पुजारी होने के कारण हर व्यक्ति से बड़ी आत्मीयता के साथ मिलते थे और उसकी किसी भी समस्या के समाधान के लिये हर प्रकार का कार्य करने के लिये सदा तत्पर रहते थे आप वास्तव में एक सच्चे समाज सेवी थे जिनका ध्येय समाज में व्याप्त कुरीतियों को समाप्त कर उसको समरसता पूर्वक प्रगति के पथ पर अग्रसर करना था जिसमें वर्ग भेद के लिये कोई स्थान न हो।

पंडित आनन्द नारायण तंखा हिन्दू धर्म के कट्टर अनुयायी थे और पूजा–अर्चना करना आपका नित्य क्रम था। आप नियमित रूप से देहरादून के रेलवे स्टेशन पर जाते थे और आपको जो भी साधू, संत या

महात्मा वहां रेलगाड़ी से उतरता हुआ दिखता था आप तुरन्त उसको अपने आवास में अपने साथ ले आते थे और बड़ी श्रद्धापूर्वक उसका आदर सत्कार करके फिर उसे पूरे भक्ति भाव से देहरादून से विदा करते थे। यह कार्य आपके जीवन का एक महत्वपूर्ण अंग बन गया था। एक बार इसी प्रकार आप देहरादून के रेलवे स्टेशन से एक ओजस्वी साधु को अपने घर ले आये और उसका बड़ी निष्ठापूर्वक आदर सत्कार किया तथा भोजन ग्रहण करने की प्रार्थना की। आपको उस महात्मा से वार्तालाप करते समय जब यह ज्ञात हुआ कि यह तो स्वामी विवेकानन्द हैं तो आपके आनन्द की कोई सीमा नहीं रही और आपने आत्म विभोर होकर उनके चरण स्पर्श किये और उनसे अपनी धूर्तता के लिये क्षमा याचना की तथा बाद में बहुत ही सम्मान पूर्वक उनको देहरादून से विदा किया। स्वामी विवेकानन्द ने स्वयं इस घटना का उल्लेख अपनी पुस्तक में किया है। स्वामी विवेकानन्द ने सन् 1893 में अमरीका के शिकागो नगर में आयोजित "विश्व धर्म संसद" में हिन्दू धर्म की श्रेष्ठता साबित कर यह सिद्ध कर दिया कि सारे संसार में केवल यही एक ऐसा धर्म है जो सारे धर्मों को अपने भीतर समाहित करने की क्षमता रखता है। आप भारतीय आध्यात्म के अन्तिम और विश्व आध्यात्म के प्रथम ऋषि थे। उन्होंने ही प्रथम बार विश्व को संदेश दिया कि भारतवर्ष वास्तव में धर्म और मानवीय चेतना सम्पन्न राष्ट्र है जिसके पास सम्पूर्ण विश्व का मार्ग दर्शन करने की अदभुत क्षमता है।

पंडित आनन्द नारायण तंखा देहरादून की अनेक धार्मिक संस्थाओं से सक्रिय रूप से जुड़े हुऐ थे और विभिन्न धार्मिक अनुष्ठानों में खुल कर दान–दक्षिणा देते थे आप देहरादून के एतिहासिक झंडी बाबा मठ के ट्रस्ट के एक लम्बे समय तक उपाध्यक्ष रहे और उसके कार्य कलापों में सक्रिय रूप से भाग लेते रहे। आप नगर की अनेक शिक्षण संस्थाओं के प्रबंधक मण्डल के सम्मानित सदस्य रहे और शिक्षा के विकास के क्षेत्र में आपने अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। आपने देहरादून नगर के विकास में भी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभायी तथा वहां उचित नागरिक सुविधायें प्रदान करने के लिये एक रूपरेखा तैयार की। आप एक प्रकार से सम्पूर्ण

देहरादून नगर के महानायक थे जिनके द्वारा सम्पादित किये गये हर कार्य का वर्णन कर पाना कदाचित सम्भव नहीं।

पंडित आनन्द नारायण तंखा का विवाह सन् 1875 के आस पास सुश्री लाडो रानी आग़ा के साथ सम्पन्न हुआ था जो इलाहाबाद के निवासी पंडित सूरज नाथ आग़ा के वंश की एक सदस्या थीं। इस दम्पति के तीन पुत्र त्रिजुगी नारायण, प्रकाश नारायण और मनमोहन नारायण थे। पंडित आनन्द नारायण तंखा के ज्येष्ठ पुत्र पंडित त्रिजुगी नारायण तंखा का विवाह जोधपुर रियासत के निवासी पंडित ब्रिज कृष्ण वातल की सुपुत्री चैनजी के साथ सम्पन्न हुआ था। इस दम्पति के दो पुत्र कैलास नारायण तथा विष्णु नारायण और तीन पुत्रियां ब्रिज कुमारी, कुक्कू और उम्मी थीं। पंडित कैलास नारायण तंखा का विवाह लखनऊ के निवासी पंडित कुंवर कृष्ण गंजू की सुपुत्री शीला के साथ, पंडित विष्णु नारायण तंखा का विवाह आगरा के निवासी पंडित जगत नारायण रैना की सुपुत्री माला के साथ तथा ब्रिज कुमारी का विवाह लाहौर के निवासी राजा हरि कृष्ण कौल के सुपुत्र महेन्द्र नाथ कौल के साथ सम्पन्न हुआ था। पंडित आनन्द नारायण तंखा के दूसरे पुत्र पंडित प्रकाश नारायण तंखा स्वभाव से अधिक रूपये व्यय करने के कारण राजा प्रकाश के नाम से अधिक प्रसिद्ध थे। आपका विवाह लखनऊ के चौपटियां मुहल्ले की माउलाल की चढ़ाई के निवासी पंडित सूरज नारायण कौल सब जज की पौत्री तथा पंडित राजेन्द्र नारायण कौल की पुत्री सुश्री गोलाजी के साथ सम्पन्न हुआ था। पंडित प्रकाश नारायण तंखा के तीन पुत्र ऋषि नारायण, माहेश्वर नारायण तथा बद्री नारायण और एक पुत्री श्याम कुमारी (शम्मन) हैं जिनका विवाह गाज़ियाबाद के निवासी पंडित हरि प्रसाद कौल के साथ सम्पन्न हुआ है। पंडित आनन्द नारायण तंखा के सबसे छोटे पुत्र पंडित मनमोहन नारायण तंखा ने दो विवाह किये थे। आपकी पहली पत्नी जयपुर के प्रसिद्ध अटल परिवार की एक कन्या थीं जिनसे आपको दो पुत्र जगत नारायण और श्याम नारायण तथा एक पुत्री किशन थीं। पंडित श्याम नारायण तंखा आजकल अपने पुत्र अशोक तंखा जिनका विवाह आशा काटजू के साथ

सम्पन्न हुआ है के पास अमरीका में रहते हैं।

पंडित मनमोहन नारायण तंख़ा का पहली पत्नी की युवावस्था में आकस्मिक मृत्यु हो जाने के पश्चात दूसरा विवाह लखनऊ के रानी कटरा मुहल्ले के निवासी पंडित श्याम बिहारी किम्मू की सुपुत्री कमला के साथ सम्पन्न हुआ था। जिनसे आपके दो पुत्र हरि नारायण और रवि नारायण तथा एक पुत्री रमोला है जिनका विवाह पंडित सुशील कुमार मुटटू के साथ सम्पन्न हुआ है। पंडित हरि नारायण तंख़ा का विवाह लखनऊ के कश्मीरी मोहल्ले के निवासी पंडित नन्द लाल हुक्कू की सुपुत्री शान्ति के साथ तथा पंडित रवि नारायण तंख़ा का विवाह ग्वालियर रियासत के निवासी पंडित ब्रिज मोहन लाल काचर की सुपुत्री किरन के साथ सम्पन्न हुआ है।

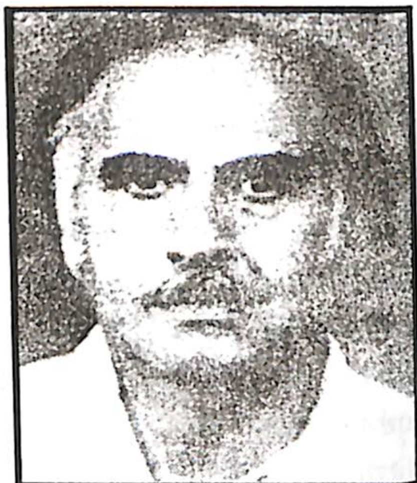
पंडित आनन्द नारायण तंख़ा एक सच्चे साधक और कर्मयोगी थे। जिन्होंने समाज में उन मानवीय मूल्यों को स्थापित किया जो सम्भवतः हर व्यक्ति के लिये कर पाना बहुत कठिन है। आपने अपने लम्बे संघर्षमय जीवन में अनेक चुनौतियों और विषम परिस्थितियों का डट कर साहस पूर्वक सामना किया तथा कभी भी निराशा को अपने निकट नहीं आने दिया। आप एक आशावादी व्यक्ति थे जिसने स्वाभिमान के साथ जीने का सबको पाठ पढ़ाया तथा कभी अपने जीवन में अपने मूल्यों और आदर्शों के साथ किसी प्रकार का समझौता नहीं किया। आपका लगभग 70 वर्ष की आयु में सन् 1930 के आस पास निधन हो गया। आपका व्यक्तित्व तथा कृतित्व आने वाली पीढ़ियों को सदैव प्रेरणा प्रदान करता रहेगा। हिन्दी के कवि नरेन्द्र स्वरूप ने इस सम्बन्ध में अपनी व्यथा कुछ इस प्रकार प्रकट की है।

''आज हर जीवन भिखारी की दुआ है
भावना हर एक पिजड़े का सुआ है।
बिम्ब, प्रतिबिम्बों में इतने उलझ गये हम
कि यह न समझे कि हर व्यक्ति निर्वासित हुआ है''

कश्मीरी भाषा के शेक्सपियर

पंडित दीना नाथ कौल

"नादिम"



यद्यपि कश्मीर प्रचीन काल से एक प्रमुख शिक्षा का केन्द्र रहा है पर एक उपयुक्त लिपि के अभाव में कश्मीरी भाषा केवल मौखिक परम्परा के आधार पर ही जीवित रहीं इस कारण उसमें साहित्य लेखन का समुचित विकास सम्भव नहीं हो सका और वह एक लम्बे समय तक केवल बोलचाल की भाषा के रूप में ही जानी जाती रही। कश्मीर में हिन्दू शासन काल में संस्कृत भाषा का वर्चस्व रहा। जिसका स्थान सुलतानों के शासन काल में फ़ारसी भाषा ने ले लिया तथा बाद में कश्मीर घाटी में पठन–पाठन में उर्दू भाषा को वरीयता दी जाने लगी। कश्मीरी भाषा में गद्य लेखन की परम्परा के बारे में किसी को कोई विशेष जानकारी नहीं थी। कश्मीरी भाषा में केवल पद्य लेखन को ही अधिक महत्व दिया गया और उसकी भी मौखिक परम्परा को और अधिक महत्व दिया गया। जिसमें गुरू अपने शिष्य को अधिकतर पद्यों को कंठस्त कराने पर अधिक बल देते थे। जिसके कारण उचित लेखनी का विकास सम्भव नहीं हो सका। लल द्यद को कश्मीरी भाषा की प्रथम कवयित्री माना जाता है पर उनके द्वारा रचित वाखों को उन्होने स्वंय नहीं लिखा परन्तु अन्य व्यक्तियों ने उनको संग्रहित कर लिपि बद्ध किया।

जिस व्यक्ति ने कश्मीरी भाषा को वास्तव में एक भाषा का स्वरूप अपनी कठोर साधना और तपस्या के बल पर प्रदान किया वह थे पंडित दीना नाथ कौल **नादिम** जिनको आधुनिक कश्मीरी भाषा का प्रवर्तक या युग पुरूष कहा जाता है जिन्होंने भाषा के शिल्प तथा नये–नये शब्दों को गढ़ कर उसको समृद्ध कर तर्कसंगत बनाया और कश्मीरी भाषा के लेखन को एक नयी गति प्रदान की। आपने कश्मीरी भाषा में एक नयी शक्ति का संचार कर उसमें एक नवीन चेतना का सूत्रपात किया। पंडित दीना नाथ कौल **नादिम** का कश्मीरी भाषा में वही स्थान है जो रूसी भाषा में माईकोवास्की, बंगला भाषा में काज़ी नज़रूल इस्लाम और सुकान्त भट्टाचार्य, तेलगु भाषा में श्री, स्पाहनी भाषा में पाब्लो नेरूदा, उर्दू भाषा में **जोश** और **फैज़**, मलयालम भाषा में वल्लत्तोल तथा हिन्दी भाषा में निराला और मुक्तिबोध रखते हैं। पंडित दीना नाथ कौल **नादिम** गद्य कार के साथ–साथ एक स्वछन्द विद्रोही कवि थे जिन्होंने कविता को जनोन्मुख बनाया।

पंडित दीना नाथ कौल नादिम के पूर्वज पंडित राज कौल कश्मीर घाटी के श्रीनगर जनपद के हब्बा कदल क्षेत्र में पुरूषयार मुहल्ले में निवास करते थे। आपके पुत्र का नाम पंडित लस कौल था जिनका विवाह सुश्री राजरानी के साथ सम्पन्न हुआ था। इस दम्पति के पुत्र का नाम पंडित शंकर कौल था जो अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात रियासत के वन विभाग में महाराजा प्रताप सिंह (1885–1925) के शासन काल में एक लिपिक के पद पर नियुक्त हो गये थे। आपका विवाह फुलवामा जिले के मुरान गांव के निवासी कवि पंडित विष्णु भट की सुपुत्री सुखमाली के साथ सम्पन्न हुआ था। इस दम्पति की छः सन्ताने हुई जिनमें दो पुत्र और दो पुत्रियों की अल्प आयु में मृत्यु हो गयी। आपके केवल एक पुत्र दीना नाथ तथा एक पुत्री चन्दा जीवित रहीं। चन्दा की भी अल्प आयु में विवाह के पश्चात मृत्यु हो गयी।

पंडित दीना नाथ कौल नादिम का जन्म 18 मार्च सन् 1916 को

अपने पैतृक आवास में हुआ। जब आप केवल 6 वर्ष की आयु के थे तो आपके पिता पंडित शंकर कौल की सन् 1922 में मृत्यु हो गयी जिसके कारण आपके परिवार की आर्थिक स्थिति काफ़ी दयनीय हो गयी और आपके निकट के सम्बन्धी भी आपका तिरस्कार करने लगें और आपसे मिलने से कतराने लगे। परिवार की इस आर्थिक दुर्बलता तथा अभावग्रस्त वातावरण के कारण आपके चार भाई–बहनों की काफी अल्प आयु में मृत्यु हो गयी। आपकी मां सुखमाली एक कुशल ग्रहणी थीं पर शिक्षित नहीं थी। वह किसी प्रकार परिश्रम करके चरखें पर सूत कात कर परिवार का खर्च चलाती थीं। ऐसे वातावरण में रियासत की सांमतवादी परम्परा के विरूद्ध आपके हृदय में ज्वाला का धधकना स्वभाविक था जिसने आपकी अन्तरआत्मा तक को कचोट कर रख दिया हो। आपने स्वयं बाद में रियासत में सन् 1920 के आसपास कश्मीरी पंडितों की आर्थिक दशा का बड़ा सटीक और मार्मिक चित्रण किया है। आपके अनुसार एक मुहल्ले में केवल एक कश्मीरी पंडित के पास किसी समारोह या उत्सव में जाने के लिये पहनने को उचित वस्त्र हुआ करते थे अन्य कश्मीरी पंडित ऐसे अवसरों पर उससे वस्त्र मांग कर अपना काम चलाते थे जो स्वयं इस बात का सूचक है कि वहां की सामाजिक स्थिति क्या थी।

पंडित दीना नाथ कौल **नादिम** ने श्रीनगर के बाग दिलावर खां में स्थित गवर्मेन्ट हाई स्कूल से सन् 1929 में अपनी किसी प्रकार मैट्रिकुलेशन की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण कीं और आपको 250/– रुपये की छात्रवृत्ति मिली पर आर्थिक स्थिति के कारण आपको अपनी शिक्षा का परित्याग करने को बाध्य होना पड़ा और आप महात्मा गांधी के विचारों से प्रेरित होकर देश के स्वतंत्रता आन्दोलन में सक्रिय रूप से भाग लेने लगे।

आप अपने बाल्यकाल से ही क्रान्तकारी भगत सिंह की विचारधारा से बहुत अधिक प्रभावित थे और उसको अपना नायक मानते थे। आपके ऊपर भगत सिंह के व्यक्तित्व का इतना अधिक प्रभाव पड़ा कि आपने उसी की तर्ज पर अपने कालेज के परिसर में बम विस्फोट कर दिया और

क्रान्तिकारियों द्वारा अंग्रेज़ों के विरूद्ध चलाये जा रहे भूमिगत आन्दोलन में सक्रिय रूप से भाग लेने लगे। आपको सन् 1938 में शेख मोहम्मद अब्दुल्ला के साथ महाराजा हरि सिंह की सांमतवादी नीतियों के विरूद्ध आन्दोलन करने के लिये गिरफ़तार करके जेल में नज़र बन्द कर दिया गया। इसके पूर्व आप कुछं समंय के लिये अपनी मां के साथ कश्मीर से पलायन करके जम्मू चले गये थे जहां आपने गांधी मेमोरियल हाई स्कूल की स्थापना में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभायी।

पंडित दीना नाथ कौल **नादिम** ने सन् 1940 में सनातन धर्म हाई स्कूल नाम से एक व्यक्तिगत शिक्षण संस्था की आधारशिला शीतलनाथ में रखीं जिसकी बहुत शीघ्र सात अन्य शाखायें नगर के विभिन्न क्षेत्रों में स्थापित हो गयीं। इसके पूर्व आपने सन् 1934 में सिटी एकेडमी नाम से एक कोचिंग संस्था स्थापित की।

पंडित दीना नाथ कौल ''नादिम'' ने जेल से रिहा होने के पश्चात अपनी शिक्षा का क्रम जारी रखने के लिये सन् 1940 में श्री प्रताप कालेज में प्रवेश लिया जहां से आपने अपनी एफ0ए0 की परीक्षा सन् 1942 में उत्तीर्ण की। इसी वर्ष आपकी मां के आग्रह पर आपका विवाह पद्मिनी (धनवती) के साथ सम्पन्न हुआ जो पंडित श्रीकंठ कौल और श्रीमती पोशिकुज कौल की सुपुत्री थीं। पंडित श्रीकंठ कौल रियासत के वन विभाग में हेड क्लर्क थे।

नादिम ने विवाह के पश्चात सन् 1944 में श्री प्रताप कालेज से बी0ए0 की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की और पूरे पंजाब विश्वविद्यालय में प्रथम स्थान प्राप्त किया पर रियासत के तत्कालीन शिक्षा निदेशक सय्यदैन से झड़प और व्यक्तिगत मतभेद हो जाने के कारण आपको घाटी से लाहौर पलायन करना पड़ा और वहां डी0ए0वी0 कालेज में अध्यापन का कार्य करना पड़ा। आप वहां के दैनिक ''प्रताप'' से भी सम्बद्ध रहे। देश के सन् 1947 में विभाजन के पश्चात आप पुनः कश्मीर वापस आ गये और करन नगर में रहने लगे।

पंडित दीना नाथ कौल **नादिम** अपने बाल्यकाल से ही गहरी देशभक्ति और आपसी भाई चारे की भावनाओं से प्रभावित और प्रेरित थे। जब आपने अपनी युवावस्था में पदापर्ण किया तो आपको अपने चारों ओर के वातावरण में एक अजीब सी टीस का अनुभव हुआ। आपने एक ऐसे समाज के आर्थिक ढांचे को देखा जिसमें एक विशाल जन समुदाय को बिल्कुल निकृष्ट जीवन व्यतीत करना पड़ रहा था वहीं कुछ आर्थिक रूप से सम्पन्न वर्ग हर प्रकार के सन–साधनों का जमकर उपयोग कर रहा था और हर प्रकार की मौज मस्ती का भरपूर आनन्द ले रहा था। इस कसक ने आपके भीतर विद्रोह करने की ज्वाला को भड़काया और आपका स्वभाव एक क्रान्तकारी सा हो गया और फिर जब शहीद भगत सिंह जैसे देशभक्त के सहयोगी कामरेड धन्वन्तरि से आप की भेंट हुई तो उसने सोने पे सुहागा वाला कार्य किया और आपकी समाजवाद के प्रति आस्था जागृत हुई।

आपको साहित्य सृजन करने की प्रेरणा एक प्रकार से अपनी माँ से विरासत के रूप में प्राप्त हुई जो आपको बाल्यकाल में सोते समय लल द्यद के **वारव** और नन्द **ऋृषि** के **श्लोक** लोरी के रूप में नित्य सुनाया करती थीं। जब आप केवल 17 वर्ष की आयु के थे तो आपको अंग्रेजी भाषा का **poet** बनने की प्रबल इच्छा जागृत हुई और आपने अंग्रेजी में कुछ **poems** लिखीं। आपकी अंग्रेजी में एक **poem "The Dawn"** शीर्षक से प्रकाशित भी हुई पर पंडित बृज नारायण चकबस्त, अल्लामा इक़बाल तथा एहसान बिन दानिश जैसे इनकिलाबी शायरों को पढ़ने के पश्चात आपका झुकाव उर्दू की शायरी के प्रति हो गया और आप ''**नादिम**'' तखल्लुस से अपने शेर कलमबन्द करने लगे। जब विनायक दामोदर सरवरकर ने सन् 1942–43 में कश्मीर की यात्रा की तो हिन्दू हाई स्कूल के छात्रों ने हजूरी बाग (इक़बाल पार्क) में आयोजितं उनके स्वागत समारोह में नादिम द्वारा रचित उर्दू की निम्नलिखित नज़्म पढ़ी।

''धरम रक्षक देश के भगवान हो

वीर तुम हम प्राणियों के प्राण हो
भाग्य जागे, आज जो तुम आ गये
नैन खोई रोशनी फिर पा गये
क्यों न फिर घर की अनोखी शाम हो
जबकी घर में देवता मेहमान हो''

उस समय नादिम की रचनाऐं श्रीप्रताप कालेज की पत्रिका **''प्रताप''** में नियमित रूप से प्रकाशित होनी प्रारम्भ हो गयी थीं जो रियासत के साहित्यक क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण स्थान रखती थीं। आपके द्वारा उर्दू में कही गयी एक बन्दिश उदाहरण के लिये प्रस्तुत है।

''शफ़क मौसमें गुल घटा और जवानी
हसीनों के जीवन की रंगीन कहानी
सुराही का नगमा सुबू की रवानी
है साकी मुझ पर बड़ी मेहरबानी
मज़ा पी पी के लिये जा रहा हूँ
पीये जा रहा हूँ पीये जा रहा हूँ।''

आपको कुछ ऐसा प्रतीत हुआ कि उर्दू भाषा के माध्यम से कदाचित आप अपने भीतर की तड़प और बेचैनी को उचित प्रकार से प्रकट करने में समर्थ नहीं हो पा रहें हैं क्योंकि हर भाषा की अपनी मान्यताऐं और सीमायें होती हैं अतः आपने सन् 1946 से अपनी भावनाओं को प्रकट करने के लिये अपनी मातृभाषा कश्मीरी को माध्यम बनाया तथा अपने भावों के अनुरूप नये नये शब्दों तथा भाषा की व्याकरण की रचना की और कश्मीरी भाषा को समृद्ध कर उसे गतिशील बनाया आपने कश्मीरी भाषा में उन तत्वों का समावेश किया जिनका पहले न तो किसी को ज्ञान था और न ही किसी ने इस प्रकार के प्रयोगों को करने का कभी साहस किया था। जैसे सोनेट लिखना या स्वछन्द कविता करना इत्यादि। आपने कश्मीरी भाषा को एक प्रकार से फ़ारसी भाषा के प्रभाव से मुक्त कराया। जिसके शब्दों के स्थान पर आपने कश्मीरी शब्द उपयोग किये जो अपने आप में

आपका एक अनूठा प्रयोग था। आपने प्राचीन भाषा की परम्परा को नकारते हुए उसको एक नया गतिशील स्वरूप प्रदान किया और कथ्य के लिये नया शिल्प विकसित किया। नादिम द्वारा परम्परागत छन्दों की बन्दिश से मुक्त कश्मीरी कविता उदाहरण के लिये प्रस्तुत हैं।

बॅग्यव न अज़
गुलन तॅ बुलबलनं तॅ
मसवलन हुन्दुय खुमारॅ होत तॅ मार – मोत
मोदुर मोदुर तॅ न्यंदरिहोत
सु नग़्म कांह !
ति क्याज़ि अज़
गुबार गर्द जंगकिय
खटन छि रंग मसवलन.........................

(मैं आज गुलों–बुलबुलों के वे तराने नहीं गाऊंगा जो मुझे मीठी नींद सुलायें, क्योंकि युद्ध का गर्दो गुबार रूपसियों के रंग रूप को मटियामेट कर रहा है।)

नादिम की युवावस्था में कश्मीर को राजनैतिक, प्रशासनिक एंव सांस्कृतिक स्तर पर सक्रिय रूप से युद्धरत रहना पड़ा। ऐसे समय में युद्ध आह्वान एंव आक्रान्ता के विरूद्ध उदघोष अपरिहार्य था। यह घाटी में प्रथम अवसर था जब युद्ध मोर्चे की तर्ज पर सांस्कृतिक मोर्चे बन्दी की गयी जिसका नेतृत्व करते हुए नादिम ने कुछ इस प्रकार अपने भाव प्रकट किये –

बथुन छुम जंगुक साजो सामनॅ लॉगिथ
करॉनि गथ धरस पथ म्य पर्वान लॉगिथ
बॅ कौमी सिपाह छुस वतन छुम बचावुन

(मुझे युद्ध की साज सज्जा से सुसज्जित होकर उठना है पतंगा बन कर मुझे स्वदेश पर न्योछावर होना है। मैं राष्ट्र सैनिक हूँ। मुझे वतन की रक्षा करनी है।)

ऐसी देश भक्ति और देश प्रेम से ओत प्रोत कविताओं ने नादिम को आपार लोक प्रिय बना दिया। युवा वर्ग उनको अपना नायक, और पथ प्रदर्शक समझने लगा क्योंकि उसको इनकी रचनाओं में एक सुनहरे भाविष्य की आशा की किरण दिखलायी देने लगी। पर समय के साथ साथ परिस्थितियां बदलती हैं यह एक प्रकृति का नियम हैं और उसका प्रभाव निश्चित रूप से एक लेखक या कवि की रचनाओं में प्रकट होता है। नादिम के जीवन के दूसरे पड़ाव पर उनकी कृतियों मे यह गम्भीरता तथा संवेदनशीलता प्रस्फुटित होते हुए साफ़ परिलक्षित होती है। आपने शब्दों का ध्वनि के साथ तारतम्य बैठाने का अपनी कुछ रचनाओं में अनूठा प्रयोग किया है आपके द्वारा रचित निम्नलिखित पंक्तियां उसका एक उदाहरण प्रस्तुत करती हैं।

अगनॅ गगन गॉयि गगॅरायि
नबॅ तलॅ नॉर वुज़मलॅ द्रायि

नादिम ने अपनी क्रान्तिकारी रचनाओं के माध्यम से कश्मीर में एक नये युग का सूत्रपात किया। उनकी आवाज़ जब उभरी तो इस ज़ोर से उभरी कि उस आवाज़ की घन–गरज, नये पन और नये अन्दाज़ के सामने सारी पुरानी आवाज़े दब कर रह गयीं। वह कश्मीरी भाषा और साहित्य के पोषक तथा दीपक थे। उनकी कृतियां अपने माधुर्य तथा शैली के कारण एक अनमोल रत्न हैं। नादिम ने विश्व साहित्य की अनेक विधाओं का कश्मीरी साहित्य में समावेश कराकर उसे समलंकृत करके एक नया रूप प्रदान किया। उदाहरण के लिये नादिम द्वारा रचित प्रथम कश्मीरी सॉनेट की कुछ पंक्तियां प्रस्तुत हैं।

च्य छुय न लोल' म्याने याद तिम दोह
गिन्दान, ओस सोन यावुन चू रि चूरे
वुछान आ स्य अख आ' किस अेस्य दूरि दरे
करान आ'स्य काल'पगह च सेच बरान छोह
छनिथ पन प्यव वहारस लावि मूरे

मगर वुनि चोग लोलुक सानि ज़ूरे

आपकी मां श्रीमती सुखमाली कौल का सन् 1944 में निधन हो गया। जिससे आपको गहरा आघात लगा क्योंकि आप उनसे बहुत अधिक प्रेम करते थे और वह ही आपकी सहित्यिक चेतना की एक प्रमुख प्रेरणा का स्रोत थीं। चूंकि आप साम्यवादी विचार धारा के कट्टर समर्थक थे इस नाते आप सन् 1951 में विधिवत क़म्यूनिस्ट पार्टी की सदस्यता ग्रहण करके एक कामरेड बन गये और उसकी गतिविधियों में खुलकर भाग लेने लगे। अली मोहम्मद लोन, अमीन कामिल तथा गुलाम रसूल जैसे व्यक्ति आपके परम मित्रों में थे। आपने कम्यूनिस्ट पार्टी का एक सक्रिय सदस्य बन जाने के पश्चात सन 1952 में चीन का व्यापक भ्रमण किया जहां आप अफ्रीका और ऐशिया के देशों के पेंचिग में आयोजित शान्ति सम्मेलन में भाग लेने के लिये गये थे। आपने वहां की राजनीतिक तथा शिक्षा की प्रणाली का विस्तार से अध्ययन किया और उनकी कार्य करने की पद्धति को बारीकी से समझा ताकि उसका आप अपने जीवन में उपयोग कर सकें। सन् 1953 में कश्मीर में राजनीतिक स्थिरता हो जाने के पश्चात कवियों की विचारधारा में स्वाभाविक रूप से एक परिवर्तन आया। ओजस्वी लेखन के स्थान पर अब उनका ध्यान लाल्लयित चेतना पर केन्द्रित हुआ वह अपने काव्य को नई बिम्ब योजनाओं नई कल्पनाओं तथा उपमा प्रतीकों से संवारने लगे और अन्य कवियों जैसे रहमान राही, अमीन कामिल, गुलाम नबी फिराक, गुलाम रसूल संतोषी की भांति नादिम की कविता भी एक प्रयोगवादी चौराहे के मोड़ पर खड़ी हो गयी। ऐसे ही वातावरण में सन् 1953 में नादिम ने "बोम्बर योम्बरज़ल" नाम से कश्मीरी भाषा में प्रथम ओपरा की रचना की। जब सन् 1955 में तत्कालीन सोवियत संघ के दो महान नेता निकिता क्रुश्चेव तथा बुलगानिन कश्मीर पधारे तो उनके सम्मुख इस ओपरा का मंचन किया गया। वह इसके प्रदर्शन से इतने अधिक प्रसन्न और प्रभावित हुऐ कि उनके आग्रह पर बाद में इस ओपरा को रूसी भाषा में अनुदित कर मास्को में प्रदर्शित किया गया जहां

इसे दर्शकों ने बहुत सराहा। इस ओपरा के बोल बामरो–बामरो तथा धुन का बहुत ही सटीक और सुन्दर उपयोग फिल्म निर्माता यश चोपड़ा ने अपनी फिल्म ''मिशन कश्मीर'' में किया है। कश्मीरी कहानी को सुव्यवस्थित क्रमबद्ध विकास–पथ पर लाने का श्रेय भी नादिम को ही जाता है। इस ओपरा के सम्बन्ध में नादिम ने सोवियत संघ की यात्रा की। आपकी कश्मीरी भाषा में पहली कहानी **''जवाबी कार्ड''** सन् 1948 में कश्मीर रेडियो से प्रसारित की गई।

नादिम ने सन् 1957 में पंडित दुर्गा प्रसाद धर से प्रेरणा लेकर जम्मू–कश्मीर की विधान सभा का चुनाव टीचर्स निर्वाचन क्षेत्र से लड़ा और आप विधान सभा के सदस्य के रूप में निर्वाचित घोषित कर दिये गये। आप सन् 1962 तक जम्मू–कश्मीर की विधान सभा के एक सक्रिय सदस्य रहे और अनेक राजनीतिक गतिविधियों में जम कर भाग लेते रहे।

नादिम सन् 1963 से सन् 1965 तक श्रीनगर के लल द्यद मेमोरियल हायर सेकेण्ड्री स्कूल के प्राचार्य रहे। जिन उर्दू के शायरों ने आपको अधिक प्रभावित किया वह थे फ़ैज़ अहमद फैज़, अली सरदार जाफ़री और जोश मलिहाबादी जिनके प्रगतिशील विचारों की झलक आपकी रचनाओं में अधिकतर देखने को मिलती है। नादिम ने अपनी लम्बी साहित्यिक यात्रा में केवल उर्दू या कश्मीरी भाषा में ही नहीं लिखा अपितु हिन्दी भाषा में भी अपना महत्वपूर्ण योगदान किया है। उनकी ''कलिंग से राजघाट तक'' शीर्षक के अन्तर्गत हिन्दी में की गयी कविता को कुछ पंक्तियां उदाहरण के लिये प्रस्तुत है।

''वह देखो रात हो गयी
प्रकृति लाल रक्त पात की रूमाल मुंह पै डाल कर
निढाल सो गयी,
थिरक थिरक के बिजलियों ने, आंधियों ने भूमि
कम्पन ने कलिंग के विवश ललाट पर कथा लिखी
विजय की हार की कथा

मनुष्य के रूधिर से नहा
नहा के लाल रंग से
कलिंग के अबोध देश प्रेम को मरोड़ कर
कलिंग की कुमारी भावनाओं को भी तोड़ कर, अशोक ने।

नादिम द्वारा रचित एक दूसरी कविता का एक अंश प्रस्तुत है जिस में कवि ने ईश्वर के प्रति अपनी भावनाओं को बहुत ही सहज रूप में प्रकट किया है।

देव मेरे करूणा के सागर हैं मेरे सन्यासी
खोलो द्वार मुझे आने दो मन मन्दिर के वासी
बाहर उमड़ी उमड़ी आंधी भीतर दहके ज्वाला
धरती पर आकाश से उतरी आती है मधुशाला
छलक रही है नीरस जीवन में भक्ति की हाला
तड़प तड़प कर मुझको ढूंढे अखियां प्यासी प्यासी
खोलों द्वार मुझे आने दो मन मन्दिर के वासी

नादिम सन् 1948 में जम्मू–कश्मीर की प्रगतिशील लेखक संघ के सचिव रहे जिसके अन्य सक्रिय सदस्य थे, मेहजूर, आजाद, आरिफ़ और फ़ैज़ी। आप कश्मीरी भाषा की प्रथम मासिक पत्रिका "कौग पोश" के सन् 1948 से सन् 1957 तक सम्पादक रहे। आप घाटी के शिक्षकों की पत्रिका "उस्ताद" के सम्पादक रहे। आप कश्मीर शान्ति परिषद के सन् 1952 से सन् 1957 तक प्रधान सचिव रहे। आप कश्मीर की टीचर्स एसोसिएशन के सन् 1955 से सन् 1956 तक अध्यक्ष रहे, आप साहित्य अकादमी दिल्ली के सन् 1955 से सन् 1957 तक सदस्य रहे। आप जम्मू–कश्मीर की राष्ट्र भाषा प्रचार समिति के परामर्शदाता मण्डल के सन् 1956 से सन् 1974 तक सदस्य रहे, आप आकाशवाणी कश्मीर के परामर्शदाता मण्डल के सन् 1960 से सदस्य रहे, आप कश्मीर नेशनल थियेटर के सन् 1910 से अध्यक्ष रहे, आप जम्मू–कश्मीर अकादमी आफ आर्ट, कल्चर एण्ड लैगुऐजेस

के सदस्य रहे।

नादिम एक लम्बे कद वाले हंसमुख व्यक्ति थे। उनका स्वस्थ तथा गठा हुआ शरीर सबको आकर्षित करता था। आप स्वभाव से एकदम फक्कड़ तथा मस्त मौला व्यक्ति थे आप अपनी कवितायें काग़ज़ की पुर्ची पर लिख कर उनको अपने कमरे के फ़र्श पर पड़ी चटाई के नीचे रख दिया करते थे इस नाते काफ़ी लम्बे समय तक आपकी कोई भी कृति पुस्तकाकार रूप में नहीं प्रकाशित हो सकी। प्रो0 चमन लाल सप्रू के अथक प्रयासों से सर्व प्रथम आपकी रचनाओं का संग्रह सन् 1985 में दीनानाथ नादिम अभिनन्दन ग्रन्थ के रूप में प्रकाशित होना सम्भव हो सका। आपसे एक कश्मीरी मुस्लिम युवती को बेहद प्रेम हो गया था जिसने आपसे पाकिस्तान जाकर निकाह करने का प्रस्ताव भी किया पर आपने उसको अस्वीकार कर दिया।

नादिम को उनकी अभूतपूर्व साहित्य सेवा के लिये सन् 1971 में डॉ0 कर्ण सिंह ने उनको सोवियत लैण्ड नेहरू अवार्ड से सम्मानित किया। नादिम को सन् 1974 में जम्मू–कश्मीर अकादमी ऑफ आर्ट, कल्चर एण्ड लैंगवेजेस ने सम्मानित किया। आपको राष्ट्रपति ज्ञानी ज़ैल सिंह द्वारा सन् 1985 में प्रथम कल्हण अवार्ड से सम्मानित किया गया तथा सन् 1986 में आपको आपकी 300 कविताओं के काव्य संग्रह ''शिहिल्य कुल'' (पेड़–छायादार) के लिये साहित्य अकादमी पुरूस्कार से सम्मानित किया गया। जिसका प्रकाशन भी प्रो0 चमन लाल सप्रू के अथक प्रयासों से पद्मश्री मोती लाल ''साक़ी'' के संरक्षण में सम्भव हो सका। आप अपनी कृतियों के प्रकाशन के अभाव में ज्ञानपीठ पुरूस्कार से वंचित रह गये क्योंकि इस पुरूस्कार को मरणोपरान्त देने का कोई प्राविधान नहीं है।

नादिम सन् 1985 में पक्षाघात हो जाने के कारण अस्वस्थ रहने लगे थे और उनका जीवन उतना क्रिया शील नहीं रह गया था। यह मां सरस्वती का महान उपासक तथा कश्मीरी भाषा का युग प्रवर्तक 7 अप्रैल सन् 1988 को लगभग 72 वर्ष की आयु में इस संसार से विदा हो गया।

उनकी पत्नी उनका वियोग सह न सकीं और लगभग 6 माह पश्चात उनकी भी मृत्यु हो गयी। नादिम के पुत्र शान्ति कुमार कौल और क्रान्तिवीर कौल आजकल नोयडा में रहते हैं। नादिम की दो पुत्रियों सरोजिनी तथा सुभाषिनी का विवाह हो चुका है। उनकी तीसरी पुत्री पंचशील अविवाहित हैं। नादिम आधुनिक युग के सबसे सचेत और ओजस्वी कवि थे। जिनकी कृतियां विश्व के उच्च कोटि के साहित्य में सगर्व सम्मिलित करने योग्य हैं। जिसके लिये नादिम का नाम सदैव स्मरण किया जायेगा। इसी सम्बन्ध में हिन्दी के एक लोकप्रिय कवि मधुप पाण्डे ने अपने उदगार कुछ इस प्रकार प्रकट किये हैं।

तुम्हारी याद अक्सर चित्र मन पर खींच जाती है।
उभर कर बूंद आंसू की नयन को सींच जाती है।
तुम्हारी याद में और नींद में है दुश्मनी इतनी।
उधर से याद आती है इधर से नींद जाती है।।



भारतीय संसदीय प्रणाली के सूत्रधार

पंडित श्याम लाल शकधर



भारत की संसद की कहानी बड़ी रोचक और प्रभावशाली है। यों तो हमारा देश 15 अगस्त सन् 1947 को विदेशी शासन तंत्र से मुक्त होकर एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में विश्व के मानचित्र पर उभरा परन्तु भारत की पहली संसद का गठन 26 जनवरी सन् 1950 को हुआ। जब एक स्वतंत्र देश का संविधान लागू हुआ और भारत एक लोकतंत्रात्मक गणराज्य बना परन्तु यह एक अस्थायी संसद थी। संविधान के अन्तगर्त विधिवत प्रथम निर्वाचन सन् 1952 में हुए जिनके आधार पर द्विसदनीय संसद बनी, अर्थात दो भिन्न सदन लोक सभा तथा राज्य सभा। प्रथम लोक सभा का विधिवत गठन 17 अप्रैल सन् 1952 को हुआ जिसका अध्यक्ष जी. वी. मावलंकर को 15 मई 1952 को चुना गया।

जिसको आज हम संसद भवन के नाम से जानते हैं यह भवन ब्रिटिश शासन काल में सेन्ट्रेंल ऐसेम्बली के नाम से जाना जाता था। लाल पत्थरों की चारदीवारी और 12 विशाल लौहद्वारों से सुरक्षित यह भवन भारत की पारम्परिक वास्तुकला का एक अनूठा नमूना है जहां लोक सभा और राज्य सभा के अब महत्वपूर्ण सत्र सम्पन्न होतें हैं जिसकी एक एक ईंट भारत के सम्पूर्ण लोकतांत्रिक इतिहास की एक मूक गवाह है।

नयी दिल्ली के योजनाकार सर एडविन ल्यूटिंस और सर हरबर्ड बेकर जैसे महान वास्तुकारों ने एस ऐतिहासिक भवन की रूप रेखा तैयार

की थी जिसकी आधारशिला ड्यूक ऑफ कनॉट ने 12 फरवरी सन् 1921 को रखीं और लगभग 6 वर्ष पश्चात 18 जनवरी सन् 1927 को भारत के तत्कालीन गर्वनर जनरल लार्ड इरविन ने इस भव्य भवन का उद्घाटन किया जिसके निर्माण में तब लगभग 83 लाख रूपये व्यय किये गये थे। लगभग 6 एकड़ भूमि में फैली हुई यह इमारत एक विशाल गोलाकार महल के रूप में बनाई गयी है। भारत के स्वतंत्र होने के पश्चात इस सेन्ट्रल ऐसेम्बली का नाम परिवर्तित कर संसद भवन रख दिया गया। इस ऐतिहासिक संसद भवन तथा देश की संसदीय प्रणाली को सुचारू रूप से चलाने के लिये जिस व्यक्ति ने नियमों और प्रविधानों का इसके प्रारम्भिक दौर में सूत्रपात किया तथा एक नीवं के पत्थर के समान निष्ठापूर्वक कार्य किया उसका नाम था पंडित श्याम लाल शकधर जिनके देश के प्रति इस महत्वपूर्ण योगदान को सदा स्मरण किया जायेगा।

पंड़ित श्याम लाल शकधर का जन्म 1 नवम्बर सन् 1918 को कश्मीर घाटी के श्रीनगर जनपद के गनख़ान मुहल्ले में स्थित अपने पैतृक आवास में हुआ था। आपके पिता का नाम पंडित केशव राम शकधर तथा माता का नाम रूकमणि था। कश्मीर घाटी में सांमतवादी काल में वहां के बड़े–बड़े ज़मीनदार अपने बाग–बगीचों तथा खेतों की उचित निगरानी के लिये जिन व्यक्तियों को नियुक्त करते थे उनको शकधर कहा जाता था। इससे इस बात का आभास होता है कि आपके पूर्वज कदाचित महाराजा प्रतापसिंह (1885–1925) के शासन काल में इस पद पर नियुक्त होंगे। इस नाते वह अपना कुलनाम शकधर लिखने लगे।

पंडित श्याम लाल शकधर अपने माता पिता की छः सन्तानों पांच पुत्र तथा एक पुत्री में सबसे बड़े थे। आपके तीन अन्य भाई हैं पृथ्वी नाथ मधुसूदन लाल तथा माखन लाल जिनमें से पंडित माखन लाल शकधर का सन् 2001 में निधन हो गया। पंडित श्याम लाल शकधर की प्रारम्भिक शिक्षा श्रीनगर में ही सम्पन्न हुई। आपने वहां के प्रतिष्ठित श्री प्रताप कालेज से अपनी इन्ट्रेंस की परीक्षा क्रमशः सन् 1934 में तथा एफ0 ए0 की परीक्षा सन् 1936 में उत्तीर्ण की। आपने फिर लाहौर के पंजाब विश्वविद्यालय

से अपनी स्नातक की उपाधि सन् 1938 में प्राप्त की।

पंडित श्याम लाल शकधर बी0 ए0 हो जाने के पश्चात सन् 1939 में एक अच्छी नौकरी पाने की तालाश में कश्मीर घाटी से पलायन करके ब्रिटिश शासन काल में देश की राजधानी दिल्ली आ गये और वहां स्थित विभिन्न सरकारी कार्यालयों के चक्कर लगाने लगे। आप जब अपने भाग्य को परखने के लिये प्रयत्नशील थे तो एकाएक 21 अप्रैल सन् 1939 को एक अन्य कर्मठ कर्मयोगी पंडित महेश्वर नाथ कौल से अकस्मात आपकी भेंट हो गयी जो उस समय सेन्ट्रल एसेम्बली के कार्यकारी सचिव के पद पर कार्यरत थे। इस भेंट ने पंडित श्याम लाल शकधर के भाग्य को एकदम बदल कर रख दिया और फिर उन्हें अपने जीवन में कभी भी पीछे मुड़ कर देखने की आवश्यक्ता नहीं अनुभव हुई और वह निरन्तर प्रगति के पथ पर अग्रसर होते चले गये।

पंडित महेश्वर नाथ कौल तथा पंडित श्याम लाल शकधर के मध्य बहुत शीघ्र एक गुरू और शिष्य का मधुर सम्बन्ध स्थापित हो गया और यह दोंनो कर्मयोगी समय के साथ एक दूसरे के पूरक हो गयें। पंडित महेश्वर नाथ कौल के प्रयास से अग्रेंजों ने पंडित श्याम लाल शकधर को तत्कालीन सेन्ट्रल ऐसेम्बली के सचिवालय में नियुक्त कर दिया जहां आपने भारत सरकार के विभिन्न विभागों में जैसे सूचना तथा प्रसारण विभाग, पुनर्वास विभाग, विधि विभाग तथा वाणिज्य विभाग में ब्रिटिश शासन काल में देश के स्वतंत्र होने तक कार्य किया तथा सरकारी कामकाज में दक्षता प्राप्त की और सरकारी कार्य प्रणाली तथा उसके नियमों को गम्भीरता पूर्वक समझने का प्रयास किया।

भारत के सन् 1947 में एक स्वतंत्र राष्ट्र का रूप लेने के पश्चात ब्रिटिश शासन काल की सेन्ट्रल ऐसेम्बली ने संसद का रूप ले लिया पर उस समय की संसद की गरिमा में और आज की संसद में ज़मीन आसमान का फर्क है। तब संसद के भीतर सांस्कृतिक वातावरण था जो स्वतंत्रता सग्रांम, की अनुप्रेरणा से परिपूर्ण था। इस कारण संसद की गरिमा विलक्षणता लिये हुए थी। जहां सांसद बोलते कम थे उनका

व्यक्तित्व अधिक बोलता था। सांसदों की तेजस्विता को देखते हुए यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि महात्मा गांधी ने न केवल हमको स्वतंत्रता दी , अपितु देश को चलाने के लिये कर्णधार भी दिये। जहां पंडित जवाहर लाल नेहरू, सरदार वल्लभ भाई पटेल, मौलाना अबुल कलाम आज़ाद इत्यादि की श्रेणी के नेता थे। सांसद की गरिमा का दूसरा महत्वपूर्ण पक्ष था **सरल जीवन**। उस समय केवल संसद के परिसर में 5 या 6 मोटरगाड़ियां दिखायी देती थी अधिकांश सांसद पैदल लोक सभा आते थे। कुछ सांसद बग्घी या फिर तांगे में बैठ कर संसद भवन आते थे। सांसद अपने पहनावे में भी सादगी का प्रतीक बने रहना चाहते थे। आजकल की तरह रंग बिरंगी विदेशी कारों तथा देशी–विदेशी बेशकीमती वस्त्रों का प्रयोग नहीं करते थे। अब तो हमारे देश का लोकतंत्र वास्तव में संख्या तंत्र बन कर रह गया है।

संसदीय लोकतंत्र का आधार है मंत्रियों का दायित्व बोध जो अब लगभग समाप्त हो गया है। पंडित जवाहर लाल नेहरू के समय में उनके वित्त मंत्री षडमुखम पर थोड़ी सी आरोप की छाया पड़ी तो उन्होंने तुरन्त अपने पद से त्याग पत्र दे दिया और कहा कि यदि मैं ऐसा नहीं करूंगा तो एक स्वतंत्र देश की स्वस्थ परम्पराओं का निर्माण किस प्रकार सम्भव हो सकेगा। अब हमारे देश में सुखराम जैसे मंत्री हैं जो न्यायालय द्वारा कठोर कारावास की सज़ा सुनाये जाने के बाद भी मुस्कराते हुए फोटो खिंचवाने का साहस रखते हैं जो स्वयं यह दर्शाता है कि हमारे भ्रष्ट मंत्रियों का किस सीमा तक पतन हो चुका है। पंडित नेहरू के समय में इस प्रकार की कल्पना भी कर पाना असम्भव था। वह व्यक्ति की योग्यता की कद्र करना जानते थे और एक पारखी इन्सान थे उनके सम्मुख उस समय देश को प्रगति के पथ पर अग्रसर करने का मूल प्रश्न था। ताकि वह किसी भी क्षेत्र में अन्य विकसित राष्ट्रों की तुलना में कम न हो।

पंडित श्याम लाल शकधर के भाग्य का सितारा तब चमका जब सन् 1949 में पंडित जवाहर लाल नेहरू ने उनको संसदीय मामलों के मंत्रालय का प्रथम सचिव चुना। उस समय पंडित श्याम लाल शकधर लोक सभा

के सचिवालय में कार्यरत थे।

कालान्तर में जब 15 मई सन् 1952 को जी0वी0 मावलंकर लोक सभा के प्रथम अध्यक्ष निर्वाचित हुए तो उन्होंने पंडित श्याम लाल शकधर को उनकी योग्यता तथा कार्यकुशलता से प्रभावित होकर लोक सभा के सचिवालय में उनको उप सचिव के पद पर नियुक्त कर दिया। कुछ वर्ष इस पद पर कार्य करने के पश्चात प्रोन्नति करके पंडित श्याम लाल शकधर को लोक सभा की नव गठित ऐस्टीमेटस कमेटी और पब्लिक एकाउन्टस कमेटी का सचिव बना दिया गया। पंडित श्याम लाल शकधर ने बड़ी ही गम्भीरता पूर्वक पूरी निष्ठा के साथ इस पद पर कार्य किया जिसके परिणाम स्वरूप आपको सन् 1954 में लोक सभा सचिवालय का ज्वाइंट सेक्रेट्री बना दिया गया। आपने लगभग 10 वर्ष इस पद पर कार्य किया।

पंडित श्याम लाल शकधर को सन् 1964 में पदोन्नति करके लोक सभा सचिवालय का सचिव बना दिया गया जिस पद पर आपने लगभग 9 वर्ष सन् 1973 तक कार्य किया। आपको सन् 1973 में लोक सभा का सेक्रेट्री जनरल बना दिया गया। आपने पूरी निष्पक्षतापूर्वक इस पद पर लगभग 4 वर्ष सन् 1977 तक कार्य किया और संसदीय प्रणाली से सम्बन्धित अनेक नियमों और प्राविधानों की व्यापक समीक्षा कर उनको तर्क संगत बनाया तथा उनका क्रियान्वयन सुनिश्चित किया ताकि सम्पूर्ण देश में एक स्वस्थ परम्परा विकसित हो सके जो किसी भी लोक तंत्र व्यवस्था का मूल आधार होती है। इस अन्तराल में आपको लोकसभा के कई दिग्गज अध्यक्षों के साथ कार्य करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ जैसे एम0ए0 अयंगर, सरदार हुकम सिंह, नीलम संजीव रेड्डी, जी0एस0 ढिल्लों तथा बलिराम भगत जिनकी संगत में आपको संसद की कार्यप्रणाली का काफ़ी ज्ञान प्राप्त हुआ और अनुभव भी हुआ।

पंडित श्याम लाल शकधर के कार्यकाल में ऐसे विशिष्ट और गुणी सांसद हुये जो संसदीय वाद विवाद में पटुता, प्रक्रिया सम्बन्धी नियमों पर पूर्ण अधिकार, वाक–कौशल, संसदीय संस्कृति और परम्पराओं के प्रति

निष्ठा तथा व्यक्तिगत शालीनता के लिये जाने जाते थे। पंडित नेहरू सदैव संसदीय गरिमा को स्थापित करने में अग्रणी रहे। जब सदन में डॉ0 लोहिया, आचार्य कृपलानी, कामथ, मधु लिमये के बोलने की चर्चा फैलती तो दर्शक दीर्घायें खचाखच भर जाती थीं। पंडित हृदय नाथ कुंजरू तथा पटनायक जिस विषय पर बोलते उसमें वह पारन्गत माने जाते थे। गोविन्द वल्लभ पंत की अपनी अलग शैली थी। पर यदि हम अयोग्य और अपराधिक छवि वाले व्यक्तियों को चुन कर संसद में भेजेंगे जैसे फूलन देवी तो वह किस प्रकार कार्य करेगी इसकी कल्पना कर पाना बहुत कठिन कार्य नहीं है।

पंडित श्याम लाल शकधर को सन् 1977 में टी0 स्वामीनाथन के स्थान पर भारत का मुख्य चुनाव आयुक्त नियुक्त किया गया यह आपके लिये एक नया अनुभव था क्योंकि आप तब तक संसदीय कार्य प्रणाली के हर मामले में पारन्गत हो चुके थे और इस क्षेत्र में राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति अर्जित कर चुके थे।

पंडित श्याम लाल शकधर कदाचित देश के प्रथम मुख्य चुनाव आयुक्त थे जिसने इस गरिमामय पद को सेवा निवृत्ति के पश्चात का उपहार नहीं समझा और इस पद पर उसी तत्परता से कार्य किया जैसा एक सेवारत अधिकारी को करना चाहिए। आपने देश में निष्पक्ष चुनाव कराने के लिये कुछ ठोस तथा क्रान्तिकारी निर्णय लिये ताकि देश की चुनाव प्रकृिया में कुछ अमूलचूक परिवर्तन किये जा सकें जिससे चुनाव को पारदर्शी और अधिक तर्कसंगत बनाया जा सके आपने देश में चुनावों में सुधार लाने के महत्व पर बल दिया और उस दिशा में समुचित कार्यवाही की ताकि देश में स्वतंत्र और निष्पक्ष रूप से चुनाव सम्भव हो सके। और उनमें किसी भी स्तर पर किसी भी प्रकार का सरकारी हस्तक्षेप बिल्कुल न हो। आपने इसी उद्देश्य को प्राप्त करने के लिये एक आदर्श चुनाव संहिता की रूपरेखा तैयार की। जिसका अनुपालन हर पार्टी के उम्मीदवार के लिये सुनिश्चित कराया। आपके कार्यकाल में प्रथम बार आपके आदेश से किसी लोकसभा की सीट का चुनाव निरस्त किया गया। क्योकि आप

वहां की चुनाव प्रक्रिया से सन्तुष्ट नहीं थे और आपको उसमें गड़बड़ी की आशंका प्रतीत हो रहीं थी। आपने प्रथम बार इलेक्ट्रानिक मशीन द्वारा चुनाव कराने का सुझाव दिया ताकि फर्जी वोट डालने के प्रक्रिया पर प्रभावशाली रूप से अंकुश लगाया जा सके। आपने विभिन्न राजनीतिक पार्टियों से प्रथम बार आचार संहिता का पालन कराया। आपका स्पष्ट मत था कि एक चुनाव अधिकारी को स्वतंत्र रूप से निष्पक्ष होकर चुनाव कराना चाहिए न कि कार्यपालिका के दबाव में आकर तभी देशवासियों की लोकतंत्र में आस्था कायम रह पायेगी अन्यथा यह पूरी प्रक्रिया ही एक बहुत बड़ा मजाक बन कर रह जायेगी जहां जिसकी लाठी उसकी भैंस वाली कहावत चिरतार्थ होकर रह जायेगी और बाहुबली चुनाव पर हावी हो जायेंगे और जिसको चाहेंगे उसको चुनाव में विजयी घोषित करा देंगे।

पंडित श्याम लाल शकधर को उनकी योग्यता तथा उनकी संसदीय मामलों में दक्षता के आधार पर सन् 1973 में विश्व के संसदीय राष्ट्रों के सेक्रेट्री–जनरलों के संगठन का निर्विरोध अध्यक्ष चुना गया जो वास्तव में उनके लिये बहुत ही गौरव की बात थी। आपने इण्डियन पार्लियामेन्ट यूनियन के सेक्रेट्री–जनरल के पद पर भी कार्य किया।

पंडित श्याम लाल शकधर एक सर्वगुण सम्पन्न तथा बहुमुखी प्रतिभा के धनी व्यक्ति थे। आप विशेषकर संसदीय प्रणाली के विशेषज्ञ माने जाते थे। आपने अपने कार्यकाल में विश्व के अनेक देशों का व्यापक भ्रमण किया तथा भारत के सांसदीय प्रणाली से सम्बंधित अनेक प्रतिनिधिमण्डलों का राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर नेतृत्व किया। आप एक विचारक तथा कुशल लेखक भी थें। आपने भारतीय संसदीय प्रंणाली पर शोध परक पुस्तकें लिखी हैं जो उनकी लोकतंत्र से सम्बंधित महत्वपूर्ण कृतियां है जिनको प्रत्येक शोधार्थी अपने शोध ग्रन्थों में उद्घृत करते हैं। आपके द्वारा लिखी हुई कुछ प्रमुख पुस्तकें है। "Practice and Procedure of Parliament", "Constitution and Parliament in India", "The Commonwealth Parliaments", "Glimpses of Parliament at Work", "Inter Parliamentany Relations", "Administrative Accountability to Parliament". इत्यादि। आपकी पुस्तक "Practice and Procedure of

Parliament". विश्व के समस्त लोक तांत्रिक राष्ट्रों में व्यापक रूप से उद्‌घृत की जाती है। जो स्वयं उनकी संसदीय प्रणाली में विद्वता का एक प्रमाण है।

पंडित श्याम लाल शकधर एक सुसंस्कृत संस्कारों वाले व्यक्ति थे जिनकी धर्म में अटूट आस्था थीं। आप अनेक धार्मिक कार्यों तथा अनुषठानों के लिये खुल कर दान देते थे। आप एक सच्चे योगी तथा साधक थे जिनका मानवता के प्रति असीम लगाव था आपने अपनी माता पिता की पुण्य स्मृति में सफ़दरजंग एनक्लेव में एक शिव मन्दिर का निर्माण कराया आपने पम्पोश एनक्लेव में स्थित शिव मन्दिर के मुख्य हाल का निर्माण कराया। आपने मयूर विहार में स्थित अय्यपा मन्दिर के प्रांगण में एक सामुदायिक केन्द्र का निर्माण कराया। तथा जम्मू में स्वामी स्वंयमानन्द के उमा मन्दिर का निर्माण कराया। आप अनेक कल्याणकारी संस्थाओं जैसे राम कृष्ण मिशन को नियमित रूप से अनुदान देते थे। जो मानव कल्याण के कार्यक्रमों को संचालित करना अपना प्रमुख धर्म समझती हैं।

पंडित श्याम लाल शकधर ने समाज सेवा के क्षेत्र में भी अनेक महत्वपूर्ण कार्य किये। आपने दिल्ली में कश्मीर भवन के निर्माण के लिये लाजपत नगर में भूमि उपलब्ध करायी और भ़वन निर्माण के लिये 27,000/– रूपयों का बिरादरी के सदस्यों से अनुदान लेकर प्रबन्ध किया। आपने अनेक बिरादरी के नवयुवकों का मार्ग दर्शन कर उनकों विभिन्न पदों पर नियुक्त कराने में भरपूर सहायता की। आपके पास बिरादरी के अनेक योग्य और शिक्षित नवयुवक मार्गदर्शन के लिये आते थे और आपने कभी उनको हतोत्साहित नहीं किया और सदैव जीवन में कुछ कर दिखाने की प्रेरणा दी। आप दिल्ली की कश्मीरी समिति के सन् 1955 से सन् 1962 तक अध्यक्ष रहे। आप अखिल भारतीय कश्मीरी समाज के नव गठित ट्रस्ट के प्रथम अध्यक्ष रहे। और अखिल भारतीय कश्मीरी समाज के मार्गदर्शकमण्डल के एक सम्मानित सदस्य रहे।

पंडित श्याम लाल शकधर भारतीय विद्या भवन के दिल्ली केन्द्र के

अध्यक्ष रहे। आपने दिल्ली में संसदीय प्रणाली पर शोध संस्थान की स्थापना में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। आपने अन्य प्रतिष्ठित संस्थानों के कार्यकलापों में भी सक्रिय रूप से भाग लिया और उनको अपने कुशल नेतृत्व में एक नयी दिशा दी।

पंडित श्याम लाल शकधर का विवाह श्रीनगर कश्मीर में सन् 1934 के आसपास सुश्री सरगा देवी के साथ सम्पन्न हुआ था आपकी पत्नी श्रीमती सरंगा देवी शकधर की नयी दिल्ली में सन् 1988 में मृत्यु हो गयी। लगभग एक वर्ष पश्चात आपके पुत्र विजय शकधर की सन् 1989 में मुत्यु हो गयी जिससे आपको गहरा आघात लगा और आपका मन आध्यात्म की ओर आकर्षित हुआ ताकि आप अपनी आन्तरिक पीड़ा को सहन करने की शक्ति प्राप्त कर सकें। आपने अपने जीवन को फिर एक योगी के समान व्यतीत करने का निश्चय किया क्योंकि आपका अन्तरमन एक प्रकार से सांसारिक माया मोह से विरक्त हो चुका था। इस निष्ठावान कर्मयोगी का 18 मई सन् 2002 को नई दिल्ली में स्थित अपने आवास में निधन हो गया। आजकल आपकी पुत्रवधु श्रीमती चित्रा (रैना) शकधर 23, पालम मार्ग, वसंत विहार, नई दिल्ली–110057 में निवास कर रही हैं।

पंडित श्याम लाल शकधर एक सौम्य प्रकृति वाले व्यक्ति थे जिनके चेहरे पर सदा मुस्कान बनी रहती थी। आपने एक भरा पूरा जीवन व्यतीत किया और हर व्यक्ति का सुख दुःख में साथ देने की चेष्टा की। आपने सदैव अपने जीवन में कुछ निर्धारित नियमों का पूरी निष्ठा के साथ पालन किया और अपने कार्यो में मानवीय मूल्यों को सदैव प्राथमिकता दी। आपका स्पष्ट मत था कि हमारे देश में संसद का स्तर गिरने का मूल कारण यह है कि अब योग्य व्यक्ति सांसद नहीं बन पा रहें है क्योंकि वह इस वातावरण में चुनाव लड़ने से हिचकिचाते हैं।

यहां पर यह कहना तर्कसंगत होगा कि सन् 1992 में तत्कालीन भारत सरकार के गृह सचिव एन0 एस0 वोहरा की अध्यक्षता में एक ''वोहरा कमेटी'' का गठन हुआ था। यह कमेटी सरकार के खुफिया विभाग के दस्तावेजों को अध्ययन करने के पश्चात इस निषकर्ष पर पहुंची

थी कि देश में एक तो कानूनी सरकार चल रहीं हैं जब की इसके समानान्तर एक सरकार देश के अपराधी और माफिया चला रहें है। जो कानून की सरकार की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली और सुसंगठित हैं। यह किस बात को इंगित करता है। क्या श्याम लाल शकधर ऐसे गुणी व्यक्तियों ने कभी स्वप्न में भी इस बात की कल्पना की होगी कि जो नियमों और प्रविधानों का निर्माण वह देश में एक स्वस्थ परम्परा को जन्म देने के लिये कर रहें हैं उनकी भविष्य में ऐसी तैसी कर दी जायेगी और उसी का स्वर गूंजेगा जिसके पास सामर्थ और धन की थौलियां होंगी। यही आज का कटु सत्य है जिस पर गम्भीर चिंतन करने की आवश्यक्ता है कि किस प्रकार हम इस विराट मकड़जाल से देश को मुक्त करा सकें। वही हमारे और देश के हित में होगा। इसी व्यवस्था पर सटीक व्यंग्य करते हुए हिन्दी के एक प्रमुख कवि धर्मेन्द **'गुमनाम'** ने कुछ यों कहा है।

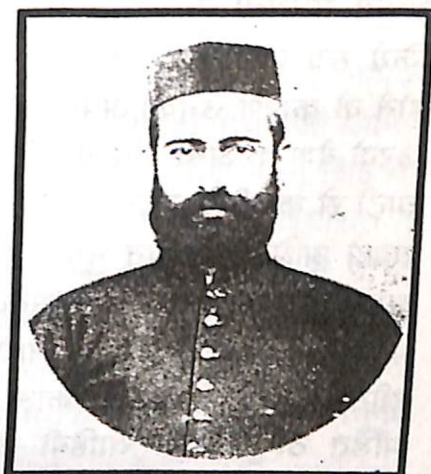
"ढूंढ़तें हो क्या अभी वातास में
दूर तक कोहरा है बस आकाश में
न्याय की कुर्सी पड़ी है सामने
फिर भी शोशित लुट रहा इजलास में"



एक उर्दू के बेहतरीन पुश्तैनी शायर

पंडित इक़बाल कृष्ण साहिबी

"सहर"



कश्मीर घाटी में सुल्तान ज़ैनुलआबिदीन (1420–1470) ने सर्वप्रथम वहां की राजभाषा संस्कृत के स्थान पर फ़ारसी को राजभाषा बनाने का आदेश निर्गत किया पर कुछ समय पश्चात उसको अपना शासन सुचारू रूप से चलाने में कठिनाई अनुभव होने लगी क्योंकि उसके मुस्लिम अधिकारियों को संस्कृत भाषा का समुचित ज्ञान नहीं था और राज्य के सारे अभिलेख व दस्तावेज़ संस्कृत भाषा में लिखे हुए थे जिसके कारण जनता से उपयुक्त राजस्व वसूलनें में अधिकारी अपने को सक्षम नहीं पा रहे थे। अतः विवश होकर सुल्तान ज़ैनुलआबिदीन को पुनः घाटी में उन सक्षम कश्मीरी पंडितों को आमंत्रित करना पड़ा जो संस्कृत भाषा में पारन्गत थे तथा इस कार्य में दक्ष थे और सुल्तान सिकन्दर **'बुतशिकन'** (1389–1413) के शासन काल में उसकी बर्बरता से व्यथित होकर कश्मीर से अन्य सुरक्षित स्थानों को पलायन कर गये थे ताकि उनकी सहायता से शासन के कार्य को सुव्यवस्थित रूप से चलाया जा सके। ज़ैनुलआबिदीन ने इन कश्मीरी पंडितों को न केवल मान सम्मान देकर शासन के विभिन्न पदों पर आसीन किया अपितु उनको जागीरें भी प्रदान की। जिसके कारण घाटी में प्रथम बार कश्मीरी पंडित समाज में वर्ग भेद उत्पन्न हुआ। जो कश्मीरी पंडित

घाटी में रह रहे थे उन्होंने अपने को मलमासी तथा जो कश्मीरी पंडित सुल्तान ज़ैनुलआबिदीन के निमंत्रण पर पुनः आकर घाटी में बसे थे उन्होंने अपने को भानमासी कहना प्रारम्भ किया।

कश्मीर घाटी में राज भाषा संस्कृत के स्थान पर फारसी घोषित हो जाने के पश्चात कश्मीरी पंडित फ़ारसी भाषा के पठन–पाठन को वरियता देने लगे ताकि उन्हे दरबार में अच्छें पद प्राप्त हो सकें। वह बहुत शीघ्र अपनी विलक्षण बुद्धि के कारण फ़ारसी भाषा में पारन्गत हो गये और अपनी योग्यता के आधार पर शासन के अच्छे पदों पर वह नियुक्त भी किये गये पर समय समय पर घाटी में प्रतिकूल परिस्थितियों के उत्पन्न होने के कारण उनको अपने धर्म की रक्षा के लिये कश्मीर से पुनः पलायन करके देश के अन्य अंचलों में शरण लेने के लिए बाध्य होना पड़ा। कश्मीर घाटी से कश्मीरी पंडितों का सुलतान सिकन्दर के शासन काल के पश्चात सबसे अधिक पलायन मुग़ल सम्राट औरंगज़ेब (1658–1707) के शासन काल में हुआ जब उसके सूबेदार इफ़्तिख़ार ख़ां ने कश्मीर में कश्मीरी पंडितो को अमानवीय यातनायें देनी प्रारम्भ की और बर्बरता की सारी सीमाऐं तोड़ दीं। उसके काल में पंडित इक्बाल कृष्ण साहिबी के पूर्वज पंडित ठाकुर दास साहिबी कश्मीर घाटी से पलायन कर रावलपिंड़ी, लाहौर इत्यादि स्थानों पर ठहरते हुयें शाही राजधानी दिल्ली आ गये।

पंडित ठाकुर दास साहिबी दिल्ली आने के पश्चात वहां बाज़ार सीता राम में अपने परिवार के साथ रहने लगे जो उस समय कश्मीरी पंडितो की सामूहिक शक्ति का एक प्रतीक हुआ करता था। कुछ समय पश्चात आप अपने प्रयासो से दिल्ली के शास्त्री कालेज मे अध्यापक हो गये और वहां छात्रों को फारसी भाषा पढ़ाने लगे। चूंकि उस समय दिल्ली में शेर–शायरी का वातावरण था और मुहल्ले के अधिकांश कश्मीरी पंडित शायर थे तो आप भी उनकी संगत में शायर हो गये और शेर कलमबन्द करने लगे। सायंकाल शेर शायरी की महफ़िलें जमने लगीं और विभिन्न विषयों पर वार्तालाप के साथ साथ उर्दू शायरी की बारीकियों पर भी चर्चा होने लगी कि किस प्रकार अपनी शायरी को और अधिक तर्कसंगत,

भावनापूर्ण तथा अलंकृत किया जाये। कुछ वर्ष इस विषय पर रियाज़ के बाद आपको वज़नदार शेर कहने में महारात हासिल हो गयी और आप उर्दू के बेहतरीन शेर कमलबन्द करने लगे।

पंडित ठाकुर दास साहिबी के पुत्र का नाम कन्हैया लाल था। पंडित कन्हैया लाल साहिबी का जन्म दिल्ली की बाज़ार सीताराम मुहल्ले में स्थित अपनी पैतृक हवेली में हुआ था। आपकी उर्दू तथा फ़ारसी भाषा की शिक्षा आपके पिता के मकतब में घर पर ही सम्पन्न हुई। आप अपनी देहली कालेज से शिक्षा समाप्त करने के पश्चात ईस्ट इण्डिया कम्पनी में एक अधिकारी नियुक्त हो गये थे। आप अपने कार्य के सिलसिले में दिल्ली के बाहर अन्य नगरों में भी जाया करते थे। एक बार आपका साक्षात्कार अमेठी रियासत के राजा माधो सिंह से हो गया जो आपके व्यक्तित्व और योग्यता से बहुत अधिक प्रभावित हुए। राजा माधो सिंह को एक कुशल तथा अनुभवी प्रशासक की तलाश थी जो उनकी रियासत के काम काज को उचित प्रकार से चला सके। राजा माधो सिंह ने पंडित कन्हैया लाल साहिबी को अमेठी आने का निमंत्रण दिया जिसे उन्होंने सहर्ष स्वीकार कर लिया और वह दिल्ली से अपने परिवार सहित अमेठी आ गये और राजा माधो सिंह द्वारा दरबार में किसी अच्छे पद पर नियुक्त कर दिये गये।

पंडित कन्हैया लाल साहिबी उर्दू तथा फ़ारसी भाषा के विद्वान होने के साथ साथ उर्दू के एक प्रतिष्ठित शायर भी थे। आप "आशिक़" तख़ल्लुस से अपने शेर कलमबन्द करते थे। चूंकि आपको उर्दू तथा फ़ारसी भाषा का समुचित ज्ञान था अतः आप बहुत ही साहित्यिक तथा उच्च श्रेणी के शेर कलमबन्द करते थे जिनमें भाषा की पाकीज़िगी पर पूरा ध्यान दिया जाता था। उदाहरण के लिये उनकी एक बन्दिश प्रस्तुत है।

सुभ जिस गुल को बरंगेरुख़े ख़िनदान देखा
शाम को ज़ुल्फ़े नामत उसको परेशां देखा
कौन कहता है कि है जान का देना मुश्किल
इश्क़ में हमने तो मुश्किल को भी आसां देखा

पंडित कन्हैया लाल साहिबी **''आशिक़''** ने कई पुस्तकें लिखी हैं उनमें से प्रमुख हैं **''दीवान–ए–आशिक़''**, **''बाग़–ए–आशिक़''** मसनवी **''गुल का सनोहर''** इत्यादि। आपने उर्दू में सैर–ए–कश्मीर नाम से एक फ़साना भी लिखा है।

पंडित कन्हैया लाल साहिबी **''आशिक़''** के पुत्र पंडित अमर नाथ साहिबी **''शैदा''** थे जिनको उर्दू की शायरी एक प्रकार से विरासत के रूप में अपने पूर्वजों से प्राप्त हुई थी। आप भी उर्दू तथा फ़ारसी भाषा के एक प्रख्यात विद्वान थे। आप अमेठी रियासत के दरबार में नियुक्त हो गये थे। आपकी अधिकतर रचनायें और कृतियां फ़ारसी भाषा में हैं। आपके कुछ **''तारीखे वफ़ात''** उर्दू में अवश्य लिखी हैं कश्मीरी मोहल्ले के पंडित शिव नारायण ''बहार'' की आकस्मिक मृत्यु पर आपने कुछ इस प्रकार फ़रमाया।

था वह कालेज का डिप्टी इन्सपेक्टर
अफ़सार–ए–नेक सीरत व ख़सलत
फ़िक्र तारीख़ की जो शैदा ने
बन गया रंजोओ आलम की वह सूरत

पंडित अमर नाथ साहिबी ''शैदा'' के दो पुत्र थे पंडित इक्बाल कृष्ण साहिबी ''सहर'' और पंडित माहराज कृष्ण साहिबी ''नदीम'' पंडित इक्बाल कृष्ण साहिबी ''सहर'' का जन्म 21 अगस्त सन् 1863 को अमेठीगढ़ में स्थित उनके पैतृक आवास में हुआ था जो जनपद सुलतानपुर के कार्य क्षेत्र में आता है। आपकी उर्दू तथा फ़ारसी भाषा की शिक्षा अपने घर के मकतब में हुयी। आप जब लगभग 19 वर्ष की आयु के थे तो आप सन् 1882 में अंग्रेज़ी भाषा की शिक्षा ग्रहण करने के उद्देश्य से अमेठी रियासत से लखनऊ आ गये और आपने कैनिंग कालेज में प्रवेश ले लिया। आपने लगभग 6 माह कैनिंग कालेज में अंग्रेज़ प्रोफ़ेसरों से अंग्रेज़ी भाषा की शिक्षा ग्रहण की और गर्मियों की छुट्टियों में कालेज में अवकाश हो जाने के कारण आप पुनः अमेठी वापस चले गये। आपने फिर सुलतानपुर के जिला हाई स्कूल में प्रवेश लिया जहां से आपने अपनी

इन्ट्रेन्स की परीक्षा उत्तीर्ण की। आप अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात ब्रिटिश शासनकाल में नहर विभाग में नियुक्त हो गये थे। आप अपने सेवाकाल में अवध के विभिन्न जनपदों में नियुक्त रहे। आप सेवा निवृत्त हो जाने के पश्चात लखनऊ चले आये और आपने परिवार सहित कश्मीरी मुहल्ले में रहने लगे।

पंडित इक्बाल कृष्ण साहिबी **"सहर"** को उर्दू की शेर–शायरी एक प्रकार से अपने पूर्वजों से विरासत के रूप में प्राप्त हुई क्योंकि आपके परिवार में तीन पीढ़ियों से उर्दू की शायरी करने का वातावरण था। अतः आप भी काफ़ी अल्प आयु से उर्दू में शेर कलमबन्द करने लगे।

आप "सहर" तख़ल्लुस से उर्दू की शायरी करते थे। पारिवारिक वातावरण और अंग्रेज़ी भाषा की शिक्षा के कारण आपकी शायरी का शिल्प अपने पूर्वजों से भिन्न था। मौलाना **"सैफ़ी"** लखनवी आपके उस्ताद थे जिनसे आप इस्लाह लिया करते थे। आपकी शेर–शायरी का अन्दाज़ उनकी निम्नलिखित बन्दिश से भलि भांति लगाया जा सकता है जिसके कुछ शेर उदाहरण के लिये प्रस्तुत हैं।

एक शोबए कुदरत है कौन व मकां किसका
हैं और नहीं भी है नाम व निशां जिसका
दीवाना है एक आलम जिसके रूख़े रौशन पर
नौरंगी कुदरत में जलवा है अयां जिसका
बुलबुल के तरानों में और आतशगुल में भी
सौदा है अयां जिसका है सोज़ न हो जिसका
हां मन्ज़रे कुदरत है यह पैकरे इन्सानी
पीराए सनत में सानेआ है यहां जिसका
हस्ती व अदम सब कुछ "सहर" उसी का है
है फ़स्ले बहार उसकी है दौरे खिज़ां जिसका

आपकी उर्दू भाषा पर पकड़ शब्दों का उचित प्रयोग अपनी बात को कहने का एक अलग अन्दाज़ तथा भाषा की व्याकरण का ज्ञान आपके द्वारा रचित निम्नलिखित "क़ते" से लगाया जा सकता है जिसमें उन्होंने

गर,

अपनी बात को कहने के लिये बड़ी ही अलंकृत तथा परिमार्जित भाषा का प्रयोग किया है। आप कुछ इस प्रकार फ़रमाते हैं।

"सर व पर क़मरी है गुल पर बुलबुलें शैदा फ़िदा
दिल हसीनों पर हुआ काएल तो उसकी क्या ख़ता
क्या हुआ उनको यों क्यों बेताब हैं क्या राज़ है
आंख खुलने का तरीक़ा है यही आयी सदा"

आपके द्वारा रचित एक और "क़ता" प्रस्तुत है –

एक मुददत से ये हसरते दिले नाशाद है
ख़ानए हस्ती है दुनिया या अदम आबाद है
सो गये तो मर गये जागे तो ज़िन्दा हो गये
रोज़ मरते हैं रोज़ जीते हैं यह क्या उफ़ताद है
"सहर" अब यह कशमकश है कुछ दिनों की और बस
आ रही है कान में सूते दरां बांगे जरस
जा मिलोगे काफ़िलेवालों से तुम भी एक दिन
खिर्द अब इसका रहे अल्लाह बस बाक़ी होश

आपके पाकीज़ा कलाम ने अपने समय में काफ़ी लोकप्रियता पायी और आप उर्दू के एक विद्वान शायर के रूप में प्रतिष्ठित हुए। आपके अनेक शेर और रचनाऐं विभिन्न उर्दू अदब की पत्रिकाओं में प्रकाशित भी हुई। आपका कुछ कलाम बहारे गुलशने कश्मीर में भी प्रकाशित हुआ है जिसको उर्दू प्रेमियों द्वारा काफ़ी सराहा गया। आपके द्वारा रचित एक ग़ज़ल की कुछ पंक्तियां उदाहरण के लिये प्रस्तुत हैं :–

महसूस कर रहा हूं जिनों के असर को मैं
बहला रहा हूं आज दिले बेख़बर को मैं
दिल को चुरा के ख़ाक में मुझको मिला दिया
मिल जाये तो चुराऊँ किसकी नज़र को मैं
रहमत से ना उम्मीद नहीं गर चे रन्द हूं
कर लूंगा सरो इश्क से नारे नफ़र को मैं
उरियां हों आज मिस्ल दरख़्ते ख़िज़ां नसीब

ऐ बख़्ते सब्ज़ तेरे भी देखूं असर को मैं
जलता हूं और सोज़ है यह मेरा दायिमी
ऐ सहर यह दिखाऊँगा शमऐ सहर को मैं

आपकी लखनऊ के कश्मीरी मुहल्ले में लगभग 60 वर्ष की आयु में सन् 1903 के आस पास मृत्यु हो गयी। आपके पुत्र पंडित जीवन लाल साहिबी भी उर्दू के एक प्रसिद्ध शायर थें आपका विवाह कच्चे पुल की सुश्री भवन राज़दान के साथ सम्पन्न हुआ था। आपने अंग्रेज़ी भाषा के प्रसिद्ध उपन्यासकार रेलाल्ड के प्रसिद्ध उपन्यास "Laila the star of Mangralia" का बहुत ही बेहतरीन उर्दू की शेर शायरी में अनुवाद किया था पर वह किन्हीं कारणों से अब तक प्रकाशित नहीं हो सका है। आपके दो पुत्र ओंकार नाथ और कुन्दन लाल थे। आपके वंशज अब भी कश्मीरी मुहल्ले में निवास कर रहे हैं पर अब वह अपना कुलनाम राज़दान लिखने लगे हैं। इस सम्बन्ध में हिन्दी के कवि तारादत्त ने बड़ी ही सटीक पंक्तियां रची हैं –

पक्षी पांखों को भूल जाते हैं
पत्ते शाखों को भूल जाते हैं
यह तो सपनों की ख़ास आदत है
अपनी आंखों को भूल जाते हैं



कश्मीरी पंडित और सामाजिक परिवर्तन

भारतवर्ष की सभ्यता और संस्कृति सम्पूर्ण विश्व की प्राचीनतम सभ्यताओं मे से एक है जहां लगभग 3050 वर्ष ईसा से पूर्व वेदों की रचना की गयी जिनको समस्त ज्ञान का मूल श्रोत माना जाता है और जिनको मुख्य आधार मान कर अनेक पाश्चात्य देशों के विद्वानों ने अनवेशण कर विज्ञान और साहित्य के क्षेत्र में नये–नये कीर्तिमान स्थापित किये और इस मायावी संसार को प्रगति के पथ पर अग्रसर किया पर किन्हीं कारणों से हम स्वयं उस अमूल्य ज्ञान के भण्डार का लाभ लेने से वंचित रह गये और विदेशी आक्रान्ताओं के एक लम्बे समय तक शोषण और तिरस्कार का शिकार बने रहे क्योंकि कदाचित हमारी प्रायः मृत आत्मा न तो कभी इन मानसिक वेदनाओं के विरूद्ध जागृत हुई और न ही शारीरिक यातनाओं के विरूद्ध लड़ने की क्षमता की शक्ति का कभी हमारे शरीर में संचार हुआ। हमने सदा इस प्रकार के संकट की घड़ी को प्रभु की इच्छा माना और उसका प्रतिकार करने के स्थान पर उसका अपना शीषनवा कर सत्कार किया यह हमारे इतिहास की सबसे बड़ी विडम्बना रही जिसके कारण हम वह आजतक न बन सके जो वास्तव में हमसे हमारे समाज को अपेक्षा थी और हमें होना चाहिये था। इस उदासीनता का एक दुखद परिणाम यह हुआ कि हम आज भी दिशा विहीन होकर इधर–उधर

भटकने को लाचार हैं और इस दुर्दशा से निकलने का मार्ग ढूंढ पाने में अपने को असमर्थ पा रहे हैं।

कश्मीर में इतिहास लेखन की परम्परा बहुत पुरानी रही है जिसका शुभारम्भ कल्हण पंडित ने किया जिन्होंने छठी और सातवीं शताब्दी के मध्य के संस्कृत ग्रन्थ नीलमत पुराण को आधार बना कर अपनी राजतंरगिणीं की रचना की जिसे संस्कृत बाड़्मय की मुकुटमणि माना जाता है। इसमें तिथि क्रम से कश्मीर के शासकों का प्रमाणिक इतिहास है। आठ तरंगों में विभक्त यह महान ग्रंन्थ 7826 पद्यों में रचा गया है। जिसमें अनेक घटनाओं का एक सशक्त लेखनी द्वारा बहुत ही मार्मिक एवं हृदयस्पर्षी चित्रण किया गया है। कल्हण पंडित की अवधारणा सदैव यह रही कि इतिहासकारों को राग द्वेष से सर्वथा मुक्त रह कर रचना करनी चाहिये जो उनकी निम्नलिखित पंक्तियों से स्वयं प्रकट होता है।

श्लाध्यः स एवं गुणवान राग–द्वेष बहिष्कृत।
भूतार्थकथने यस्य स्थेयस्येव सरस्वती।।

(1.7)

इसी क्रम में जोनराज ने द्वितीय राजतंरगिणी की रचना की जो सुलतान ज़ैनुलआबिदीन (1420–1470) के समकालीन कवि थे। इसमें कुल 23 कश्मीर के शासकों का विस्तार से वर्णन है। जिनमें 13 हिन्दू 1 भौट्ट तथा 9 मुस्लिम सुलतान हैं। उनके पश्चात श्रीवर और शुक ने क्रमशः तीसरी और चौथी राजंरगिणियों की रचना की पर किन्हीं कारणों से इस परम्परा को बनाये रखना बाद के इतिहासकारों ने उचित नहीं समझा।

आज हमें इस बात पर आत्ममंथन करना होगा कि जिस कश्मीर के इतिहास की रचना स्वयं एक कश्मीरी पंडित ने प्रारम्भ की हो उसके प्रति हम अब कितने सजग हैं और अपनी इस मूल्यवान धरोहर के संरक्षण के प्रति हम कितने निष्ठावान हैं। समाज के अन्य वर्ग इतिहास के पृष्ठों में से अपने महापुरूषों को निकाल कर उनको महिमामण्डित करने में संलग्न है वहीं कश्मीरी पंडित समाज इसके बिलकुल विपरीत अपने महापुरूषों को

एकदम भुला बैठा है और अब उचित नेतृत्व के अभाव में आपस में ही तलवार भांजने को कुछ अधिक महत्व दे रहा है।

हम अपनी सदियों पुरानी संस्कृति, इतिहास, परम्पराओं, मान्यताओं तथा आस्थाओं को तिलांजलि दे कर पाश्चात्य सभ्यता और आडम्बरों को धारण कर अपने को अधिक गौरवान्वित अनुभव कर रहे हैं और इस विकृत मानसिक़ता के दूरगामी परिणामों से एकदम अनभिज्ञ हैं। जिसके कारण कश्मीरी पंडित समाज तीव्र गति के साथ विघटित हो रहा है और हमारे समाज में अन्तर्जातीय विवाहों की संख्या में दिन ब दिन बढ़ोत्तरी होती जा रही है। कुछ व्यक्ति इसे प्रगति का सूचक मान रहे हैं पर ऐसी प्रगति की क्या उपयोगिता जिससे आपका मूल स्वरूप ही एक दम नष्ट हो जाये और आप व्यापक समाज में अपनी विशिष्ट पहचान स्वयं खो दें। समय रहते इस विकराल समस्या पर गम्भीर चितन की आवश्यकता है वरन् कश्मीरी पंडित समाज को लुप्त होने में कुछ अधिक समय नहीं लगेगा।

इतिहास इस बात का साक्षी है कि समाज में वही वर्ग अपना वर्चस्व बनाने में सफ़ल हो पाता है जिसका कोई अपना आदर्श और सिद्धांत हो। बिना किसी ठोस आधार के आजतक कोई समाज पनप नही सका कश्मीरी पंडितों की वर्तमान दशा का एक मुख्य कारण उनका आधार विहीन होना है। जिसके लिये कुछ सीमा तक वह स्वयं जिम्मेदार है कि वह अपने संस्कारों तथा विशेष गुणों को संजो के नहीं रख सके जिनके लिये वह कभी प्रसिद्ध थे और समाज में आदर और सम्मान पाते थे।

किसी भी समाज को प्रदूषित कर उसे बिलकुल नष्ट करने में बहुत अधिक समय नहीं लगता पर इसके विपरीत उसको उच्चतम शिखर की ओर ले जाने में बहुत अधिक परिश्रम करना पड़ता है और कठिनाई उठानी पड़ती है क्योंकि उस प्रक्रिया में संयम, आत्मबल और दृढ इच्छा शक्ति की आवश्यकता होती है। इन गुणों के अभाव में व्यक्ति एक बिना पेंदी के लोटे की भांति इधर उधर लुढ़कता रहता है। उसका न तो कोई अपना अस्तित्व होता है और न वह खुद समाज को कुछ दे सकने की स्थति में होता है। उसके जीवन का न तो कोई ध्येय होता है और न ही कोई आदर्श। वह

केवल दूसरे की दया पर निर्भर रहता है और पृथ्वी के लिये भार बन जाता है। इस अवस्था को निशा गोयल ने अपने भावों में कुछ इस प्रकार प्रकट किया है –

फूल की लाश धूल होती है।
प्रेम भंवरे की भूल होती है।।
धूल की गोद में सोने के लिये।
हर कली रोज़ फूल होती है।।



कश्मीरी पंडित और अपसंस्कृति

भूमंडलीकरण के इस आधुनिक युग में पश्चिमी अपसंस्कृति के हमारे राष्ट्रीय जीवन पर पड़ रहे दूषित प्रभाव के परिणामों पर हर समझदार व्यक्ति के लिये चिन्ता करना स्वाभाविक है। पर अभी किन्ही कारणों से इस अपसंस्कृति के प्रदूषण के विरूद्ध कोई शक्तिशाली स्वर प्रस्फुटित नहीं हो पा रहा हैं। अब समय आ गया है जब हम अपने जीवन में तीव्र गति से आ रहे इन गुणात्मक परिवर्तनों की व्यापक समीक्षा करें कि क्या नये मूल्य और मापदण्ड वास्तव में हमें एक सही दिशा की ओर ले जा रहें है या फिर हमारी सदियों पुरानी सभ्यता और संस्कृति को समूल नष्ट कर हमें एक ऐसे स्थान पर लाकर पटकेंगें जहां से फिर उबर पाना हमारे लिये असम्भव हो जायेगा।

यहां पर यह कहना तर्कसंगत होगा कि इस भूमंडलीकरण द्वारा बहुत ही सुनियोजित तरीके से हमारे समाज के नवयुवकों और नवयुवतियों को निर्द्वन्द्व व्यक्तिवादी–भोगवादी तथा शोरवादी संस्कृति परोसी जा रही है। जो देखने में बहुत आकर्षक अवश्य हैं पर उसके दूरगामी परिणाम वास्तव में हमारे छोटे से समाज की ऐसी तैसी कर के उसको सम्पूर्ण रूप से मटियामेट करने वाले हैं। इसके विरूद्ध हमें एक नये जीवन संगीत को जन्म देना होगा जो सामूहिक तथा पारस्परिकता पर आधारित हो ताकि हम केवल पाश्चात्य उपभोगतावादी संस्कृति का कचरा मैदान न बन कर रह जायें परन्तु साथ ही साथ हमारे स्वयं के भी कुछ मूल्य और आदर्श विकसित हों जिन पर हम गर्व कर सकें। यदि हमें सचमुच अपनी संस्कृति, अपनी परम्पराओं तथा अपनी मान्यताओं को जीवित रखना है तो हमें उस के लिये हर स्तर पर सक्रिय कार्य करना होगा अन्यथा हमारी चिंता केवल एक बौद्धिक अय्याशी बन कर रह जायेगी और कुछ नहीं।

आज के समाज का नव धनाढ्य वर्ग जिसके पास असीमित धन है एक बिल्कुल नयी पांच सितारा संस्कृति को अपने जीवन का मूल मंत्र मान रहा है। इस संस्कृति को दिन की रोशनी से घृणा है और रात के अंधेरे से बेइंतहा प्यार। इस वर्ग का आर्दश अमरीका है। कमाओं ऐश करो–मारो या फिर मर जाओं यही इनके जीवन का मुख्य आदर्श है जो अनेक प्रकार के कुकर्मों तथा अपराधों को जन्म दे रहा है और जिसका व्यापक समाज पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ रहा है पर फिर भी हमारी युवा पीढ़ी इस कामुक संस्कृति का भरपूर आनन्द लेने के लिये बेचैन और बेताब हैं जिसके दुःखद परिणाम हमकों बाद में समाचार पत्रों में पढ़ने को मिलते हैं कि मानसिक तनाव से ग्रस्त होकर अमुक व्यक्ति

ने आत्म हत्या कर लीं या फिर किसी कुंवारी कन्या ने गर्भ ठहर जाने के कारण अपनी जान दे दी। हमारी युवा पीढ़ी भी इसी समाज का एक अंग है अतः उस पर इसका प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है।

हमारे देश में उदारीकरण और स्त्री मुक्ति के दौर ने जहां एक ओर महिलाओं के लिये कई बन्द दरवाजें खोल दिये हैं और उनको हर क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा करने का अवसर प्रदान किया है। वहीं दूसरी ओर उन्हें उपयोग करने वाली एक वस्तु भी बना दिया है। जिसके कारण उनके मन में एक यह धारणा भी बन गयी है कि उन्हें धन के साथ साथ अपने को सुन्दर तथा आकर्षक भी बनाये रखना है ताकि वह सदा कामुक, आमंत्रक, तथा लुभावनी लगती रहें और अपने कार्य करने के स्थान पर पुरूष वर्ग पर अपने इन्हीं कुछ गुणों के कारण वर्चस्व बनायें रहें। इस चूहा दौड़ में हमारे देश में न जाने कितनी महिलायें प्रतिदिन यौन शोषण का शिकार हो रहीं हैं और विवाहेत्तर सम्बन्धों के कारण न जाने कितने घर बरबाद हो रहें है।

यह भी एक अजीब विडम्बना है कि यद्यपि उच्च वर्ग की महिलाओं के शिक्षा स्तर में पिछले कुछ वर्षों में काफी सुधार हुआ है। पर उनकी यह उच्च शिक्षा उनको कलात्मक या सृजनात्मक दिशा में ले जाने के स्थान पर उनको कुछ उच्छृंखलता की ओर अधिक प्रेरित कर रही हैं जहां अर्द्ध नग्नता, मदिरा पान व पब संस्कृति को ही नारी के संबलीकरण का मापदण्ड माना जा रहा है। अब जो स्त्री ज़रा सा भी अवसर पाकर निवस्त्र होने को तत्पर रहती है उसको प्रगति का सूचक माना जाता है। और यही एक मुख्य कारण है कि अब हिन्दी फिल्मों में एक नायिका वह सब करने को तैयार रहती है जो कभी कैबरे डान्सर किया करती थीं क्योंकि उसको सदा यह भय बना रहता है कि कहीं देह प्रदर्शन में वह कैबरे डान्सर से मात न खा जाये। मीडिया और विज्ञापनों ने भी महिलाओं को यह सब करने के लिये खूब प्रेरित किया है। जिनमें अधिकतर स्त्रियों को अर्द्धनग्न अवस्था में बड़ी कामुकता के साथ अपने शरीर की गोलाईयों को थिरकाते हुए प्रदर्शित किया जाता है।

यहां सबसे बड़ी विसंगति यह है कि जब किसी स्त्री के पास ज्ञान की कमी होती है तो वह यह सब सुख सुविधा के साधन जुटाने के लिये अपनी आकर्षक देह का प्रयोग करने लगती हैं जो समाज में फिर व्याभिचार को जन्म देता है जिसका वास्तविक कारण यह तीव्रगति के साथ फैल रही अपसंस्कृति है जो अनेक युवाओं और युवतियों को अपने मोह में फांस कर उनके जीवन को नरक बना रही है। अब समाज में सत्ता, धन और उन्मुक्त आनन्द का एक त्रिकोण बन गया है जिसका स्त्री एक केन्द्र बिन्दु है। जो अब एक उपभोग की वस्तु बन चुकी है। महानगरों में स्थित कई फार्म हाउस इस नयी संस्कृति

के अड्डे बन चुके हैं जहां नित्य पार्टियां, रेन डान्स, फैशन शो इत्यादि आयोजित किये जाते हैं जिनमें नवयुवक और नवयुवतियां मदमस्त होकर अपने यौवन का भरपूर आनन्द लेते हैं और अपनी कामग्नी को शान्त करते हैं। तथा फिर एक चुसे हुए आम की भांति ढीले पड़ जाने के पश्चात अपने घर की सुध लेते है।

इस अपसंस्कृति का बहुत बुरा प्रभाव अब युवाओं की सोंच पर पड़ रहा है। जिसके कारण उनमें अब हिंसा और अवज्ञा की प्रवृत्ति तीव्र गति से बढ़ रही है। अब वह जीवन की हर उपलब्धि को तुरन्त हासिल करना चाहते हैं क्योंकि संघर्ष करके वह उसको पाने की न तो क्षमता रखते हैं और न हीं वह अब कठोर परिश्रम करने में विश्वास रखते हैं। यह भी एक बहुत ही खतरनाक मनोदशा है। क्योंकि ऐसी मनोस्थिति में कोई भी समाज न तो उन्नति कर सकता है और न प्रगति। इसी कारण समाज में एक अंधी होड़ मची हुई है और हर व्यक्ति साम, दाम, दंड, भेद अर्थात किसी भी मूल्य पर सब कुछ बिना कोई परिश्रम किये हुये पा लेना चाहता है जिसको किसी भी प्रकार से उचित नहीं ठहराया जा सकता।

इसके साथ साथ तमाम अन्य एहसास क्षणभंगुर होते जा रहें हैं। हर चीज़ रातों रात बासी हो जाती है। हर सुख दिनोंदिन कम महसूस होता जा रहा है। इसलिये हर रोज़ एक नया एहसास, नयी मौज और नयी मस्ती की चाहत बढ़ रही है। जिसके कारण सामाजिक सन्तुलन डगमगा रहा है। समाज में स्थिरता घट रही है। और अस्थिरता बढ़ रही है जिससे मनुष्य में तीन घातक प्रवृत्तियां उत्पन्न हो रहीं हैं प्रथम आत्मविश्वास में कमी दूसरी अपने प्रति हिंसा और तीसरी दूसरों के प्रति हिंसा। यह निश्चित रूप से एक स्वस्थ एंव पारंपरिक समाज के निमार्ण में बाधक हैं। अतः हमें ऐसी परस्थिति में एक मध्यमवर्गीय मार्ग को अपनाना होगा जो हमारे युवा वर्ग को उचित दिशा निर्देश देने की क्षमता रखता हो और हमारी संस्कृति और सभ्यता के अनुकूल हों जो हमारी परम्पराओं और मान्यताओं का आदर करते हुए हमें प्रगति के पथ पर अग्रसर कर सके ताकि हम अपनी विशिष्ट पहचान को संरक्षित रखते हुए समाज के हर क्षेत्र में नये कीर्तिमान स्थापित कर सकें न कि अपनी विशेष पहचान को समूल नष्ट करके। हिन्दी के कवि निरंकार देव के शब्दों में।

द्वार की ओट से चितवन को बहुत देखा है
मैंने रस–राग भरे मन को बहुत देखा है।
तुम दिखाने को मुझे यह क्या छटा लाई हो,
मैंने इस प्यार के दपर्ण को बहुत देखा है।



गर,


Acc No 2309
Price Rs. 150/-
Jammu

आवरण पृष्ठ : चश्मेशाही, श्रीनगर, कश्मीर
छाया चित्र : रतन शरगा

कश्मीरी पण्डितों की आस्था का केन्द्र



खटखटे बाबा का समाधि-स्थल
यमुना तरहटी, जनपद इटावा
उत्तर प्रदेश